श्री धर्मचक्राय नमः

पुष्प नं. 17

श्री धर्मचक्र विधान

-रचयित्री-

परम विदुषी पू. आर्यिकारत्न

105 श्री अभयमती माताजी

गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी के आर्यिका दीक्षा स्वर्ण जयंती वर्ष (अप्रैल 2006-अप्रैल 2007) के अन्तर्गत प्रकाशित

-प्रकाशक-

आर्यिका अभयमती ग्रंथमाला

जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर (मेरठ) उ.प्र.

फोन नं.- (01233) 280184, 280236

तृतीय संस्करण	माघ कृ. 14, वीर नि. सं. 2533	मूल्य
1100 प्रतियाँ	18 जनवरी 2007	60/-

भगवान ऋषभदेव मोक्षकल्याणक दिवस

विषय सूची

विषय	पूजा नं०	पृष्ठ नं०
१. मंगलपीठिका, मंगल गीत, मंगलाचरण, श्री धर्मचक्र वंदना		१-१०
पूजा प्रारम्भ		
२. धर्मचक्र पूजा	१	११
३. समोशरण पूजा	२	१६
४. रत्नत्रय पूजा	३	२४
५. चैतन्य षट गुण पूजा	४	३१
६. दशलक्षण धर्म पूजा	५	३६
७. सिद्ध पूजा	६	४२
८. श्री पंचपरमेष्ठी समुच्चय पूजा	७	४७
९. अर्हत जिन पूजा	८	७३
१०. श्री आदिनाथ जिन पूजा	९	९२
११. श्री अजितनाथ पूजन	१०	९७
१२. श्री संभवनाथ पूजा	११	१०२
१३. श्री अभिनंदननाथ पूजा	१२	१०६
१४. श्री सुमतिनाथ पूजन	१३	१११
१५. श्री पद्मप्रभु जिन पूजा	१४	११५
१६. श्री सुपार्श्व जिन पूजा	१५	११९
१७. श्री चन्द्रप्रभु जिन पूजा	१६	१२४
१८. श्री पुष्पदंत जिन पूजा	१७	१२८
१९. श्री शीतलनाथ जिन पूजा	१८	१३२
२०. श्री श्रेयांस जिन पूजा	१९	१३६
२१. श्री वासुपूज्य जिन पूजा	२०	१४०
२२. श्री विमलनाथ जिन पूजा	२१	१४४
२३. श्री अनंतनाथ जिन पूजा	२२	१४९
२४. श्री धर्मनाथ जिन पूजा	२३	१५३
२५. श्री शांतिनाथ जिन पूजा	२४	१५७
२६. श्री कुंथुनाथ जिन पूजा	२५	१६१
२७. श्री अरहनाथ जिन पूजा	२६	१६६
२८. श्री मल्लिनाथ जिन पूजा	२७	१७०
२९. श्री मुनिसुव्रत जिन पूजा	२८	१७५
३०. श्री नमिनाथ जिन पूजा	२९	१८०
३१. श्री नेमिनाथ जिन पूजा	३०	१८४
३२. श्री पार्श्वनाथ जिन पूजा	३१	१८९
३३. श्री महावीर स्वामी पूजन	३२	१९४
३४. बड़ी जयमाला		१९८
३५. श्री धर्मचक्र विधान प्रशस्ति		२०२
३६. श्री धर्मचक्र विधान आरती		२०८

प्रस्तावना

देव दर्शन विधि

१—मंदिर में प्रवेश करते ही ॐ जय ! जय ! जय !, निःसही ! निःसही ! निःसही, नमोस्तु, नमोस्तु, नमोस्तु" कहकर भगवान के सामने हाथ जोड़कर णमोकार मंत्र (नमस्कार मंत्र) पढ़कर दर्शन पाठ पढ़ना चाहिए। फिर चावल, बादाम आदिक चढ़ाकर दर्शन करना चाहिए खाली हाथ नमस्कार नहीं करना चाहिए। राजा, गुरु, देव इन्हें खाली हाथ नमस्कार करने का विधान नहीं है। कहा है—"फलं फलमादिशेत्" अर्थात् फल की प्राप्ति फल के द्वारा ही होती है। भगवान के गुणों का चिंतवन करते हुए अपनी आत्मा में रमें अतः बिना भगवान के दर्शन किए भोजन नहीं करना चाहिए। सर्वप्रथम देवदर्शन करके भोजन करें।

२—देवदर्शन क्यों करना चाहिए? क्योंकि प्रथम रूप में हमारे लिए देवदर्शन ही मंगलस्वरूप है। वह आत्मा को पवित्र करने वाला, स्वर्गादिक विभूति को देने वाला एवं परम्परा से मुक्ति प्रदान करने वाला है इसलिए हमें देवदर्शन अवश्य करना चाहिए। सच्चे देव वीतरागी जिन भगवान ही होते हैं अन्य नहीं। इन्हें साष्टांग या पंचांग नमस्कार करना चाहिए।

३—हम देवदर्शन क्यों करते हैं? क्योंकि भगवान मोक्षमार्ग के नेता हैं, कर्म रूपी पर्वत को भेदन करने वाले हैं, विश्व के समस्त तत्त्वों को जानने वाले हैं अतः हम उनके गुणों की प्राप्ति हेतु उन्हें नमस्कार करते हैं। सम्यग्दृष्टि जीव ऐसा चिंतवन करता है कि हे भगवान! मैं आपके समान कब बनूं। वह मात्र आत्मसिद्धि के लिए देवदर्शन करता है। जबकि मिथ्यात्त्व ग्रसित अज्ञानी जीव अपनी इच्छाओं की पूर्ति के लिए मात्र भगवान के दर्शन करने आते हैं।

४—यदि कोई कहे इस पत्थर की मूर्ति के दर्शन करने से हमें क्या लाभ मिलता है तो इसका उत्तर यही है कि संसारी आत्मा कर्मों से लिप्त है अतः इस समय आत्मदर्शन होना दुर्लभ है। पत्थर की मूर्ति को भी जब हम यंत्र-मंत्रादिक के द्वारा उनके गुणों की तदाकार रूप में स्थापना करते हैं तब वह पत्थर की मूर्ति भी हमारे लिए पूज्य बन जाती है। अतः प्रथम रूप में भगवान तो हमारे लिए शरणभूत हैं उनके आधार रूप जिनप्रतिमाओं के दर्शन हमारे लिए परम आवश्यक और मंगलकारी हैं।

५—यदि कोई पूछे कि देवदर्शन का माहात्म्य एवं फल क्या है? तो घर में मन निरंतर कलुषित रहता है। भगवान का इतना चमत्कार है कि उनके दर्शन मात्र से ही हमें सम्यग्दर्शन की प्राप्ति हो जाती है एवं आत्मा के अन्दर अपूर्व शांति छा जाती है। जिनके दर्शन से भेद-विज्ञान प्रकट होता है, भेद-विज्ञान से तत्त्व ज्ञान होता है, तत्त्व ज्ञान से आत्मलाभ मिलता है एवं लौकिक तथा पारलौकिक सुख की प्राप्ति होती है अधिक क्या कहें—देवदर्शन से हम भव समुद्र से शीघ्र ही पार हो जाते हैं।

जिन मंदिर में दर्शन पूजा अभिषेक संबंधी नियम—

१—शुद्ध जल से स्नान कर शुद्ध सादा वस्त्र पहनकर एवं हाथ पैर धोकर जिनमंदिर में प्रवेश करें।

२—नशे की हालत में तथा झूठा मुख, बीड़ी-सिगरेट, पान, तम्बाकू का प्रयोग कर बिना मुंह साफ किये कोई भी मन्दिर नहीं जावे।

३—चमड़े से बनी वस्तुयें, पर्स, चमड़े का पट्टा तथा जूते, मोजे, लकड़ी एवं कोई अशुद्ध वस्तु मन्दिर में नहीं ले जावें।

४—मन्दिर में सच्चे देव शास्त्र गुरू को छोड़कर और किसी की वन्दना नहीं करे। सांसारिक चर्चायें हास्य, मस्करी, लड़ाई-झगड़ा की वार्ता नहीं करें।

५—मन्दिर में किसी प्रकार की गन्दगी न करें, शास्त्रों को विनयपूर्वक यथास्थान रखें, ८४ आसादन दोष न लगावें।

६—पूजन करते समय मुंह नाक कान का मैल नहीं निकालें। उचित द्रव्य, चावल, बादाम गिरी, लौंग आदि वस्तुओं को शोधकर प्रासुक जल से धोकर प्रयोग करें। अभिषेक के बाद ही पूजन करें।

७—प्रतिदिन देव पूजन स्वाध्याय सामायिक आत्म-चिन्तन करते हुये चतुर्प्रकार दान करें।

८—रात्रि भोजन का त्याग करके पानी छानकर प्रयोग करें।

९—दूसरों की निन्दा अपनी प्रशंसा न करें, हित-मित-प्रिय वचन बोलें एवं प्राणी मात्र के साथ शुद्ध भावना रखें।

१०—सबके प्रति अच्छा व्यवहार रखते हुए अपने कर्तव्य का पालन करें।

११—पूजन-शुद्ध प्रासुक जल से सामग्री धोकर जनेऊ व तिलक लगाकर करें। आगम में पूजन के ५ भेद बताये हैं। नित्यमह, अष्टान्हिक, इंद्रध्वज, महामह, कल्पद्रुम। प्रतिदिन हम मंदिर में जाकर पूजन करते हैं वह नित्यमह पूजन है। इसी तरह महामुनि एवं जिनवाणी की हम पूजन करते हैं उसे भी नित्यमह पूजन कहते हैं और जो अठाई में हम सभी पूजन करते हैं और इंद्र नंदीश्वर द्वीप में जाकर सपरिवार पूजन करते हैं। उसे अष्टान्हिक पूजन कहते हैं जो विश्व में प्रसिद्ध है और जहां पर इंद्र की मुख्यता को लेकर पाठ महायज्ञ होता है वह इंद्रध्वज है।

महामुकुटबद्ध राजाओं के द्वारा जो महायज्ञ होता है उसे महामह पूजन कहते हैं तथा जो चक्रवर्तियों के द्वारा किमिच्छक दान देकर महायज्ञ किया जाता है उसे कल्पद्रुम यज्ञ कहते हैं। प्रस्तुत धर्मचक्र विधान की रचना मैंने बड़े-बड़े विद्वानों की प्रेरणा से की है।

धर्मचक्र विधान का वर्णन—यह धर्मचक्र समोशरण के चारों तरफ "सर्वाण्ह यक्ष" के शिर पर सुशोभित रहता है। यह धर्मचक्र तीर्थंकर के विहार के समय आगे-आगे रहता है।

धर्मचक्र विधान में पूजा आदि का वर्णन—

पूजायें	अर्घ	पूर्णार्घ्य	जयमाला
१—धर्मचक्र पूजा में	४	१	१
२— समोशरण पूजा में	८	१	१
३—रत्नत्रय पूजा में	२९	३	१
४—चैतन्यगुण पूजा में	६	१	१
९—चौबीस तीर्थंकर	१२०		१
५—दशलक्षण पूजा में	१०	१	१
६—सिद्ध पूजा में	१०	१	१
७—पंचपरमेष्ठी पूजा	१४३	५	१
८—अरिहंत पूजा में	१०८	१	१

इस प्रकार इस विधान में सब मिलाकर ३२ पूजा ४३८ अर्घ १४ पूर्णार्घ्य और ३२ जयमालायें हैं।

छंद के नाम—इस विधान में ७४ प्रकार के छंदों का प्रयोग किया है। अतः धर्मप्रेमी बंधुओं को इसे संगीत वाद्य के साथ बड़े ठाठ बाट के साथ करना चाहिये। छंदों के नाम क्रमशः निम्न प्रकार हैं।

क्रम संख्या	छंद का नाम	क्रम संख्या	छंद का नाम
१ —	मुक्तक छंद	२ —	दोहा
३ —	वीर	४ —	अष्टपदी
५ —	हरिगीतिका	६ —	स्त्रग्विणी
७ —	कुसुमलता	८ —	शंभु
९ —	घत्ता	१०—	सोरठा
११—	बेशरी	१२—	शेर
१३—	नरेंद्र	१४—	चौबोल छंद
१५—	गीता	१६—	चौबोला

१७—दौड़ १८— आर्या
१९—अडिल्ल २०— सखी
२१—पद्धरि २२— कवित्त
२३—चौपाई आँवली बद्ध २४— चौपाई
२५—कुंडलिया २६— त्रिभंगी
२७—सुगीतिका २८— बसंततिलका
२९—मद अवलिप्तकपोल ३०— नाराच
३१—मत्तगयंद ३२— रोला
३३—अनुष्टुप ३४— चामर
३५—मरहटी ३६— मोतीदाम
३७—रूपक सवैया ३८— उपगीत
३९—लावनी ४०— घत्तानंद
४१—चाल–चंदना पुकारे तेरे द्वारेपे ४२— चाल–चंदन सा वदन०
४३—चाल–मेरा नम्र प्रणाम है, ४४— चाल–बहारो फूल वर्षाओ
४५—चाल–कोई तन दुखी कोई मन० ४६— चाल–आई शुभ की घड़ी०
४७—चाल–कितना बदल गया इंसान ४८—चाल–आये महावीर भगवान
४९—चाल–श्री सिद्धचक्र का पाठ ५०—चाल–दयालु प्रभु से हम
५१—चाल–ओ दुपट्टा मेरा ५२—चाल–ऐ मेरे वतन के लोगो
५३—चाल–जहां डाल-२ पर ५४—चाल–भव सागर अपार है
५५—चाल–ऐ मां तेरी सूरत से अलग ५६—चाल–जब तेरा डोली
५७—चाल–मेरे मन मंदिर में आन ५८—चाल–श्याम तेरी बंशी
५९—चाल–दीनानाथ पुकार ६०—चाल–वंदो दिगंबर गुरू
६१—चाल–वंदे जिनवरं ६२—चाल–पूजों पूजों श्री
६३—चाल–तुमसे लागी लगन ६४—चाल–यशोमती मैया,
६५—चाल—धन्य धन्य आज घड़ी ६६—चाल–दिन रात मेरे स्वामी
६७—चाल–प्रेम की गंगा बहाते चलो ६८—चाल–तेरी प्यारी प्यारी मूरत
६९—चाल–क्यों ना ध्यान लगावें ७०—चाल–मैं तो आरती उतारूं रे
७१—चाल–छोड़ बाबुल का घर ७२—चाल–करती हूं तुम्हारा वंदन
७३—चाल–तुमको लाखों प्रणाम ७४—चाल-(भरतरी)-ते गुरू मेरे उर बसो

विधान रचनाकाल–सावन वदि एकम वीर शासन के दिन यह "धर्मचक्र" विधान की रचना जम्बूद्वीप में प्रारंभ की थी। और "अगहन सुदी सप्तमी" मेरे

५१ वें जन्म दिवस पर श्री जिनेंद्रदेव के माहात्म्य से मैंने यह विधान पूर्ण किया। इस प्रकार इस विधान की पूर्ति में मंगल महोत्सव मनाया गया।

धर्मचक्र विधान विधि—इस विधान के शुरू में ही मंगल पीठिका के अन्तर्गत पूज्य, पूजक, विधानाचार्य-विधानकर्ता, इंद्रों की वेशभूषा, पूजा की विधि सामग्री, शोभा-यात्रा का फल आदि पद्य में मैंने बता दिया है उसे शुरू से अवश्य पढ़कर समझ लेवें।

मंडल रचना—यदि हाल या विधान मंडप विशल्ल है तो १६ × १६ फुट का मंडल बनाना चाहिये। और यदि जगह छोटी हो तो यथायोग्य मण्डल बनाना चाहिये। उस पर कपड़ा बिछाकर रांगोली से या रंगे हुए च. .लों से मंडल बनाना चाहिये। सर्वप्रथम मण्डल पर चारों दिशा में धर्मचक्र खड़े करने चाहिये। ये सर्वाण्ह यक्ष के मस्तक पर होना चाहिये। यदि नहीं हो सके तो धातु आदि के चार धर्मचक्र बनवाकर रख लेना चाहिये। बीचोंबीच में गंधकुटी रखनी चाहिये। यह गंधकुटी मंदिर में चांदी या लकड़ी की बनी हुई रहती है। इस गंधकुटी में प्रतिमा विराजमान करना चाहिए। इस गंधकुटी में छत्र चमर भामंडल आदि ८ प्रतिहार्य एवं ८ मंगल द्रव्य होने चाहिये। पुनः धर्मचक्र का मंडल बनाना चाहिये। इस मंडल को चारों तरफ से बंदनवार, तोरण, ध्वजा घंटा, छोटी-छोटी घंटियों, फानूस बेल एंव केले के पत्तों आदि से सजाना चाहिए। इस प्रकार धर्मचक्र मंडल का नक्शा इसंमें दिया हुआ है, देखकर ठीक से बना लेना चाहिये।

इसमें इंद्र इंद्राणी अच्छी केशरिया धोती, दुपट्टे, मुकुट, हार, कंकण आदि एक सदृश वेशभूषा धारण कियें हों। इस विधान में ३२ इंद्र इंद्राणी हों, यदि इतने न हों सकें तो १२ हों या फिर जितने हो सकें उतने होवें।

८ दिन में विधान की योजना बनानी चाहिये। सर्वप्रथम झंडारोहण करके अंकुरारोपण करना चाहिये। इसके बाद घटयात्रा करके वेदी शुद्धि करके मडप में श्री .जी की प्रतिमा को विराजमान करना चाहिये।

अंत में विशेष रूप से रथयात्रा महोत्सव करके श्री जी का १०८ कलशों से अभिषेक करना चाहिये।

विधान में सामग्री—इस विधान में ३२ पूजन ४३८ अर्घ १४ पूर्णार्घ एव ३२ जयमालायें हैं। अतःमंडल पर श्री फल चढ़ाना चाहिये। अतः लगभग ५०० श्रीफल मंडल पर ही पूजन में चढ़ेंगे।

अखंड दीप व मंगल कलश—विधान के प्रारंभ में मंडल के चारों ओर चार कलश और एंक मंगल कलश (मध्य में) रखना चाहिये। और अखंड दीपक जलाना चाहिये। दीपक ऐसा हो जिस पर जाली (ढकी हो) ताकि उस पर मच्छर आदि नहीं पड़ें ये सभी कार्य विवेकपूर्वक करें ताकि हिंसा से बच सकें। शुद्ध

दशांग धूप शुद्ध तुरंत की तैयार की हुई होना चाहिये। शुद्ध प्रासुक जल से सामग्री धोना चाहिये।

अनुष्ठान का जाप्य मंत्र—ॐ ह्रीं श्री धर्मचक्राय नमः।

इस मंत्र का सवालाख जप या अपनी सुविधानुसार अधिक या कम जाप्य करना चाहिये। मंत्र का उच्चारण शुद्ध होना चाहिये। जभी विशेष फल मिलेगा।

पूजा का फल—यह धर्मचक्र विधान मनोवांछित फल को प्रदान करने वाला है। ये धर्मचक्र के प्रवर्तक ऐसे तीर्थंकर भगवान के आगे-आगे चलता है। इसके आश्रय से ही मुक्ति मिलती है। यह विधान सर्व सुखों को प्रदान करने वाला है इस प्रकार यह विधान विश्व में सभी के लिये कल्याणकारी मंगलदायक सुखकारक होवे, यही मेरी शुभ कामना है।

इस विधान की रचना मैंने बड़े-बड़े विद्वानों की प्रेरणा से एवं उनके सुझाव के अनुसार ही बनायी है।

मुझे आशा है कि इस विधान का सदुपयोग सभी जन अवश्य करके पाप का क्षय एवं पुण्य का बंध करेंगे एवं अपनी आत्मा को पवित्र बनायेंगे।

मंत्र करने योग्य व्यक्ति एवं स्थान—मंत्र करने योग्य व्यक्ति देव शास्त्र गुरु का परमभक्त दुर्व्यसन आदि दुराचार से रहित आगम के अनुकूल सदाचार आदि विशेष गुणों से सहित हो एवं शुद्ध भावना के साथ एकाग्रचित्त होकर डाभ के आसन पर पूर्व या उत्तर दिशा की ओर मुख करके शुद्ध वस्त्र पहनकर मंत्र जपे। खंडित मलिन फटे हुये वस्त्र से जप हवन आदि कभी नहीं करे। ऐसा शास्त्रोक्त नियम है।

जाप्य विधि— मोक्ष हेतु अंगूठे के साथ तर्जनी अंगुली से माला फेरे। धन सुख के लिये मध्यमा अंगुली, सिद्धि हेतु अनामिका एवं सर्व सिद्धि हेतु कनिष्ठा अंगुली, और शत्रु को भगाने के लिये तर्जनी अंगुली श्रेष्ठ है।

नवग्रह आदि शांति हेतु सफेद माला से, विजय हेतु श्याम रंग, कल्याण हेतु लाल रंग की माला से, भयनिवारण हेतु हरे रंग एवं धनादिक प्राप्ति हेतु पीले रंग की माला से जप करे।

वस्त्र आसन भी उसी रंग के होवें, यदि माला के बदले उसी रंग के पुष्पों से जप करे तो अति श्रेष्ठ है।

आर्यिका अभयमती

धर्म चक्र

मंडल विधान

ॐ

श्री धर्मचक्र विधान

मंगल पीठिका

दोहा छंद

चौबीसों जिनदेव को, नमन करूँ शतबार।
वीतरागता प्रगट हो, अरु हो आत्म सुधार॥ १॥
जिनवर की वाणी अमल सरस्वती श्रुत खानि।
हे अम्बे! वंदन करूं, करो कर्म की हानि॥ २॥
निरांरभ आशा रहित, ज्ञान ध्यान् तप लीन।
ऐसे गुरुवर को नमूं, हो संसार विलीन॥ ३॥
रचना हो निर्विघ्न अरु नास्तिकता परिहार।
शिष्टाचार के हेतु नित, करूं मंगलाचार॥ ४॥
श्री धर्मचक्र विधान को, नमन करूं शतबार।
आत्म विशुद्धी के लिये, रचूं काव्य पद सार॥ ५॥
लेखक कवि मैं हूं नहीं, और न हूँ विद्वान।
प्रभु जी के परसाद से, रचना करूं महान॥ ६॥
इसमें प्रथम हि पूज्य अरु, पूजक कहें महान।
पूजा विधि कहं पूर्ण अरु, पूजा फल भी जान॥ ७॥
पुण्य क्रिया पूजा कहें, पूजाफल लहं स्वर्ग।
देवशास्त्र गुरु पूज्य कहं, पूजक कहं जिनभक्त॥ ८॥

जिन मंदिर निर्माण

जिन मन्दिर निर्माण हो, आगम के अनुकूल।
देश धर्म निज आत्म की उन्नति हो भरपूर॥ १॥

पूरब उत्तर में सदा, जिनमन्दिर का द्वार।
शांति प्रदायक हो सदा, जिससे हो उद्धार॥ २॥
एक तीन या पाँच हो, वेदी उत्तम जान।
एक मूल नायक सदा, प्रतिमा उच्च बखान॥ ३॥
समवशरण रचना महा, मानस्तम्भ महान।
मान गलित हो देखकर, जिससे हो कल्याण॥ ४॥
नंदीश्वर रचना कही, द्वीप आठवां भ्रात।
बावन चैत्यालय बने, इन्द्र करें नित ठाठ॥ ५॥
उच्च शिखर ऊँची ध्वजा, करे विश्व की शांति।
ज्यों नर शिर ऊँचा रहे मुकुट लगें बहु भाँति॥ ६॥
सरसों भर प्रतिमा अगर, चैत्यालय पधराय।
वह भवि निश्चित ही जभी, मोक्षपुरी को जाय॥ ७॥
फिर मन्दिर निर्माण जो, करें हर्ष के साथ।
क्यों न लहे वह शिवपुरी, जिसमें निज का ठाठ॥ ८॥
जिन मन्दिर निर्माण का, करता उच्च महान।
खान-पान में शुद्ध हो, सदाचार बुधमान॥ ९॥
द्रव्य क्षेत्र भी शुद्ध हो, काल भाव भी शुद्ध।
तो वह निश्चित जात हैं, मोक्षपुरी को बुद्ध॥ १०॥

देव दर्शन माहात्म्य

जिन प्रतिमा के दर्श से, बँधता पुण्य महान।
नमन करो नव देवता, जिससे हो कल्याण॥ १॥
प्रभु के दर्शन के लिये, जो विचार कर मात्र।
फल हो इक उपवास का, शुद्ध हुआ निज गात्र॥ २॥
मन्दिर जाने के लिये, जो उद्यम कर सन्त।
फल हो दो उपवास का, सुख पावे बुधवन्त॥ ३॥
अरु आरम्भ करे जभी, जिन मन्दिर को भव्य।
सदा तीन उपवास का, फल मिलता है सद्य॥ ४॥
अरु जिन मन्दिर गमन में, हो भवि हर्ष विभोर।
फले चार उपवास जब पुण्य कर्म हो जोर॥ ५॥

कुछ आगे को गमन कर , मन्दिर को नर-नार।
सदा पाँच उपवास का , फल मिलता तत्काल॥ ६ ॥
मध्य बीच पहुंचे भविक , जिन मन्दिर के काज।
जब पन्द्रह उपवास का , फल मिलता है खास॥ ७ ॥
चैत्यालय दर्शन किये , जो भवि मोद प्रमोद।
एक मास उपवास का, फल मिलता है रोज॥ ८ ॥
मन्दिर में पहुंचे जभी , श्रावक भक्त विभोर।
छहों मास उपवास का , फल मिलता है जोर॥ ९ ॥
जिन मन्दिर के द्वार में, कर प्रवेश जब भव्य।
एक वर्ष उपवास का , फल मिलता हैं सद्य॥ १० ॥
अरु प्रदिक्षिणा दे जभी, जिन मन्दिर में आन।
शतक वर्ष उपवास का, फल मिलता नित जान॥ ११ ॥
अरु प्रभु के दर्शन किये , जगे सभी नर-नार।
सहस वर्ष उपवास का, फल मिलता तत्काल॥ १२ ॥
अरु जिनेन्द्र स्तुति किये, फल अनन्त उपवास।
दृढ़ प्रतिज्ञ जो भक्त नित, प्रभु दर्शन कर खास॥ १३ ॥
प्रभु के जो दर्शन करे , हो भवि दधि से पार।
फिर जिनवर श्रद्धा धरे, क्यों न तिरे नर-नार॥ १४ ॥
उससे भी अति निर्जरा, जो कर प्रभु गुण-गान।
पुण्य कर्म बंधता जभी , पाप कर्म की हान॥ १५ ॥
उससे भी अति निर्जरा, जो कर प्रभु की जाप।
क्रम-क्रम से शिवसुख लहें , मिटे सर्व संताप॥ १६ ॥
उससे भी अति निर्जरा, जो कर प्रभु का ध्यान।
स्वानुभूति अन्तर जगे , जिससे हो कल्याण॥ १७ ॥
उससे भी अति निर्जरा, जो कर आतम ध्यान।
जब अन्तर में प्रगट हो , वीतराग विज्ञान॥ १८ ॥

विधान रचना का उद्देश्य

धर्मचक्र विधान की रचना मैंने कीन।
मात्र प्रभू की भक्ति वश साहस कर निज लीन॥ १ ॥

बड़े, बड़े विद्वान भी, कियो है खूब पसंद।
जनजनमनहर स्वपर सिद्धि, हेतु कियो पद रंग॥ २ ॥
हस्तलिखित संस्कृत कृति, का लेकर आधार।
रचो काव्य बहु छंद में, सब ग्रंथों का सार॥ ३ ॥

विधान का माहात्म्य

अनुपम कहें विधान यह, धर्मचक्र शुभ नाम।
मनोकामना पूर्णकर, महिमा बड़ी महान॥ १ ॥
शुद्ध विधी से जो करें, धर्मचक्र का पाठ।
भूतपिशाचादिक सभी, टलें उपद्रव साथ॥ २ ॥
इक से इक बढ़कर कहें, पूजन इसमें सार।
सुंदर सुंदर राग अरु, सरस पद्य निर्धार॥ ३ ॥

पूज्य का लक्षण

ज्ञान दर्श सुख वीर्य जिन, अंतर लक्ष्मी जान।
समोशरण अतिशय विभव, लक्ष्मी बाह्य बखान॥ १ ॥
इनसे युत चौबीस जिन, पूज्य कहें भगवान्।
पंच परमेष्ठी पूज्य कहं, गाऊं कीर्ति महान॥ २ ॥
धर्मचक्र भी है सदा, पूज्य चतुर्विध संघ।
जो इन सबको पूजते, नशे कर्म का जंग॥ ३ ॥

विधानाचार्य

और विधानाचार्य भी, शिष्टाचार प्रवीण।
आगम के अनुकूल हो, धर्म कार्य में लीन॥ १ ॥
रखे दृष्टि निःस्वार्थ जो, करे धार्मिक कार्य।
यत्नाचार विनीत युत, होय सफल सब कार्य॥ २ ॥
देव शास्त्र गुरु भक्ति से, करे सदा शुभ कार्य।
शीघ्र तिरे भव सिन्धु से, वही विधानाचार्य॥ ३ ॥

जैसी हो शुभ भावना, वैसा ही फल सोय।
शुद्ध भावना धरे जब, कार्य सफल सब होय॥ ४॥
"देव शास्त्र गुरु" का रहे, यावत जग में वास।
"अभयमती" कहें धर्म का, तावत रहे प्रकाश॥ ५॥

विधानकर्त्ता यजमान

देश जाति कुल गोत्र से, जो नर होवे शुद्ध।
पूजन योग्य कहे उसे, जिन शासन में बुद्ध॥ १॥
शास्त्रों का अभ्यास कर, देव शास्त्र गुरु भक्त।
गुणी जनों में प्रेम धर, धर्म ध्यान में मस्त॥ २॥
पर निंदा न कभी करे, सत्य कथा में लीन।
हित मित प्रिय भाषण करें, तत्व चिंतवन कीन॥ ३॥
सबसे मैत्री भाव धर, शुद्ध भावना भाय।
दीन दुःखी प्रति दया कर, ऋषी देख हर्षाय॥ ४॥
इन सब गुण से युक्त जो, वही पुजारी संत।
सदा सत्य व्यवहार कर, जिससे हो भव अन्त॥ ५॥
अंगहीन अरु अंग में, अधिक होय नर-नार।
लूले-लँगड़े अन्ध अरु, व्यसनी पापाचार॥ ६॥
विषय लम्पटी लालची, अरु क्रोधी दिल चोर।
कभी न पूजन योग्य यह, दुःख पावें अति घोर॥ ७॥
मन वच तन से शुद्ध अरु, कृत कारित अनुमोद।
वही पुजारी धन्य है, शीघ्र तिरे धर योग॥ ८॥
अपने-अपने कर्म का, फल भोगें सब जोर।
घर में बन्शी बजत है, बन में नाचैं मोर॥ ९॥

अभिषेक विधि

शुद्ध जल से स्नान कर, धोति दुपट्टा शुद्ध।
विधि पूर्वक जल छानकर, प्रासुक करें प्रबुद्ध॥ १॥

अष्टद्रव्य धुल शोध कर, थाली में रख ढाक।
वेदी को कर साफ नित अरु प्रतिमा कर साफ॥ २ ॥
मन वच काय पवित्र रख, निर्मल जल झट लाय।
विधि पूर्वक अभिषेक कर, शांति धार करवाय॥ ३ ॥
फिर सूखे निज वस्त्र से , कर प्रक्षालन साफ।
यथा स्थान प्रभु को जभी विराजमान कर साथ॥ ४ ॥
फिर इसके पश्चात् जब , अष्ट द्रव्य ले शुद्ध।
"अभयमती" कहं भाव युत पूजन विधि कर बुद्ध॥ ५ ॥

पूजा की विधि

प्रथम रूप में गुरू का लेवे आशीर्वाद।
इक शत अठ चौवन कलश लेवें महिला साथ॥ १ ॥
इंद्राणी भर कलश ले जलयात्रा कर ठाठ।
नृत्य बाज संगीत ले ताल मंजीरा साथ॥ २ ॥
कर झंडारोहण प्रथम , अंकुरारोपण कीन।
जलयात्रा जल से जभी वेदी शुद्धी कीन॥ ३ ॥
धर्मचक्र मंडल रचें सोलह फुट का गोल।
मंदिर के आंगनविषै मंडल बनावें जोर॥४॥
रंग रेंगोली चावलों से मंडप बड़ा रचाय॥
समोशरण का रूप ले आदिक चित्र बनाय॥ ५ ॥
मंडल पर चारों दिशा धर्मचक्र चमकाय।
मध्य सिंहासन पर वहां जिन प्रतिमा खूब सुहाय॥ ६ ॥
द्रव्य अष्ट मंगल सजे , आठ सजें प्रातिहार्य।
तोरण घंटा झालरें आदि सभी लगवांय॥ ७ ॥
पूजामुख सकलीकरण विधियुत जिन अभिषेक।
इंद्र प्रतिष्ठा स्वस्तिजिन , यज्ञ सुदीक्षा लेख॥ ८ ॥
धर्मचक्रविधान जय जय ध्वनि से कर प्रारंभ।
देवागम ध्वज आदि सब आरोपण विधि संग॥ ९ ॥
मुकुट हार भूषण सभी इंद्र इंद्राणी धार।
ले जनेऊ इंद्र तिलक कर मौन सहित सुखकार॥ १० ॥

शुद्ध केशरिया वस्त्र अरु, दर्भासन को धार।
इंद्र इंद्राणी सर्व विधि, पूजन कर स्वीकार॥ ११॥
संगीत बाह्य नृत्यादि से, पूजन मनहर कीन।
अंतिम पूर्ण हवन विधि, अनुष्ठान जप कीन॥ १२॥
रथयात्रा उत्सव करें, कर प्रभावना ठाठ।
स्वर्गों में हलचल मचे, बाजों की ध्वनि बाज॥ १३॥
चतुर्संघ गुरु पूजिये, दे अहार विधि ठान।
औषधि पिच्छी पुस्तकें, उपकरणादिक दान॥ १४॥

पूजन सामग्री

दोहा

अष्टद्रव्य की शुद्धमय सामग्री शुचिसार।
अष्ट गंध की धूप हो श्रीफल आदिक धार॥ १॥
घृत दीपक कर्पूर की, ज्योती जगे महान।
घेवर मोदक आदि ले, चुनचुन कर पकवान॥ २॥
फटे पुराने वस्त्र को, पहन न पूजन कीन।
मन वच तन से शुद्ध हो, प्रभु भक्ती में लीन॥ ३॥

पूजा का फल

दोहा

इस धर्मचक्र के पाठ में, जितना धन हो खर्च।
कुये के जल सदृश सदा, दिन दूनी हो वृद्धि॥ १॥
इस विध कर उत्सव सहित, धर्मचक्र का पाठ।
इंद्रों के सुख भोग कर, करें मुक्ति में ठाठ॥ २॥
कल्पवृक्षसम शीघ्र ही, मनवांछित फल पाय।
"अभयमती" कहं जो करे, पाठ सदा सुख पाय॥ ३॥

पूजन पर मंगल गीत

तर्ज—आये महावीर भगवान

कर लो पूजन सब नर नार, भक्ति भाव से जिनमंदिर में॥ टेक॥
है अतिशय पार्श्वप्रभू का, दर्शन कर मन खिल उठता।
जिनकी महिमा अपरंपार, सब ही विघ्न नशें पल पल में॥
कर लो पूजन० ॥ १ ॥

मैना सुन्दरि ने ध्याया, श्री सिद्धचक्र रचवाया।
पति का कुष्ट नशे तत्काल, सप्त शतक कोढ़ी युत क्षण में॥
कर लो पूजन० ॥ २ ॥

मेढक मुख पुष्प दबायो, श्री वीर प्रभु को ध्यायो।
श्रेणिक गजतल मरियो हाल, तुरन्त जाय है स्वर्ग पुरी में॥
कर लो पूजन० ॥ ३ ॥

जब भरत नरेश्वर आयो, झट बाहुबली को ध्यायो।
तब पूजन कर तत्काल, हो जब केवलज्ञान छिनक में॥
कर लो पूजन० ॥ ४ ॥

पापी से पापी तारे, प्रभु निकट अधर्मी हारे।
"अभयमती" कँह कर दो पार, जिससे जन्म सफल हो पल में॥
कर लो पूजन० ॥ ४ ॥

तर्ज—धर्महि मोक्ष निशानी है

धर्महि मोक्ष निशानी है
हे भैया बिके तो ले लइयो।
होटल में ढूँढ्यौ बजरिया में ढूँढ्यौ-जंगल में घूम-२ पर्वत पर ढूँढ्यौ-
स्वर्गपुरी की कमानी है-हे भैया०।
महलों में ढूँढ्यौ अटरिया में ढूँढ्यौ घर-२ में घुसकर कुठरिया में
ढूँढ्यौ- सर्व सुखों की खानी है-हे भैया०।
मंदिर में ढूँढ्यौ शास्त्रों में ढूँढ्यौ, गुरुओं के पास जाके भक्ती से
ढूँढ्यौ-यही सकल जिन वाणी है-हे भैया०।
झूम-२ नृत्य कर लेकर के अइयो, साथ मेरे शिवपुर को लेकर के
चलियो "अभयमती" की वाणी है-हे भैया०।

धर्मचक्र विधान प्रारम्भ

मंगलाचरण

(स्त्रग्विणी छंद)

धर्मचक्र अनेकांत प्यारा कहा,
जैन सिद्धांत सत्य निराला कहा।
चिन्ह स्याद्वाद दीपक अमल हो रहा,
बारंबार नमन करके धारो महा॥
वीर भगवान की दिव्यध्वनि जब खिरी,
भारत भू पर अनेकांत परिणत हुई।
ये अनादि निधन धर्म चलता रहा,
और चलता रहेगा अभी चल रहा॥
जिन कथित धर्म ही सच्चा धर्म अरे,
आग्रह को दूर कर सौम्य धारण करे।
सत् प्रमाणों से अविरोध सार्वं सुखं,
शिवकरं दुखहरं कुपथ खंडन कहा॥
ना किसी से बना ना किसी से मिटा,
जिसका खंडन न कोई कभी कर सका।
"ही" के औ "भी " के अन्तर से झगड़ा टला,
भेद विज्ञान ज्योति जगाता रहा॥
जो भी "अस्ति" सदा वो ही "नास्ति" बना,
जो भी इन्सान है वो ही भगवन् बना।
है परस्पर अपेक्षा ही वस्तु कथन,
भव्य के हृदय में जगमगाता रहा॥

इति जिनयज्ञप्रतिज्ञापनाय मंडलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

श्री धर्मचक्र वंदना

चाल-जहां डाल-डाल पर......

श्री धर्मचक्र के पाठ से ही मिटता कर्मों का फेरा
हो निज में ज्ञान उजेला।
जहां पूजन मंत्र विधान से होता विश्व शांति का डेरा।
हो निज में ज्ञान उजेला॥ टेक॥
जिसके प्रसाद से जन जन का सब रोग दूर भग जाता।
जो शुद्ध विधी से किया पाठ जब शीघ्र मिले फल साता॥
जहां धर्मध्वजा का चिन्ह मनोहर का है नित्य बसेरा।
हो निज में ज्ञान उजेला॥ १॥
जिसकी महिमा को स्वर्ग से आकर देव इन्द्र भी गाते।
भाव भक्ति से पृथ्वी के पति सभी स्वयं झुक जाते॥
जिसके द्वारे पर ज्ञानसूर्य किरणों का रहे सबेरा।
हो निज में ज्ञान उजेला॥ २॥
जिसके अतिशय से यंत्र मंत्र फल चतुर्काल सम दिखता।
आधि व्याधि से त्रस्त प्रजाजन शीघ्र सुखी नित बनता।
कहं "अभयमती" श्री धर्मचक्र से मिले मुक्ति का डेरा।
हो निज में ज्ञान उजेला॥ ३॥

इति धर्मचक्रविधान मंडपान्तः पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

चाल— बंदो दिगंबर गुरु......

श्री धर्मचक्र को पूजते जो मिले आनंदधाम।
मिथ्यात्व की भ्रांति तजे, सम्यक्त्व उर में भान।
श्री पंचपरमेष्ठी व रत्नत्रय सुचिन्ह महान।
ऐसा कहे धर्मचक्र भवि धारण करे शिवधाम॥

इति पुष्पांजलिः

पूजा नं०—१

धर्मचक्र पूजा

स्थापना—हरिगीतिका छंद

जय जय ये धर्मचक्र जो समोशरण में सोहे सदा,
बारह सभाओं से सहित चहुं ओर में तिष्ठे सदा।
इक सहस आरों से सुशोभित बीच में चमके सदा,
मैं पूजहूं वरभक्ति से ये सर्वजन को सुखप्रदा॥

दोहा

धर्मचक्र जग में सदा रहे अनादि अनंत।
जो आश्रय लेते सदा, उनका हो भव अंत॥

ॐ ह्रीं अर्हं मंत्र सहित समोशरण स्थित धर्मचक्र समूह ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं अर्हं मंत्र सहित समोशरण स्थित धर्मचक्र समूह ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।

ॐ ह्रीं अर्हं मंत्र सहित समोशरण स्थित धर्मचक्र समूह ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं।

बेसरी छंद

गंगा जल लेकर प्रभु धारा, अमृत जल पी रोग निवारा।
धर्मचक्र है नाम निराला, जन जन का शुभ मंगल कारा॥

ॐ ह्रीं अर्हं मंत्र सहित समोशरण स्थित धर्मचक्रेभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

चंदन शुद्ध सुगंधित लाया, सुरभित मन भव ताप नशाया।
धर्मचक्र है नाम निराला, जन जन का शुभ मंगल कारा॥

ॐ ह्रीं अर्हं मंत्र सहित समोशरण स्थित धर्मचक्रेभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

नश्वर वैभव मुझे न भाया, शाश्वत सुख हितु पुंज चढ़ाया।
धर्मचक्र है नाम निराला, जन जन का शुभ मंगल कारा॥

ॐ ह्रीं अर्हं मंत्र सहित समोशरण स्थित धर्मचक्रेभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

इंद्रिय सुख की चंचल माया, मन पवित्र हितु पुष्प चढ़ाया।
धर्मचक्र है नाम निराला, जन जन का शुभ मंगल कारा॥
ॐ ह्रीं अर्हं मंत्र सहित समोशरण स्थित धर्मचक्रेभ्य: पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।
व्यंजन से नहिं भूख निवारा आत्मतृप्ति नैवेद्य ले प्यारा।
धर्मचक्र है नाम निराला, जन जन का शुभ मंगल कारा॥
ॐ ह्रीं अर्हं मंत्र सहित समोशरण स्थित धर्मचक्रेभ्य: नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।
लौकिक दीप न करे उजाला आत्म ज्योति दीपक ले न्यारा।
धर्मचक्र है नाम निराला, जन जन का शुभ मंगल कारा॥
ॐ ह्रीं अर्हं मंत्र सहित समोशरण स्थित धर्मचक्रेभ्य: दीपं निर्वपामीति स्वाहा।
कर्मों ने मुझको भरमाया, आत्म लाभहितु धूप खिवाया।
धर्मचक्र है नाम निराला, जन जन का शुभ मंगल कारा॥
ॐ ह्रीं अर्हं मंत्र सहित समोशरण स्थित धर्मचक्रे.भ्य: धूपं निर्वपामीति स्वाहा।
खट्टे मीठे फल बहु खाया, शिवफल हेतु श्रीफल लाया।
धर्मचक्र है नाम निराला, जन जन का शुभ मंगल कारा॥
ॐ ह्रीं अर्हं मंत्र सहित समोशरण स्थित धर्मचक्रेभ्य: फलं निर्वपामीति स्वाहा।
अष्ट द्रव्य का अर्घ्य बनाया, स्वर्णथाल में इसे सजाया।
धर्मचक्र है नाम निराला, जन जन का शुभ मंगल कारा॥
ॐ ह्रीं अर्हं मंत्र सहित समोशरण स्थित धर्मचक्रेभ्य: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा

मानुष नरतन पाय कर कर लीजे दो काम।
देने को है दान भला लेने को प्रभु नाम॥
मुख मीठा होता सहज जिनवाणी उच्चार।
जो जिनगंग की धार कर फल मिलता तत्काल॥
ज्यों चुंबक बन लोह को खींचे अपनी ओर।
त्यों जिनवर चुंबक बने खींचे अपनी ओर॥

शांतये शांतिधारा।

स्वार्थ मुखी संसार में केवल धर्म अमोल।
पुष्पांजलि अर्पण करें, हृदय पटल को खोल॥

दिव्य पुष्पांजलिः।

अथ प्रत्येक अर्घ्य

दोहा

धर्मचक्र चउ दिश लसे, समोशरण के मांय।
पुष्पांजलि अर्पण करूं, मन पवित्र हो जाय।।

इति पुष्पांजलिः।

चाल— हे दीन बंधु० ......

शेर छंद

समोशरण में प्रथम सुपीठ के सुपूर्व में।
सर्वाण्ह यक्ष शिर पे धर्मचक्र सोहने।।
तीर्थंकर के विहार में आगे सदा चले।
रवि कोटि कांति से अधिक मैं पूजहूं भले।। १ ।।

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरसमोशरणस्थितप्रथमपीठोपरिपूर्वदिक्धर्मचक्रेभ्यः अर्घ्यं..।

समोशर्ण प्रथम पीठ के दक्षिण सुदिशा में।
सर्वाण्ह यक्ष शिर पे धर्मचक्र सोहने।।
तीर्थंकर के विहार में आगे सदा चले।
रवि कोटि कांति से अधिक मैं पूजहूं भले।। २ ।।

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरसमोशरणस्थितप्रथमपीठोपरिदक्षिणदिक्धर्मचक्रेभ्यः अर्घ्यं।

समोशरण प्रथम पीठ के पश्चिम सुदिशा में।
सर्वाण्ह यक्ष शिर पे धर्मचक्र शोभने।।
तीर्थंकर के विहार में आगे सदा चले।
रवि कोटि कांति से अधिक मैं पूजहूं भले।। ३ ।।

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरसमोशरणस्थितप्रथमपीठोपरिपश्चिमदिक्धर्मचक्रेभ्यः अर्घ्यं...।

समोशरण प्रथम पीठ के उत्तर सुदिशा में।
सर्वाण्ह यक्ष शिर पे धर्मचक्र शोभने।।
तीर्थंकर के विहार में आगे सदा चले।
रवि कोटि कांति से अधिक मैं पूजहूं भले।। ४ ।।

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरसमोशरणस्थितप्रथमपीठोपरिउत्तरदिक्धर्मचक्रेभ्यः अर्घ्यं।

पूर्णार्घ्य—दोहा

इक इक तीर्थंकर कहें, चार चार वृषचक्र।
चौबिस के छ्यानवे कहें, भजूं हनूं कर्मचक्र॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरसमोशरणस्थितप्रथमपीठोपरिविराजमानषण्णवतिधर्मचक्रेभ्यः पूर्णार्घ्यं .... ।

"शांतये शांतिधारा, पुष्पांजलिः"

जाप्य—ॐ ह्रीं श्री धर्मचक्राय नमः

जयमाला

सोरठा

महिमा अपरंपार, धर्मचक्र की कहं सदा।
गाऊँ गुण जयमाल, नहीं रुले संसार में॥

शेर छंद

सुख शांति बगीचों के फूल खिलते भारती।
धोलो हृदय का मैल जिनवाणी पुकारती॥ टेक॥
जय जय ये धर्मचक्र सर्व पाप नशे हैं।
जिसके निकट भवि जीव नम्रीभूत दिखे हैं॥
अर्हंत देव के सदा आगे जो चले हैं।
अरु पुण्यरूप में सदा अतिशय को करे हैं॥
जिसके प्रभाव से ये ज्ञानज्योति प्रकाशी॥ धोलो० ॥
वो दिन भी था जब पशु की बलि चढ़ती थी सारी।
उस दिन की याद कर सभी करते थे खूंखारी।
हमने सुनी खुद नर पशु पर पड़ती कटारी।
कर याद वो अन्याय तड़फता है दिल भारी॥
क्या पापी के हत्या को भूल सकता भारती॥ धोलो० ॥
भगवान महावीर के प्रतिकूल जो चलते।
हिंसामयी बलिदान दे नरमेध को करते॥
धिक्कारते दुतकारते सब नीच भी कहते।
इहलोक व परलोक में वे नित दुखी रहते॥
क्या यज्ञ के बलिदान भूल सकता भारती॥ धोलो० ॥

परमात्म तीर्थंकर भी शिवं सत्य के बल से।
लेकर परम विभूति अहिंसा के शस्त्र से॥
आतम स्वतंत्र कर दिया अध्यात्म वाणी से।
रक्षा करो पुर राष्ट्र की अकलंक वाणी से॥
मत भूल क्षमा शक्ति से हिंसा भी हारती॥ धोलो० ॥
यमपाल था चांडाल भी करता था नियम जब।
होता था पतितों का कभी उद्धार शीघ्र तब॥
लोकोपकार के लिये भगवान वीर जब।
स्वर्गों से भारतवर्ष में अवतार लिया तब॥
क्या वीर की वाणी को भूल सकता भारती॥ धोलो० ॥
चलता है धर्मचक्र अहिंसा के नाम से।
दुर्भिक्ष मिथ्यातम भगे जिसके महात्म्य से॥
करता है आत्मबल जभी है ध्येय मोक्ष में।
बनता है महावीर जब शुद्धोपयोग में॥
गिरती मनुष्यता को "अभयवाणी" तारती॥ धोलो० ॥

घत्ता

जय जय तीर्थंकर, धर्मचक्र धर, मन पवित्र कर दुखहारी।
मैं पूजूं ध्याऊं शीश नमाऊँ बलिबलि जाऊँ सुखकारी॥
ॐ ह्रीं अर्हं मंत्र सहित समोशरणस्थित धर्मचक्रेभ्य: पूर्णार्घ्यं. . . .।

शांतये शांतिधारा।

दोहा

तीर्थंकर धारण करें, धर्मचक्र जयवंत।
"अभयमती" शिव पद लहें, अरु हो दुख का अंत॥
धर्म प्रवर्त्तकचक्र को शत शत बार प्रणाम।
दसों धर्म अरु रत्नत्रय लहें मुक्ति का धाम॥

अनुष्टुप छंद

धर्मी जिनेद्र में प्रीती करें सदा सुखी दिखें।
धर्म चक्र प्रवर्त्तकों, पूजहूं प्रभु नित्य ही॥

इत्याशीर्वाद: पुष्पांजलिं क्षिपेत्

पूजा नं०—२

समोशरण पूजा

स्थापना— शंभु छंद

ज़ब पूर्ण ज्ञान युत तीर्थंकर सर्वांग रूप से ध्वनि किया।
चार ज्ञानधारी गणधर, जब द्वादशांग को गूँथ लिया॥
भव्य जीव के पुण्य उदय से प्रभु की दिव्य ध्वनि खिरी।
ध्वनि सुनके तज बिभ्रम को भविजन को अद्भुत निधी मिली॥

दोहा

तीर्थंकर गणधर सभी से शोभित समोशरण।
जुड़े सभी बारह सभा, पूजें सब भविवृंद॥

ॐ ह्रीं अचिंत्यविभूति त्रैकालिकतीर्थंकरगणधरादि सहित समवशरण समूह ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं अचिंत्यविभूति त्रैकालिकतीर्थंकरगणधरादि सहित समवशरण समूह ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।

ॐ ह्रीं अचिंत्यविभूति त्रैकालिकतीर्थंकरगणधरादि सहित समवशरण समूह ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं।

चाल—चंदना पुकारे तेरे द्वार पे खड़ी......

समोशरण में आकर पुण्यवान हो रहा।
पूजन करके भक्त भाग्यवान हो रहा॥ टेक॥
चौबिस तीर्थंकर गणधरादि से समोशरण नित शोभ रहा है।
बारह सभाओं से शोभित जो जन जन का मन मोह रहा है॥
आठ प्रातिहार्य मंगल द्रव्य दिख रहा॥ पूजन०॥ १।
स्वर्ण कलश में गंगा जल ले प्रभु चरणान जल धार करे हैं।
आत्मशांति हित आत्मकमल में सदा प्रभू का ध्यान धरे हैं॥
ध्या. करते रोग शोक दूर हो रहा॥ पूजन०॥ २॥

ॐ ह्रीं अचिंत्यविभूति त्रैकालिकतीर्थंकरगणधरादि सहित श्री समोशरणाय जलं....।

चंदन हार गंगाजल चंद्रकिरण नहिं मन को शांत करे है।
दुनियां के सब राग रंग तज प्रभु गुण सौरभ प्राप्त करे है॥
गंध सुगंधित लेकर प्रभु पद चर्च कर रहा॥ पूजन० ॥ १ ॥
प्रभु तव वचनामृत पाकर भवि शीतल मन संताप हरे हैं।
मिथ्यातम को दूर भगाकर समकित सूर्य प्रकाश करे हैं॥
निज में रमके आत्म तत्त्व को प्राप्त हो रहा॥ पूजन० ॥ २ ॥
ॐ ह्रीं अचित्यविभूति त्रैकालिकतीर्थंकरगणधरादि सहित श्री समोशरणाय चंदनं...।
इंद्रिय सुख अनुभव करके ही आत्मज्ञान से शून्य हुये हैं।
शाश्वत सुख की प्राप्ति हेतु मैं अक्षत पुंज अखंड लिये हैं॥
धवल शालि को लेकर प्रभु को अर्पण कर रहा॥ पूजन० ॥
तारणतरण जहाज प्रभू जी तेरी भक्ति दुर्गति को हरे है।
रागादिक का विसर्जन करके, मेरी शक्ति मुक्ति को धरे हैं॥
अक्षत अर्पण करके प्रभु गुणगान कर रहा॥ पूजन० ॥
ॐ ह्रीं अचित्यविभूति त्रैकालिकतीर्थंकरगणधरादि सहित श्री समोशरणाय अक्षतं.।
सब संसार असार समझकर तीर्थंकर भी वैभव तजते।
जग से मुख को मोड़ के स्वामी संयम धरकर निज में रमते॥
कामदेव ने तीनलोक को वश में कर रहा॥ पूजन० ॥
कामवाण से बचने हेतू कल्पवृक्ष के पुष्प लिये हैं।
पुष्प समर्पण करके प्रभु को कामबाणविध्वंस किये है॥
कामदेव भी तीर्थंकर के वश में हो रहा॥ पूजन० ॥
ॐ ह्रीं अचिंत्यविभूति त्रैकालिकतीर्थंकरगणधरादि सहित श्री समोशरणाय पुष्पं...।
कितने ही व्यंजन मैं खाये फिर भी मन को तृप्त न करते।
प्रभुजी क्षुधा नाश करके ही निशदिन आतम स्वाद को चखते॥
क्षुधा रोग मेटन हित कंचन थाल भर रहा॥ पूजन० ॥
आत्म तृप्ति के हेतु प्रभू को नेवज थाल को भेंट किये हैं।
आधि व्याधि दुख दूर हेतु मैं खुद में ही खुद तृप्त हुये हैं॥
ज्ञानामृत भोजन से मन भी पावन हो रहा॥ पूजन० ॥
ॐ ह्रीं अचित्यविभूति त्रैकालिकतीर्थंकरगणधरादि सहित श्री समोशरणाय नैवेद्यं...।
विद्युत के दीपक से जग में रात्रि अंधेरा दूर हुआ है।
मोह अंधेरा दूर हेतु मैं प्रभु की आरति खूब किया है॥
मिथ्यातम नाशक हित ज्ञानज्योति भर रहा॥ पूजन० ॥

ज्ञानज्योति भरकर के निज में आतम निधि को प्राप्त किया है।
रत्नथाल में दीप को लेकर सुरगण अनुपम नृत्य किया है॥
ज्ञानदीप अज्ञान अंधेरा दूर कर रहा।
पूजन करके भक्त भाग्यवान हो रहा॥
ॐ ह्रीं अचिंत्यविभूति त्रैकालिकतीर्थंकरगणधरादि सहित श्री समोशरणाय दीपं.... ।
कर्मों के चक्कर में पड़कर अज्ञानी भव भ्रमण किया है।
घटीयंत्रसमपंचपरावर्तन कर क्लेश को सहन किया है॥
अष्टकर्म के नाश हेतु मैं धूप खे रहा॥ पूजन०॥
कर्मांजन से हुये निरंजन अन्तर्यामी प्रभु तप तपते।
बारह विध तप के द्वारा ही मुनिजन कर्मविसर्जन करते॥
धूप द्वारा कर्म को निर्मूल कर रहा॥ पूजन०॥
ॐ ह्रीं अचिंत्यविभूति त्रैकालिकतीर्थंकरगणधरादि सहित श्री समोशरणाय धूपं.... ।
इच्छित फल की प्राप्त हेतु नित मारा मारा फिरता हूं मैं।
तेरी शरण में आकर प्रभु जी, फल को समर्पण करता हूँ मैं॥
शाश्वत फल हित श्रीफल को मैं भेंट कर रहा॥ पूजन०॥
नानाविध के फल खाकर भी रसना इंद्रि न तृप्त हुई है।
कल्पवृक्ष के उत्तमफल से उत्तम फल की प्राप्ति हुई है॥
फल से ही फल मुक्ति फल साकार हो रहा॥ पूजन०॥
ॐ ह्रीं अचिंत्यविभूति त्रैकालिकतीर्थंकरगणधरादि सहित श्री समोशरणाय फ़लं.... ।
आठों द्रव्य सजाकर मैंने रत्नों से थाली भर लाया।
तेरे जैसे प्राप्त हेतु गुण, अर्घ समर्पण करने आया॥
मन पवित्र हित प्रभु को द्रव्य भेंट कर रहा॥ पूजन०॥
रत्नत्रयनिधि के स्वामी प्रभु श्रमण संत तव गुण गाते हैं।
तेरे गुण का अर्चन करके भविजन भव से तिर जाते हैं॥
आस्रव के निरोध हेतु अर्घ्य दे रहा॥ पूजन०॥
ॐ ह्रीं अचिंत्यविभूति त्रैकालिकतीर्थंकरगणधरादि सहित श्री समोशरणाय अर्घ्यं.... ।

चाल—चंदन सा बदन....

तीर्थंकर ध्वनि अर्हतध्वनि अरु दिव्य ध्वनि का खिर जाना।
सम्यक्त्व प्राप्त करना चाहो तो समोशरण में आ जाना॥
धर्म देशना में ऐश्वर्य जो प्रभु का अन्य नहीं दिखता।
तमहर रवि में जो छवि है नक्षत्रों में न कभी दिखता॥

इन भव्य मूर्त्ति के दर्शन करके अतिशय पुण्य कमा जाना।
इस समोशरण में आकर के अभिमान दुराग्रह तज जाना॥
सम्यक्त्व० ॥ १ ॥

कारण के मिलते ही सब ही स्वयं सिद्ध तब कार्य हुआ।
इस ही प्रकार गुरु परंपरा से श्रुत का नित्य प्रकाश हुआ॥
इस समोशरण में आकर के झट वैर भाव सब तज जाना।
इस समोशरण में आकर के महाव्रतधारी तुम बन जाना।सम्यक्त्व० २।

दोहा

समोशरण को प्राप्त कर ध्यान धरे सुखकार।
आत्मशांति के हेतु नित करें प्रभु को धार॥ ३॥
"शांतये शांतिधारा"।

तीर्थंकर गणधर सभी, हृदय कमल में धार।
पुष्पांजलि अर्पण करें, हो भवदधि से पार॥
दिव्य पुष्पांजलिः।

अथ प्रत्येक अर्घ

दोहा

समोशरण चौबीसजिन त्रिभुवन लक्ष्मी युक्त।
पुष्पांजलि अर्पण करूं, हो भव भव से मुक्त॥

इति मंडलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

मुक्तक छंद

समोशरण में चार चार जिन मानस्तंभ हि सोहे।
चारों दिश में जिन प्रतिमायें भविजन का मन मोहें॥
जिनके दर्श मात्र से ही मानी का मान गले है।
अठ प्रातिहार्य मणिमय जिनबिंब भजूं भवताप हरे है॥ १॥

ॐ ह्रीं समोशरणस्थितसर्वतीर्थंकरसंबंधिचतुर्दिक्मानस्तंभसर्वजिनप्रतिमाभ्यः महार्घ्यं...।

वीरछंद

समोशरण में चौबिस जिनवर अष्टभूमि से शोभ रहें।
चैत्य प्रासाद खातिका लता व उपवन ध्वज अरु कल्प कहें॥
भवन श्री मंडप अष्ट भूमि, इनमें जितने मंदिर प्रतिमा।
उन सबको पूजें हम सब, जिससे लहें मुक्ति पद की गरिमा॥ २॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरसमोशरणस्थित अष्टभूमि संबंधि जिनमंदिरजिनप्रतिमाभ्यः महार्घ्यं . . ।

शेर छंद

समोशरण में प्रथम सुपीठ के चउ दिशा में।
सर्वाण्ह यक्ष शिर पे धर्मचक्र सोहने॥
चौबीस प्रभु विहार में, आगे चले सदा।
इक सहस आरों से जो चमके भजूं सुखप्रदा॥ ३॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरसमोशरणस्थितप्रथमपीठोपरिशोभितषण्णवतिधर्मचक्रेभ्यः महार्घ्यं. . . . ।

चाल— पंरपंरज्योति०. . . . . .

नरेंद्रछंद

समोशरण में द्वितीय पीठ पर आठ आठ ध्वज सोहें।
नवनिधि मंगल द्रव्य धूप घट आदिक जन मन मोहें॥
आठ चिन्ह युत ऊंची ध्वजायें यश गुण कीर्ति बढ़ावें।
जो इनको पूजें हैं निशदिन, आतम ज्योति जगावे॥ ४॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरसमोशरणस्थितद्वितीय पीठोपरि अष्ट अष्ट महाध्वजाभ्यः अर्घ्यं०. . . . ।

शंभुछंद

समोशरण में तृतीय पीठ पर जिनवरगंधकुटी सोहें।
जिसमें चहुं ओर जड़े, रत्नों की कांति से जन जन मन मोहें॥
मंगल द्रव्यों अरु झालर ध्वज आदिक से चित्र विचित्र दिखे।
ऐसी सर्वोत्तम गंधकुटी की पूजन कर सब पाप नशें॥ ५॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरसमोशरणस्थिततृतीयपीठोपरिचतुर्विंशतितीर्थंकरगंधकुटीभ्यः महार्घ्यं. . . . ।

बेशरी छंद

समोशरण चौबीस जिन गणधर।
चौसठ ऋद्धि सहित सब मन हर॥
ये चौदह सौ उनसठ माने।
पूजत सब प्रभु गुण पहिचाने॥ ६॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरसमोशरणस्थितचतुर्विंशतितीर्थंकरऋषभसेनादिएकोनषष्टय-धिकचतुर्दशशतगणधरचरणेभ्यः महार्घ्यं. . . .।

दोहा

समोशरण में और भी ऋद्धि सहित योगीन्द्र।
केवलि श्रुतकेवलि जजूं पाठक साधु मुनीन्द्र॥ ७॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरसमोशरणस्थितसर्वऋद्धिसहितयोगींद्रकेवलिश्रुतकेवलिपाठ-कसाधुमुनींद्रेभ्यः महार्घ्यं. . . .।

समोशरण में ब्राह्मी गणिनी आदि आर्यिका सर्व।
ये महाव्रती उपचार से, सबको नमूं तज गर्व॥ ८॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरसमोशरणस्थितब्राह्मीप्रमुखपंचाशल्लक्षषट्पंचाशत् सहस्रद्वयशतपंचाशत्आर्यिकाचरणेभ्यः महार्घ्यं . . . ।

समोशरण चौबीस जिन गणधर आदि मुनीश।
विभव आदि लक्ष्मी सहित पूजूं सब ऋषि ईश॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरसमोशरणस्थितसर्वतीर्थंकरगणधरादिसर्वगुरुभ्यः पूर्णार्घ्यं. ।

जाप्य—ॐ ह्रीं श्री धर्मचक्राय नमः

जयमाला

समोशरण महिमा अगम कोई न पावे पार।
भव्य जीव के पुण्य से ध्वनि खिरे अपार॥

दोहा—चौबोल छंद

समवसरण में तीर्थंकर की, दिव्यध्वनि सुन भ्रांति हटे।
जाति विरोधी क्रूर जन्तु भी, वैर भाव सब शीघ्र नशें॥
बड़े प्रेम से शेर शेरनी, गाय शिशु के साथ रहे।
बिल्ली चूहे सर्प नेवला, आदि परस्पर प्रेम लहें॥ १॥

नये नये भावों की लहरें, जब भी उठती अन्दर से।
जिनवर हम सब लोहे को, चुम्बक बन खींचे ऊपर से॥
समवसरण में आकर के, झट कोई महाव्रती बनते।
यथा शक्ति के रूप सभी, व्रत संयम को धारण करते॥ २॥
सुर नर किन्नर अरु विद्याधर, वृक्ष लतायें आ आकर।
मानो भक्ती में विभोर हो-कर गुण कीर्तन गा गाकर॥
तृप्त न हो जब पुनः नृत्यकर, यश-कीर्ति को फैलाकर।
तीर्थंकर का ध्यान धरे जब, पुण्य बंधे खुद आ आकर॥ ३॥
पत्थर में ज्यों कलापूर्ण मय, प्रभू बिंब साकार हुये।
त्यों निज में गुण रत्न कलायुत चेतन मय आकार लिए॥
तरण कला जाने बिन नर ज्यों, नहिं समुद्र से तिर सकता।
प्रभु जी के दर्शन बिन नर त्यों, आत्म शान्ति नहीं पा सकता॥ ४॥
उसी धातु पत्थर को नर क्यों, ठुकराते नर सोच जरा।
वही गुणों से संस्कारित हो, पत्थर भी बन पूज्य भला॥
उसी पुष्प को पैरों से क्यों, कुचले नित नर सोच जरा।
वही पुष्प नित संत पुरुष कर, कमलों में बन पूज्य भला॥ ५॥
प्रभु सुमरत भय कोई न लागे, कीर्ति तुम्हारी है न्यारी।
समोशरण को लखकर तेरा, गुण गाते सब नरनारी॥
जिस पर होती कृपा तुम्हारी, संकट झट कटता भारी।
जो भी जैसी आश लगाता, पूर्ण तुरत होवे सारी॥ ६॥
चमत्कार को नमस्कार है, खुला सभी को द्वार सदा।
दुखिया दर पर जो भी आते, संकट खोकर जाय तदा॥
अंधा भी यदि ध्यान लगावे, नेत्र शीघ्र ही खुले यदा।
बहरा भी सुनने लग जावे, पागलपन हो दूर सदा॥ ७॥
भार्यार्थी को मिले सुभार्या पुत्रार्थी को पुत्र मिले।
धन अर्थी को मिले सम्पदा, मन हर्षित हो खूब खिले॥
होय मनोरथ सिद्ध सभी जो समोशरण का ध्यान धरे।
अखण्ड ज्योती दीप जलाकर, दुख दरिद्र सब शीघ्र टले॥ ८॥
तीर्थंकर की वाणी कभी न हो असत्य अरु व्यर्थ कहे।
नव पदार्थ अरु सात तत्व कह छहों द्रव्य गणधर गूंथें॥

अनेकांत धर्मी पदार्थ अरु सप्त भंग मय वस्तु लसें।
सत्यशिवं सोहं को लेकर, मिथ्यातम को शीघ्र नशे॥ ९ ॥
जो भी अस्ति रहे वस्तू नित, नास्ति कहे जिनदेव सदा।
अस्ति नास्ति है वस्तु तथा कहं, "अवक्तव्य" गुरुदेव तदा॥
वही "अस्ति अरु अवक्तव्य" कहं, नास्ति अगोचर वस्तु यदा।
अस्ति नास्ति है "अवक्तव्य" यह सप्तम भंग प्रभेद सदा॥ १० ॥
तीर्थंकर दिव्यध्वनि द्वारा जन जन का उपकार किया।
रहे निरक्षर रूप सभी नित भाषा मय परिणमन किया॥
भवि भागन वश दिव्य ध्वनि खिर सुनके विभ्रम नाश हुआ।
जंगल में भी हुआ सुमंगल तीनों काल सुभिक्ष हुआ॥ ११ ॥
अहंकार ममकार किया यदि समोशरण पर आकर जो।
ख्याति लाभ पूजादि चाह वश मात्र प्रदर्शन करते वो॥
सब संकल्प विकल्प को करके झंझट में जो व्यर्थ फंसे।
उनके समोशरण भी कुछ नहिं सब ही नाम निशान मिटे॥ १२ ॥
श्री समोशरण में आकर के जो तत्व चिंतवन करें सदा।
रागद्वेश तजकर योगीगण निज को निज में भजे सदा॥
जीवन सफल करें वे ही भवि वरें मुक्ति श्री शीघ्र तदा।
जैसा जिसने कर्म किया है वैसा ही फल भोग सदा॥ १३ ॥

दोहा

तीर्थंकर की दिव्य ध्वनि हरिये तम अज्ञान।
पूजूं नित जिनदेव की "अभयध्वनि" स्याद्वाद॥

चौबोला

अभय ध्वनि स्याद्वाद भव्य जीवों को मोक्ष ले जाता।
दिव्य ध्वनि यदि नहिं खिरती तो धर्म प्रचार न होता॥
धर्म वही रत्नत्रय जो त्रिभुवन की संपद दाता।
जो आश्रय में रहता उसका नित कर मंगल साता॥

दौड़

महाभाषा अठारह जी, सात शतक लघु भाषा जी।
निरक्षर ध्वनि सुनने को।
गणधर गूंथे बारह अंग सु अभय ध्वनि सुनने को।

ॐ ह्रीं अचिंत्यविभूतित्रैकालिक तीर्थंकरगणधरादि सहित समोशरणाय जयमाला पूर्णार्घ्यं. . . ।

गीता छंद

जो भव्य श्रद्धा भक्ति से समोशरण जिन पूजा करें।
वे ऋद्धि सिद्धि समृद्धि स्वर्गिक आदि सुख पावें खरे॥
अरु आत्म संपत्ती को पाकर अचल आत्मिक सुख जगे।
शिव महल में आवास कर निज आत्म ज्योती जगमगे॥

॥ इत्याशीर्वादः ॥

पूजा नं०—३

रत्नत्रय पूजा

स्थापना—सोरठा

पंचम गति पहुंचाय भव भव के दुख से बचूं।
करूं थापना शुद्ध, सम्यक रत्नत्रय जजूं, ॥

ॐ ह्रीं सम्यग्रत्नत्रय ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।
ॐ ह्रीं सम्यग्रत्नत्रय ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।
ॐ ह्रीं सम्यग्रत्नत्रय ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं।

(अडिल्ल छंद)

गंगा का शुचि शुद्ध नीर भर लायके।
तृषानिवारण होय धार कर भाव से॥
सम्यग्दर्शन ज्ञान चरित गुणमय सजूं।
निज स्वरूप मय सम्यक रत्नत्रय भजूं॥

ॐ ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय जलं निर्वपामीति स्वाहा॥ १ ॥

मलयागिरि शुभ चंदन सो अलि झंकरे।
पूजूं मन वच काय दाह सब ही हरे॥ सम्यग्दर्शन०॥
ॐ ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय संसारतापविनाशनाय चंदनं०....॥ २॥
तंदुल शशि सम शुद्ध अखंडित पावने।
पुंज सुगंधित भेंट कियो मन भावने॥ सम्यग्दर्शन०॥
ॐ ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं०....॥ ३॥
सुर तरु के शुचि विकसित सुमन मंगाऊं मैं।
काम दाह निरवारन पुष्प चढ़ाऊँ मैं॥ सम्यग्दर्शन०॥
ॐ ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय कामवाणविध्वंसनाय पुष्पं०....॥ ४॥
अर्द्ध चंद्र सम फैनी मोदक आदि ले।
क्षुधा पिशाचिनि भगे, अतः नेवज चढ़े॥ सम्यग्दर्शन०॥
ॐ ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं०....॥ ५॥
कनक रकेबी माहिं कपूर जलाय के।
करूं आरती तमहर नित मन लायके॥ सम्यग्दर्शन०॥
ॐ ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय मोहांधकारविनाशनाय दीपं०....॥ ६॥
धूप सुगंध मंगाय शुद्ध खेऊं सदा।
आठों कर्म जलाय नहीं हो दुख कदा॥ सम्यग्दर्शन०॥
ॐ ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय अष्टकर्मदहनाय धूपं०....॥ ७॥
आम्र सुदाडिम श्रीफल किशमिश लाऊँ मैं।
मोक्ष प्राप्ति हित फल बहु भांति चढ़ाऊँ मैं॥ सम्यग्दर्शन०॥
ॐ ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय मोक्षफल प्राप्तये फलं०....॥ ८॥
जल फलादि बसु द्रव्य सजाऊँ चाव से।
आत्म सिद्धि हित अर्घ्य चढ़ाऊँ भाव से॥ सम्यग्दर्शन०॥
ॐ ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय अर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं०....॥ ९॥

दोहा

जिनकी महिमा अगम है रत्नत्रय शिवरूप।
शांतिधारा करत ही, मिले शांति सुख रूप॥
शांतये शांतिधारा।

दोहा

भांति भांति के सुमन ले, हृदय कमल खिलजाय।
रत्नत्रय पूजूं सदा, पुष्पांजलि चढ़ाय॥
दिव्य पुष्पांजलिः।

सम्यग्दर्शन अंग के आठ अर्घ्य

दोहा

देवशास्त्र गुरु के वचन अमृत सम सुख संग।
ज्ञानी शंका ना करे, निःशंकित गुण अंग॥ १ ॥

ॐ ह्रीं निःशंकित अंगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विषय भोग किंपाक सम इसमें सुख नहि रंच।
ज्ञानी वांछा ना करे, निःकांक्षित गुण अंग॥ २ ॥

ॐ ह्रीं निःकांक्षित अंगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

रुग्ण साधु तन देखकर ग्लानि करे न हि भव्य।
निर्विचिकित्सा अंग लहं, होवे भवि कृतकृत्य॥ ३ ॥

ॐ ह्रीं निर्विचिकित्सा अंगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देव गुरु पाखंड़ कहं, तीन मूढ़ता संत।
इनसे रहित सुबुध वही अमूढ़दृष्टि लहं अंग॥ ४ ॥

ॐ ह्रीं अमूढ़ दृष्टि अंगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

निज गुण का न प्रकाश कर, पर दोषों को ढाक।
यह उपगूहन अंग है, जिनवर कह सत्यार्थ॥ ५ ॥

ॐ ह्रीं उपगूहन अंगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सम्यक चारित से डिगे, धर्मी श्रावक संत।
उनमें दृढ़ जो कर रहे, स्थितिकरण वह अंग॥ ६ ॥

ॐ ह्रीं स्थितिकरण अंगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

साधर्मी प्रति जो लहें, गौ बछड़े सम प्रीत।
वात्सल्य अंग उसे कहे, यही जगत की रीत॥ ७ ॥

ॐ ह्रीं वात्सल्य अंगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पंच कल्याणक आदि से, धर्म ध्वजा फहराय।
यह प्रभावना अंग लहं, भव्य सहज सुख पाय॥ ८ ॥

ॐ ह्रीं प्रभावना अंगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आर्याछंद

देवगुरु श्रुत भक्ती, विनय सहित बढ़े निज शक्ती।
आत्म ज्योति जगे है पावें शिवधाम भवि सुखदा॥

दोहा

अष्ट अंग से सहित जो, सम्यग्दृष्टी जान।
अतीचार न लगे कभी, पहुंचे शिवपुर धाम॥ ९॥

ॐ ह्रीं अष्टांग सम्यग्दर्शनाय पूर्णार्घ्यं. . . ।

सम्यग्ज्ञान के आठ अर्घ्य

दोहा

कहें अक्षरों में ऋषी उच्चारण की शुद्धि।
व्यंजन शुद्धि उसे कहें जगे आत्म में बुद्धि॥ १॥

ॐ ह्रीं व्यंजन शुद्धये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

उसमें ही कहं अर्थ का शुद्ध कथन ऋषिराज।
अर्थ शुद्धि उसको कहें जब हो आत्म विकास॥ २॥

ॐ ह्रीं अर्थ शुद्धये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

इन दोनों की शुद्धि ही उभय शुद्धि कहलाय।
ज्ञानज्योति जब प्रगट हो शीघ्र मुक्ति पद पाय॥ ३॥

ॐ ह्रीं व्यंजन अर्थ उभय शुद्धये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मेघवृष्टि बिजली गिरें संक्रांति व अकाल।
पाठन पठन नहीं करें काल शुद्धि सुखकार॥ ४॥

ॐ ह्रीं काल शुद्धये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

एक शब्द भी जो पढ़े गुरु की रक्खें शान।
कभी न छिपावे नाम को, अनिह्नव गुण यह जान॥ ५॥

ॐ ह्रीं अनिह्नव शुद्धये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गुरु तथा ग्रंथादि की आदर कर बुधमान।
नहीं करें आसादना कहं ऋषिगुण बहुमान॥ ६॥

ॐ ह्रीं बहुमान शुद्धये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ग्रंथों के स्वाध्याय तक करे वस्तु का त्याग।
यही नियम उपधान विधि, आत्म सिद्धि के काज॥ ७॥

ॐ ह्रीं उपधान शुद्धये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गुरु की आज्ञा में रहें, झुक झुक करें प्रणाम।
ऐसा शिष्य विनम्र हो यही विनयगुण जान॥ ८॥

ॐ ह्रीं विनय शुद्धये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आठ भेद कहं ज्ञान के धारे जो बुधमान।
श्रुतकेवलि हो मुक्ति लहं ज्योति जगे उर आन॥ ९ ॥
ॐ ह्रीं अष्टविध सम्यग्ज्ञानाय पूर्णार्घ्यं।

चारित्र के तेरह अर्घ्य

सखी छंद

जीवों की रक्षा करते, नहिं प्राण किसी के हरते।
संपूर्ण जो हिंसा त्यागे, महाव्रती अहिंसा साधे॥ १ ॥
ॐ ह्रीं अहिंसा महाव्रताय अर्घ्यं....।
नहिं झूठ किसी से बोले जिन वचनामृत को घोले।
घातक नहि वचन उचारें मुनि सत्य महाव्रत धारें॥ २ ॥
ॐ ह्रीं सत्य महाव्रताय अर्घ्यं....।
जो गिरी पड़ी रक्खी है, वह वस्तु पराई ही है।
परवस्तु कभी नहि लेवें, अचौर्य महाव्रत सेवें॥ ३ ॥
ॐ ह्रीं अचौर्य महाव्रताय अर्घ्यं....।
वृद्धा युवती अरु बाला, मां बहन सुता सम पाला।
इन सबसे नाता तोड़ा, ले ब्रह्म महाव्रत चोला॥ ४ ॥
ॐ ह्रीं ब्रह्मचर्य महाव्रताय अर्घ्यं....।
परिग्रह अंतर बहिरंगा संपूर्ण तजे मुनि संगा।
उपकरण से ममत निवारे, महाव्रत अपरिग्रह धारें॥ ५ ॥
ॐ ह्रीं अपरिग्रह महाव्रताय अर्घ्यं....।
जो प्रासुक मार्ग से चाले, चार हाथ सुभूमि निहारे।
कर प्राणी मात्र सुरक्षा, ईर्या समिति में दक्षा॥ ६ ॥
ॐ ह्रीं ईर्यासमितये अर्घ्यं....।
चुगली व हंसी कर निंदा, अरु विकथादिक तज द्वंदा।
हित मित प्रिय वचन निकाले, भाषा समिति ऋषि पाले॥ ७ ॥
ॐ ह्रीं भाषा समितये अर्घ्यं....।
छयालिस दोषों से रहित है, नव कोटि विशुद्ध लहे है।
ऐसा भोजन मुनि भावें, तब एषणासमिति कहावे॥ ८ ॥
ॐ ह्रीं एषणा समितये अर्घ्यं....।
शुचि शास्त्र कमंडलु आदी, लहं संस्तर आदि विरागी।
पीछी से शोध के लेवे, आदाननिक्षेप समिति ये॥ ९ ॥
ॐ ह्रीं आदाननिक्षेपण समितये अर्घ्यं....।

जहां शुद्ध भूमि ऋषि देखें, वहां मल मूत्रादिक क्षेपें।
तन से सब ममत्व निवारा, व्युत्सर्ग समिति को पाला ॥ १० ॥
ॐ ह्रीं व्युसर्ग समितये अर्घ्यं. . . .।
विषयों से मन को रोकें तब आत्म ज्योति उद्योते।
मन चंचल वश में कीना, यति मनो गुप्ति में लीना ॥ ११ ॥
ॐ ह्रीं मनो गुप्तये अर्घ्यं. . . .।
ऋषि मुख से कुछ नहिं बोले तव हृदय के पट खोले।
नहिं वार्तालाप करे हैं, वचोगुप्ति को जभी धरे हैं ॥ १२ ॥
ॐ ह्रीं वचो गुप्तये अर्घ्यं. . . .।
नहिं आठों अंग हिलावें, तन से ममत्व विसरावें।
निज में उपयोग लगावें, कायगुप्ति साधु मन भावें ॥ १३ ॥
ॐ ह्रीं कायगुप्तये अर्घ्यं. . . .।
तेरह विध चारित पालें, चारित बिन मुक्ति न धारें।
उर में विरागता लावें, भवदधि से पार लगावें ॥ १४ ॥
ॐ ह्रीं तेरहविध चारित्राय पूर्णार्घ्यं।
जाप्य—ॐ ह्रीं श्री धर्मचक्राय नम:

समुच्चय जयमाला

दोहा

रत्नत्रय धारे बिना मुक्तिपुरी नहिं पाय।
श्रद्धा क्रिया विवेक बिन रोग कभी नहिं जाय॥

चाल—मेरा नम्र प्रणाम है. . . . .

मोक्षपुरी का धाम है रत्नत्रय के तीन रत्न को बारंबार प्रणाम है॥
सिद्धों की नित सिद्ध शिलापर, अंकित जिसका नाम है॥ टेक॥
इन लौकिक रत्नों में ही ऊपर से दिखती क्रांति है।
किन्तु अलौकिक रत्नों में ही अन्तरंग से कांति है॥
जो रत्नत्रय मूर्तिन बाधक बनकर साधक गम्य है।
जिसके बिन नहिं मुक्ति मिले नहिं इंद्रिय मन पर दम्य है।
जिसे मात्र शिवपुर की मंजिल तक पहुंचाना काम है॥सिद्धों० ॥१ ॥

भव्य मूर्ति ही जिसके बल पर आत्म ध्यान में लीन है।
योग साधना करके निश्चित निज में ही लव लीन है॥
निज स्वरूप में रमकर ही जो निज से ही निज पूर है।
बाह्य दृष्टि को तज करके सब निज गुण से भरपूर है।
रत्नत्रय से जो भूषित हैं वे रहते निष्काम हैं॥
सिद्धों की नित सिद्ध शिलापर, अंकित जिसका नाम है॥ २॥
मिथ्या दर्शन ज्ञान चरण ये ही तीनों दुख रूप हैं।
जिसके कारण विषयों में फंस, अरु मिलता भवकूप है।
एक मात्र रत्नत्रय से ही तिरे जगत के भूप हैं।
"अभयमती" कह भेष दिगंबर धारण कर निज रूप है।
राग द्वेष तजकर योगी जन लहें मुक्ति अभिराम है॥ सिद्धों० ॥ ३॥
निर्विकार बालक सम सुंदर भोग विषय प्रति हीन है।
निरारंभ निःशल्य रत्नाकर चिदानंद में लीन है।
अरु व्यवहार कुशल होकर भी सब विकल्प से दूर हैं।
शिवपथ दर्शक होकर भी अध्यातम रस से पूर हैं।
सम्यक दर्शन ज्ञान चरण ये ही तीनों शिवधाम हैं॥ सिद्धों० ॥ ४॥

दोहा

समकित ज्ञान चरित्र ये, कहें शुद्ध व्यवहार।
"अभयमती" निश्चय रतनत्रय निजरूप संभाल॥

ॐ ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय जयमाला पूर्णार्घ्यं।

शांतये शांतिधारा, पुष्पांजलिः।

हरिगीता छंद

जो भव्य श्रद्धा भक्ति से रत्नत्रय गुण पूजन करें।
वे ऋद्धि सिद्धि समृद्धि आदिक सर्व सुख निश्चित धरें॥
फिर आत्म संपत्ती को पाकर सहज आत्मिक सुख जगे।
शिव महल में आवास कर निज आत्म ज्योती जगमगे॥

॥ इत्याशीर्वादः ॥

पूजा नं०–४

चैतन्य षट् गुण पूजा

ॐ

दोहा—स्थापना

चिद् विलास चिद् ब्रह्ममय तीनलोक में सार।
चिदानंद परमातमा नमहूं त्रियोग संभार॥
अनुभव कर मैं आप में मेरे उर के माहिं।
राग द्वेष की कल्पना कभी भी उपजे नाहिं॥

ॐ ह्रीं चैतन्य गुण समूह ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।
ॐ ह्रीं चैतन्य गुण समूह ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।
ॐ ह्रीं चैतन्य गुण समूह ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं।

वीर छंद

अनंत काल से जग में मैंने मिथ्यापन में सुख माना।
आतमरूपी परमज्योतिनिधि को अब तक न कभी जाना॥
शाश्वत सुख की प्राप्ति हेतु, चैतन्य गुणों की भक्ति करूं।
सदा सुशोभित ज्ञानकिरण रवि, आत्म कमल प्रद्योत करूं॥ १॥

ॐ ह्रीं चैतन्य गुणेभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

संसार ताप के नाश हेतु श्रीखंड दिव्य शुभ गंध लिया।
विषयों में फंसकर अब तक मैं नहिं चित्स्वरूप को प्राप्त किया॥
॥ शाश्वत०॥

ॐ ह्रीं चैतन्य गुणेभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा॥ २॥

पंचम गति बिन घटी यंत्र सम, चतुर्गती में भ्रमण किया।
अक्षय पद के निमित्त शुद्ध मैं तंदुल धवल अखंड लिया॥
॥ शाश्वत०॥

ॐ ह्रीं चैतन्य गुणेभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा॥ ३॥

इत्र फुलेल सुगंधित द्रव्यों से तन खूब सजाया है।
मदनवाण से विंध करके, नहिं आतम नवनिधि पाया है॥शाश्वत०।

ॐ ह्रीं चैतन्य गुणेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा॥ ४॥

सुंदर पावन व्यंजन से, तृष्णा ज्वाला नहि मिटे कभी।
क्षुधा नाशहितु षट रस मिश्रित बहु पकवान बनाय सभी॥
शाश्वत सुख की प्राप्ति हेतु, चैतन्य गुणों की भक्ति करुं।
सदा सुशोभित ज्ञानकिरण रवि, आत्म कमल प्रद्योत करूं॥
ॐ ह्रीं चैतन्य गुणेभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ ५॥
इस लौकिक दीपक से न मिटे अज्ञान रूप मय अंधियारा।
निज ज्ञान अलौकिक दीपक से, मिथ्यातम मोह नशे सारा॥शाश्वत०।
ॐ ह्रीं चैतन्य गुणेभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा॥ ६॥
कर्मों के चक्कर में फंसकर मैं, चौरासी लख योनि भ्रमा।
चंदन अरु कर्पूर मिश्र ले, शुद्ध दशांगी धूप घना॥ शाश्वत०॥
ॐ ह्रीं चैतन्य गुणेभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा॥ ७॥
व्रत तप संयम चारित बिन, अब तक पंचम गति नही लहे।
श्री फल पिस्ता दाख छुहारे, विविध रूप फल सभी लहे॥ शाश्वत०।
ॐ ह्रीं चैतन्य गुणेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा॥ ८॥
जल फल आदिक शुद्ध द्रव्य लेकर के कंचन थाल भरूं।
आत्म शांतिहितु निज के द्वारा निज में ही नित रमण करूं॥शाश्वत०।
ॐ ह्रीं चैतन्य गुणेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ ९॥

दोहा

चेतन रूप समुद्र में बहे ज्ञान की धार।
हृदय पात्र में मैं भरूं, मिले जु शांति अपार॥
शांतये शांतिधारा।

दोहा

स्याद्वाद की वाटिका, गुण रूपी बहु फूल।
पुष्पांजलि अर्पण करूं, मिटे हृदय की शूल॥
दिव्य पुष्पांजलिः।

चैतन्य गुण के ६ अर्घ्य

तर्ज— बहारों फूल बरसाओ मेरा.....
स्वयंभू जीव उपयोगी स्वभावी शुद्ध रस भोगी।
स्वतनु परिमाण संसारी विज्ञानी सिद्ध रस योगी॥

चिदंबर ज्ञान धन को छोड़कर कुछ भी नहीं मेरा।
परं शिव वीतरागी है यही अस्तित्व गुण मेरा॥ १ ॥

ॐ.ह्रीं अस्तित्वगुणाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शिवं शुद्ध बुद्ध ब्रह्मा है न कर्त्ता कर्म कारक है।
न भ्राता बंधु संगम है न स्वेच्छा अंग बंधन है॥
चिदानंदी यही है आतमा जग में शरण मेरा।
परम शिव वीतरागी है यही वस्तुत्व गुण मेरा॥ २ ॥

ॐ ह्रीं वस्तुत्वगुणाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

न स्वामी भृत्य मानुष देव मृत्यु जन्मचिंता है।
न बंधो मोक्ष व्याधि शोक क्षुद्रो भीत ममता है॥
सहज आनंद गुण बहु रूप है जग में हितू मेरा।
परम शिव वीतरागी है यही अप्रमेयत्व गुण मेरा॥ ३ ॥

ॐ ह्रीं अप्रमेयत्वगुणाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

न गुरु भी है न लघु भी है सदा निज रूप गुण जानो।
निरालंबी निरातंकी निरूपम गुण को पहिचानो।
सुनिस्पृह शुद्ध अकलंकी नही जग में कोई मेरा।
परम शिव वीतरागी है यही अगुरुलघुत्व गुण मेरा॥ ४ ॥

ॐ ह्रीं अगुरुलघुत्वगुणाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

न भोग प्रमोद स्वेद न खेद वर्णन योग मुद्रा है।
न हस्त व पाद चक्षु न कर्ण वस्त्र न घ्राण जिव्हा है॥
यही चैतन्य रत्नाकर अलौकिक गुणनिधी मेरा।
परम शिव वीतरागी है यही अमूर्तत्व गुण मेरा॥ ५ ॥

ॐ ह्रीं अमूर्त्तत्वगुणाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

न पुन अरु पाप रागद्वेष मोह व शोक तन्द्रा है,
न बाल व वृद्ध नीच व मूढ़ यौवन रोग निद्रा है।
है चेतनमूर्ति आतम ज्योति शाश्वत है नमन मेरा,
परम शिव वीतरागी है यही चैतन्य गुण मेरा॥ ६ ॥

ॐ ह्रीं चेतनत्वगुणाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(रोला छंद)

निज के द्वारा निज में चेतन करे बसेरा।
निज गुण में कल्लोल करें निज में ही डेरा॥
निज स्वरूप को जाने बिन करता भव फेरा।
करें निजातम अनुभव हो शिवपुर में मेला॥

पद्धरि छंद

जय जय चेतन षट गुण महान तुमरी अतिशय महिमा बखान।
तुम सिद्धशिला पर शोभमान तुमरे अनंत गुण हैं महान॥

ॐ ह्रीं षट् गुण सहित चैतन्य गुणेभ्यः पूर्णार्घ्यं।

जाप्य—ॐ ह्रीं श्री धर्मचक्राय नमः।

जयमाला

सोरठा

साध्य व साधक रूप, निराकारे चिदरूप हैं।
गाऊं गुण जयमाल, निज अनुभव गुण में लसे॥

तर्ज— कोई तन दुःखी कोई मन दुःखी.....

रे चेत रे हे चेतन! शाश्वत शरण यही।
तेरे को छोड़ करके दूजा कोई नहीं॥ टेक॥
निज को ही निज में भजकर पर कल्पना तजे।
सम्यक्त्व रत्न पाकर मिथ्यात्व से भगे॥ १॥
तेरा ही ज्ञान तुझमें तारण तरण सही।
शांति का वास जिसमें भ्रांति का दुख नहीं॥ २॥
धन मित्र काच कांचन ये सब सुलभ अरे।
चित पिंड ज्ञान धन ही दुर्लभ है चेत रे॥ ३॥
निज सिंधु में ही रमकर निज दृष्टि मोड़ ले।
मानुष रतन को पाकर अपने में खोज ले॥ ४॥
जिनने भी सिद्ध पाया आश्रय तेरा यही।
तेरी ही भक्ति में पल बीते अरज यही॥ ५॥

तू ध्येय तू ही ध्याता तू ध्यान सहचरी।
तू ज्ञेय तू ही ज्ञाता विज्ञान रसभरी॥ ६॥
तू चेतना चिदेश चिद्भाव पिंड रे।
भावों से सर्व न्यारा तीनों अभिन्न हैं॥ ७॥
तू ही है साध्य साधक चिद् रूप ब्रह्म रे।
अंतः अचल अबाधक रत्नत्रयी धरे॥ ८॥
तू सर्वगत विरत चित प्रिय आत्म रत गुणी।
गतियों से भिन्न प्यारा चैतन्य गुणमणी॥ ९॥
जब तक न मुक्ति मिलती निज भक्ति कर यही।
भजले "अभयमती" निज शिव श्रेय धर सही॥ १०॥

दोहा

चेतन निज गुण नहिं तजे, परस्वरूप नहिं लेष।
जितने सिद्ध हुये सभी लहें चिदंबर भेष॥

ॐ ह्रीं षट् गुण सहित चेतन गुणेभ्यः जयमालापूर्णार्घ्यं।

शांतये शांतिधारा, पुष्पांजलिः।

गीता छंद

जो भव्य श्रद्धा भाव से चैतन्य गुण को पूजते।
वे मोक्ष लक्ष्मी प्राप्त कर, निज गुण में ही अवलोकते॥
फिर कभी नहिं भव भ्रमण कर, मुक्ति यात्रा को चलें।
"अभयमती" निज आत्मबल पर शिवपुरी मंजिल धरें॥

॥ इत्याशीर्वादः ॥

पूजा नं०—५

दशलक्षण धर्म पूजा

कवित्त छन्द—स्थापना

उत्तम क्षमा मार्दव आर्जव सत्य शौच संयम तप त्याग।
आकिंचन अरु ब्रह्मचर्य ये ही दश लक्षण धर्म सु साध॥
चहुँगति के दुख से निकालकर, मुक्तिपुरी में पहुँचावे।
अरु निज शुद्ध स्वभावभूत, मैं करूं थापना मन भावे॥

ॐ ह्रीं उत्तम क्षमादि दशलक्षण धर्म ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।
ॐ ह्रीं उत्तम क्षमादि दशलक्षण धर्म ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।
ॐ ह्रीं उत्तम क्षमादि दशलक्षण धर्म ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं।

चौपाई आचलीबद्ध

शीतल सुरभि सुनीर चढ़ाय जन्मजरामृतु रोग नशाय।
महा सुख होय, पाले धर्म परम सुख होय॥
दसों धर्म हैं जग में सार, दश लक्षण पूजूं उर धार।
महा सुख होय, पाले धर्म परम सुख होय॥

ॐ ह्रीं उत्तम क्षमा मार्दव, आर्जव सत्य शौच संयम तप त्याग आकिंचन्य ब्रह्मचर्य दसलक्षण धर्मेभ्यो जलं निर्वपामीति स्वाहा॥ १॥

चन्दन केसर संग घिसाय, भव आताप कलेश मिटाय।
महा सुख होय, पाले धर्म परम सुख होय॥ दसों०॥

ॐ ह्रीं उत्तम क्षमादि दशलक्षण धर्मेभ्यो चंदनं०॥ २॥

चन्द्र किरण सम अक्षत लाय, शाश्वत सुख हित पुंज चढाय।
महा सुख होय, पालें धर्म परम सुख होय॥ दसों०॥

ॐ ह्रीं उत्तम क्षमादि दशलक्षण धर्मेभ्यो अक्षय पद प्राप्तये अक्षतं०॥ ३॥

हेम रत्नमय कुसुम मंगाय, कामंवाण दुंख दूर कराय।
महा सुख होय, पालें धर्म परम सुख होय॥ दसों०॥

ॐ ह्रीं उत्तम क्षमादि दशलक्षण धर्मेभ्यो पुष्पं०॥ ४॥

मोदकादि नैवेद्य चढ़ाय, क्षुधा आदि सब रोग नशाय।
महा सुख होय, पालें धर्म परम सुख होय॥ दसों० ॥
ॐ ह्रीं उत्तम क्षमादि दशलक्षण धर्मेभ्यो नैवेद्यं० ॥ ५ ॥
रतन अमोलक दीप जलाय, मोह महातम शीघ्र नशाय।
महा सुख होय, पालें धर्म परम सुख होय॥ दसों० ॥
ॐ ह्रीं उत्तम क्षमादि दशलक्षण धर्मेभ्यो दीपं० ॥ ६ ॥
धूप पवित्र सुगन्ध खिवाय, अष्ट कर्म को शीघ्र उड़ाय।
महा सुख होय, पालें धर्म परम सुख होय॥ दसों० ॥
ॐ ह्रीं उत्तम क्षमादि दशलक्षण धर्मेभ्यो धूपं० ॥ ७ ॥
स्वर्ण थाल में फल भरवाय, मोक्ष प्राप्ति हित शीघ्र चढ़ाय।
महा सुख होय, पालें धर्म परम सुख होय॥ दसों० ॥
ॐ ह्रीं उत्तम क्षमादि दशलक्षण धर्मेभ्यो फलं० ॥ ८ ॥
अष्ट दरब मय अर्घ चढाय, आत्मिक सुख जब शीघ्र लहाय।
महा सुख होय, पालें धर्म परम सुख होय॥ दसों० ॥
ॐ ह्रीं उत्तम क्षमादि दशलक्षण धर्मेभ्यो अर्घ्यं० ॥ ९ ॥

चौपाई

जो भी आतम ध्यान लगाय, कर्म बंध उसके कट जाय।
मुक्ति श्री कन्या परणाय, धार देत दसधर्म लहाय॥

शांतये शांतिधारा।

चहुंगति के दुख से बच जाय, भव समुद्र का अंत लहाय।
पुष्पांजलि से रोग नशाय, जो दशलक्षण धर्म को ध्याय॥

दिव्य पुष्पांजलिः।

दश धर्मों के अर्घ

दोहा

क्रोध करें जो नर कभी, वह हो गुण से रिक्त।
उत्तम क्षमा समान बिन, कोई न जग में मित्र॥

मुक्तक छन्द

ज्यों चंचल जलधि तरंगों से जल जन्तु सभी कंप जाते हैं।
त्यों भावों की लहरों से ही, प्राणी चउगति फंस जाते हैं॥

है क्षमाशील मरुभूति कमठ का, क्रोध महा दुखदाई है।
ऋषि संत ही "उत्तमक्षमा" भाव धारणकर शिव सुखपाई है॥
ॐ ह्रीं उत्तम क्षमा धर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मान महा विष रूप है, रहे कुगति में वास।
कोमल परिणामी सदा, लहें, आत्म विश्वास॥

ज्यों फल फूलों से सहित वृक्ष अरु कुल भूषित विद्वान झुकें।
त्यों शुष्क काष्ठ जड़ बांस वृक्ष अरु मूर्ख पुरुष नहिं कभी झुकें॥
अभिमान युक्त थे भरत चक्रि, अरु स्वाभिमान युत बाहुबली।
"उत्तम मार्दव गुण" धार लिया, जब बने आत्म निज कर्मबली॥
ॐ ह्रीं उत्तम मार्दव धर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कपट छिपाये ना छिपे, छिपे न मोटा भाग।
सरल स्वभावी जीव ही, मुक्ति पंथ को साध॥

जो नारिकेल सम सज्जन चित् अरु दुर्जन बोर समान दिखे।
दोनों में अन्तर इतना ही, जितना पृथ्वी आकाश लखे॥
संपूर्ण कपट को तज करके, ऋषि मानतुंग सम सरल बनें।
"उत्तम आर्जव" गुण धारणकर, अरिहन्तसिद्ध भगवान बनें॥
ॐ ह्रीं उत्तम आर्जव धर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सत्य समान न धर्म है, नहीं झूठ सम पाप।
ध्यान समान न हित कभी, नहीं ज्ञान सम आप॥

श्रीराम सु दशरथ हरिश्चन्द्र सब वचनों में दृढ़ रहे सदा।
अरु सत्यघोष पर्वत राजा वसुदेव झूठ नहिं तजे कदा॥
ऋषि समंतभद्र भस्मक व्याधि से, भेष छोड़ नहिं सत्य तजा।
बिन "उत्तम सत्य धर्म" के भविजन, शिवपुर को न कभी पहुँचा॥
ॐ ह्रीं उत्तम सत्य धर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

राग पाप का बीज है, लोभ पाप का बाप।
वीतराग तप धर्म है, शौच करे मन साफ॥

संतोष रूप समता जल से, ज्यों तृष्णा रूपी मल धोता।
त्यों आत्म शुद्ध भावों द्वारा नित अन्तरंग कल्मष खोता॥
इक अशुचि भाव के कारण ही, कौरव पांडव का युद्ध मचा।
इक "शौच धर्म" को लेकर ही, श्री कुंदकुंद अध्यात्म रचा॥
ॐ ह्रीं उत्तम शौच धर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

संयम रत्न संभाल कर, विषय चोर कर दूर।
ये ही जग में सार है, इस बिन जीवन धूल॥
पंचेंद्रिय मन को वश करके, षट कायिक की रक्षा करता।
इंद्रिय अरु प्राणी संयमधर जो, चक्रवर्ति वह ही बनता॥
किंपाक सदृश ये विषय भोग, इनसे मिलता दुख भाई है।
तीर्थंकर सम "संयमगुण" से, भवि संत वरें शिव नारी है॥
ॐ ह्रीं उत्तम संयम धर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तप चाहत सुर इन्द्र गण, तीर्थंकर तप धार।
तप बिन कर्म नहीं कटे, यथाशक्ति तप धार॥
ज्यों सोलह तावों के द्वारा असली सोना बन जाता है।
त्यों तप रूपी अग्नी द्वारा ही, आत्म ज्योति प्रगटाता है॥
ऋषि पुष्पदन्त अरु भूतबली ने, ज्ञान ज्योति जगाया था।
श्री भद्रबाहु अरु चन्द्रगुप्त ने "उत्तम तप" अपनाया था॥
ॐ ह्रीं उत्तम तप धर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दान चार विध रूप में, दियो चतुर्विध संघ।
ये ही जग में सार है, मिलो मनुष भव अंग॥
जो निज पर के कल्याण हेतु, नित चउ प्रकार शुभ दान लहे।
चौबीस परिग्रह विषय भोग तज, यह ही उत्तम त्याग कहे॥
जितने मुक्ति गये जायेंगे, सब कहें त्याग की महिमा को।
चक्रवर्ति तीर्थंकर भी लहँ, "त्याग धर्म" की गरिमा को॥
ॐ ह्रीं उत्तम त्याग धर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

उत्तम आकिंचन लहें, ऋषी संत मुनिराज।
निज स्वरूप में रमण कर, आत्म सिद्धि के काज॥
जग में नहिं किंचित् मेरा है, नहिं मेरा है निश्चित जानो।
बस चेतन ही बस तेरा है, निज के स्वभाव को पहिचानो॥
"प्रद्युम्नकुंवर" अरु "अभयकुंवर" ने वैभव आदिक त्याग दिया।
"उत्तम आकिंचन गुण" धारणकर, संत सहजसुख प्राप्त किया॥
ॐ ह्रीं उत्तम आकिंचन्य धर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सहस अठारह शीलव्रत, पालें नित भवि संत।
आत्म ब्रह्म में रमण कर, लहें मुक्ति श्री कंत॥
जो सुभट पराक्रमशाली हैं, वह कामदेव जग वश कीना।
पर तीर्थंकर ऋषि संत साधु, जिसको परास्त झट कर दीना॥
सब "ब्रह्मचर्य" की महिमा यह, विशल्या व्रत ले असिधारा।
सच यह ही उत्तम ब्रह्मचर्य, जो पालें जग से हो न्यारा॥
ॐ ह्रीं उत्तम ब्रह्मचर्य धर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चौपाई

वह ही चक्रवर्ती पदधार तीनलोक के सुखविस्तार।
वह ही रागद्वेष नशाय, जो दशलक्षण धर्म लहाय॥
ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादि दसलक्षण धर्मेभ्यः पूर्णार्घ्यं. . . .।
जाप्य—ॐ ह्रीं श्री धर्मचक्राय नमः

जयमाला

दोहा

दसलक्षण निज धर्म को, पूजूं मन वच काय।
गाऊं गुण जयमालिका, अजर अमर पद पाय॥

शेरछन्द

उत्तम क्षमा को धारकर, जो क्रोध को तजा।
न शत्रु कुछ भी कर सके, कोऊ न दे दगा॥
मार्दव विनय को धारकर, जो मान निवारा।
आर्जव कपट मिटाके, सरल भाव सुधारा॥ १॥
अरु झूठ वचन तज के, उत्तम सत्य व्रत पाला।
वो भव भ्रमण का अन्त कर, निज रूप निहारा॥
जो लोभ त्याग करके, उत्तम शौच व्रत धारा।
संतोषमय अमृत को पी, आतम को सुधारा॥ २॥
संयम रतन जो पालकर, नर भव सफल किया।
इच्छाओं का निरोध कर, तप में तपन किया॥
अरु त्याग उत्तम करके, भोग भूमि में गया।
वो क्रम से स्वर्ग मुक्ति पद को धार ले जिया॥ ३॥

उत्तम अकिंचन व्रत धरे, जो संत दुलारा।
वो भवि परम समाधि में हो लीन सितारा॥
उत्तम सु ब्रह्मचर्य व्रत जो धार ले प्यारा।
वो आत्म ब्रह्म में रमणकर, मुक्ति को धारा॥ ४॥
दसलक्षण धर्म को सदा हम शीश नमायें।
ऋषि साधुगण निज सौख्य हेतु ध्यान लगावें॥
भविजीव धर्म धारके बहुपुण्य कमावें।
परमानंद मुक्ति हेतु सर्वअर्घ चढ़ावें॥ ५॥
कोई प्रभूढिग आकरके नित पुत्र धन चहें।
कोई प्रभू दरबार में सब संपदा जहें॥
कोई भिखारी बनके प्रभु वरदान को चहें।
कोई प्रभू की भक्ति कर दसधर्म को लहें॥ ६॥

सोरठा

दसलक्षणमय धर्म, निज में धारण कर सदा।
"अभयमती" हो मुक्त, नहीं रुले संसार में॥

ॐ ह्रीं उत्तम क्षमा मार्दव, आर्जव, सत्य, शौच, संयम, तपस्त्यागाकिंचन्य ब्रह्मचर्य दसलक्षणधर्मेभ्य: जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
शांतये शांतिधारा। पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

हरिगीतिका छंद

सारी प्रजा नित सुख लहे, नृप धर्म युत बल शालि हो।
जल वृष्टि हो नित समय पर, नहिं व्याधियों का जोर हो॥
चोरी न जारी हो कभी दुष्काल भारी नहिं रहे।
सब विश्व लहँ जिनधर्म को, नित घड़ी पल सुखमय लहे॥

कुंडलियां

पुण्य दसलक्षण धर्म यह देता शुभ संदेश।
समता शुचिता सरलता सदा सादगी भेष॥
सदा सादगी भेष क्षमा उर में नित धरना।
मार्दव आर्जव सत्य शौच संयम तप करना॥
त्याग आकिंचन ब्रह्मचर्य दसलक्षण भूषण।
जिन प्रभु के माहात्म्य से सबको शुभ पर्यूषण॥

॥ इत्याशीर्वाद: पुष्पांजलिं क्षिपेत् ॥

पूजा नं०—६

सिद्ध पूजा

दोहा—स्थापना

तीनलोक के ईश का लोक शिखर पर वास।
जिनका गुण चिंतन करूं जब हो आत्मविकास॥

मुक्तक छंद

परम ब्रह्म परमात्मनिरंजन परमेष्ठी जिनसिद्ध कहें।
अष्ट कर्म को शीघ्र नाश कर, आठ गुणों से शोभ रहे॥
सिद्ध शिला पर जो अनंतजिन, शाश्वत सुख में रमण करें।
उन सिद्धों को नमस्कार कर अर्चन कर सब पाप हरें॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं सिद्ध परमेष्ठिन् ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।
ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं सिद्ध परमेष्ठिन् ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।
ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं सिद्ध परमेष्ठिन् ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं।

चाल—सरस्वती पूजन (त्रिभंगी छंद)

क्षीरोदधि का जल शुद्ध समुज्ज्वल स्वर्ण कलश कर पूर्ण भरें।
जन्म मृत्यु हर रोग निवारण जिनपद चरणन धार करें॥
जो सिद्ध स्वरूपी अचल अरूपी आतम रूपी दोष हरें।
निज गुण अवलोकी कर्म प्रलोपी नाथ त्रिलोकी मुक्ति वरें॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं सिद्धपरमेष्ठिभ्यो जन्मजरामृत्यु विनाशनाय जलं०।

कर्पूर सुंचदन, गंध सुरभितन, जन जन रंजन सुखकारी।
भव ताप निकंदन, भव भय भंजन निज गुण मंडन दुखहारी॥
॥ जो सिद्ध० ॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं सिद्धपरमेष्ठिभ्यो संसार ताप विनाशनाय चंदनं०।

अक्षय सुखकारा, शशि सम प्यारा, तंदुल न्यारा ले आयो।
जिनपद ढिग न्यारा, पुंज निराला, अक्षत प्यारा चढ़वायो ॥
॥ जो सिद्ध० ॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं सिद्धपरमेष्ठिभ्यो अक्षय पद प्राप्तये अक्षतं० ।

बहु पुष्प सुगंधित कमल अखंडित महक दशोदिश मनहारी।
जिन चरण सुसज्जित, मनमथ मंजित जन जन रंजित सुखकारी ॥
॥ जो सिद्ध० ॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं सिद्धपरमेष्ठिभ्यो कामवाणविध्वंसनाय पुष्पं० ।

पकवान निरंजन षटरस व्यंजन नेवज कंचन थाल भरो।
बहु क्षुधा निवारण, रोगविदारण जिनवर चरणन भेंट धरो ॥
॥ जो सिद्ध० ॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं सिद्धपरमेष्ठिभ्यो क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं० ।

मिथ्यातम नाशे , दीप प्रकाशे , मोह विनाशे सुखरासे।
अरु ज्ञान विकासे पाप प्रणाशे, जिन गुण गाते निज भासे ॥
॥ जो सिद्ध० ॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं सिद्धपरमेष्ठिभ्यो मोहांधकार विनाशनाय दीपं० ।

बहु धूप दसांगी, गंध सुगंधी, बहुविधरंगी खेवत हैं।
सब कर्म विभंगी, नशे त्रिभंगी, आत्म विरंगी सेवत हैं ॥जो सिद्ध० ।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं सिद्धपरमेष्ठिभ्यो अष्टकर्म दहनाय धूपं० ।

बहु दाख छुहारे, पिस्ता प्यारे, श्रीफल न्यारे ले आयो।
शिवफल हित सारे, जिनवर लारे, फल बहु न्यारे चढ़वायो ॥
॥ जो सिद्ध० ॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं सिद्धपरमेष्ठिभ्यो मोक्षफल प्राप्तये फलं० ।

जल चंदन अक्षत, पुष्प सुनेवज दीप धूप फल लाय धरे।
जिनवर ढिग आवत द्रव्य चढ़ावत, फल बहु पावत पांय पड़े ॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं सिद्धपरमेष्ठिभ्यो अनर्घ्य पद प्राप्तये अर्घ्यं० ।

दोहा

प्रभु की महिमा अगम है कोई न पावे पार।
"शांतिधारा" करत ही, शांति मिले अपार ॥
शांतये शांतिधारा।

कल्पवृक्ष के पुष्प बहु, जुही चमेली लाय।
जिन पद पुष्पांजलि करुं, मनवांछित फल पाय॥
दिव्य पुष्पांजलिः।

सिद्धों के दस गुण के दस अर्घ्य

पद्धरि छंद

प्रभु कर्म मोहनी करें नाश, सम्यक्त्व लहें आतम विकास।
तुम चिदानंद आनंद माय, निज अनुभव रस में नहिं समाय॥
ॐ ह्रीं सम्यक्त्वाय नमः अर्घ्यं०।

प्रभु ज्ञानावरण विनाश कीन गुण ज्ञान जभी प्रगटे नवीन।
अरु ज्ञान ज्ञेय ज्ञाता कहाय, निजध्यान ध्येय ध्याता लहाय॥
ॐ ह्रीं अनंतज्ञानाय नमः अर्घ्यं०।

तुम दर्शनावरण करें विनाश, जब दर्शन गुण करता प्रकाश।
जब केशलोंच कर धरें ध्यान, सब कर्म नाश लहं मुक्तिधाम॥
ॐ ह्रीं अनंत दर्शनाय नमः अर्घ्यं०।

कर अंतराय क्षय कर्म हंत, प्रगटे अनंत बल जभी संत।
त्रैलोक्य पूज्य शत इंद्र वंद्य, संपूर्ण विश्व में हो अलंघ्य॥
ॐ ह्रीं अनंतवीर्याय नमः अर्घ्यं०।

जब नाम कर्म क्षय करत सोय, सूक्ष्मत्व सभी गुण प्रगट होय।
फिर भी स्वभाव में हो विलीन, नहिं अन्य रूप होवें मलीन॥
ॐ ह्रीं सूक्ष्मत्वाय नमः अर्घ्यं०।

तुम आयु कर्म क्षय करत शीघ्र, तब अवगाहन गुणप्रगट वीर।
अवकाश दान में हो समर्थ, जब ही सब सिद्ध हुये अनंत॥
ॐ ह्रीं अवगाहनत्वाय नमः अर्घ्यं०।

जब गोत्र कर्म क्षय करत संत, तब अगुरुलघु उपजे महंत।
फिर भी सिद्धों में गुण अनंत, जो सदा रूप निज में लसंत॥
ॐ ह्रीं अगुरुलघुत्वाय नमः अर्घ्यं०।

जब कर्म वेदनी नाश कीन, अव्याबाधक सुख में विलीन।
ये आठ कर्म दह शीघ्र संत, गुण आठ जभी प्रगटे महंत॥
ॐ ह्रीं अव्याबाधत्वाय नमः अर्घ्यं०।

जो सिद्ध स्वसंवेदन स्वरूप, नहिं नानाविध इक शुद्ध रूप।
स्वाश्रय से मुक्ति लहें अनूप, हो वीतराग सर्वज्ञ भूप॥
ॐ ह्रीं स्वसंवेदनाय नमः अर्घ्यं०।
निर्दोष निरंजन निष्कलंक, स्वस्वरूप प्रतपन तपे जु संत।
हो धन्य धन्य शिव वीतराग, प्रभुजी तुमरी महिमा अपार॥
ॐ ह्रीं स्वरूपप्रतपन तपसे नमः अर्घ्यं०।
जो सिद्ध गुणों को भजे वीर, वे भवसमुद्र से तिरे शीघ्र।
मैं भी सिद्धों को भजूं नित्य, जिससे होऊं जग से विमुक्त॥
ॐ ह्रीं दसगुणसहित सिद्धेभ्यो पूर्णार्घ्यं०।
जाप्य—ॐ ह्रीं श्री धर्मचक्राय नमः

जयमाला

दोहा

सकल सिद्ध परमात्मा, शुद्ध निरंजन रूप।
गाऊं प्रभु जयमालिका, सिद्ध चक्र शिव भूप॥

मुक्तक छंद

अरे बंधुवो! सिद्धों का पद, सच्चा पथ बतलाता है।
जिओ और जीने दो सबको, यही पाठ सिखलाता है॥
नीर क्षीर सम भिन्न विवेचन, कर मिथ्यात्व भगाता है।
सम्यक ज्योति जगे घट घट में, श्रद्धा गुण प्रगटाता है॥ १॥
आदि हीन अरु अंत हीन, जो नय प्रमाण से अचल रहा।
निश्चय और व्यवहार कथन कर, स्याद्वादमय शोभ रहा॥
जो निमित्त अरु उपादान का, कथन अपेक्षित रूप लहा।
ज्ञाता दृष्टा बन करके भी, मूल तत्व को नहीं जहा॥ २॥
द्वादशांग वाणी से भूषित, शांति प्रदर्शन ज्ञान महा।
सहजरूप से चम चम चम चम करके नित दैदीप्य रहा॥
लवण डली के बिना सुव्यंजन नीरस ही नीरस दीखे।
त्यों चेतन रस के बिन सब गुण ही नीरस नीरस दीखें॥ ३॥
पद पद पर बहु पद लेकर भी, पद पद पर दुख रूप लहे।
सिद्ध पदों के बिना सभी पद स्वयं निरापद रूप कहे॥

जिसके सम्मुख सब पद डिगते ऐसा सिद्धों का पद सच्चा।
अतः श्रेय है यही परमपद, कहते सब बच्चा बच्चा ॥ ४ ॥
मात्र ज्ञान को रट करके भी ज्ञान हीन निश्चय डूबे।
मात्र चरित में रम करके भी, चरित हीन निश्चय डूबे॥
ज्ञान चरित सम्यक्त्व सहित, इन तीन रत्न को धार लिया।
"अभयमती" निज में ही रमके, सिद्धों का पद प्राप्त किया ॥ ५ ॥

घत्ता

जय सिद्ध अनंता शिवपुर संता, भव भय हंता सुखकारी।
हम पूजें संता, जय शिवकंता, सुखी महंता दुखहारी॥

ॐ ह्रीं णमोसिद्धाणं सिद्ध परमेष्ठिभ्यो जयमाला महार्घ्यं० ।

शातंये शांतिधारा, पुष्पांजलिः ।

सुगीतिकाछंद

श्री सिद्ध चक्र अनंत की नित, जो भविक पूजा करें।
वे आत्म शांति लहें सहज संसार दुख से झट तिरें॥
लौकिक सुखों को प्राप्त कर अरु मुक्ति लक्ष्मी को वरें।
फिर "अभयमती" आर्हंत्य लक्ष्मी प्राप्त कर शिवपुर धरें॥

कुंडलियाँ

मैनासुंदरि ने रचा सिद्धचक्र का पाठ।
गंधोदक छिड़का जभी हो श्रीपाल सुठाठ॥
हो श्रीपालसुठाठ हुई है कंचन काया।
साथ में सप्तशतक सेवक का रोग नशाया॥
भाग्य प्रबल "निर्भय होकर पुरुषार्थ जगाया।
सिद्ध चक्र से संकट सर्व अरिष्ट पलाया॥

॥ इत्याशीर्वादः ॥

पूजा नं०—७

श्री पंचपरमेष्ठी समुच्चय पूजा

स्थापना—अडिल्लछंद

श्रेष्ठ देव अरिहंत सिद्ध आचार्य जी।
उपाध्याय अरु साधु संत ऋषिराज जी॥
पंचपरमेष्ठी तारण तरण जिहाज जी।
आह्वानन कर पूजूं मन वच काय जी॥

ॐ ह्रीं पंच परमेष्ठिन् ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।
ॐ ह्रीं पंच परमेष्ठिन् ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।
ॐ ह्रीं पंच परमेष्ठिन् ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं।

अष्टपदी छंद

चाल—नंदीश्वर श्रीजिनधाम

जल शीतल स्वच्छ मंगाय, कंचन झारि भरूं।
शुभ धार देत सुखपाय, जामन मरण हरूं॥
श्री पंचपरमेष्ठी देव, भक्ति सहित ध्याऊँ।
पूजूं मन वच तन सेव, मुक्ति सहज पाऊँ॥ १॥

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्यो जन्म जरामृत्युविनाशनाय जलं०।

मलयागिरि चंदन लाय, केसर मिश्र घसूं।
चरणन में शीघ्र लगाय, भव आताप नशूं॥ श्री पंच०॥ २॥

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्यो संसार ताप विनाशनाय चंदनं०॥

मोती सम शालि मंगाय, अक्षत पुंज भरूँ।
पावन अक्षय पद पाय, सब संकल्प हरूँ॥ श्रीपंच०॥ ३॥

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्यो अक्षय पद प्राप्तये अक्षतं०॥

शुभ कंचन पुष्प मंगाय, नाना विध न्यारे।
भजूं जिनवर मन वच काय, काम सुभट हारे॥ श्रीपंच०॥ ४॥

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्यो कामवाणविनाशनाय पुष्पं०॥

व्यंजन बहु भांति सजाय, रत्नन थाल भरूं।
इंद्रिय मन शमन कराय, नेवज भेंट करूं॥
श्री पंचपरमेष्ठी देव, भक्ति सहित ध्याऊँ।
पूजूं मन वच तन सेव, मुक्ति सहज पाऊँ॥ ५॥

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्यो क्षुधा रोग निवारणाय नैवेद्यं० ॥

दीपक की ज्योति जलाय, मोह निशा विनशे।
निज अनुपम ज्योति जगाय, निज के रूप लसे॥ श्रीपंच० ॥ ६॥

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्यो मोहांधकार विनाशनाय दीपं० ।

कृष्णागर धूप मंगाय, धूपायन चमके।
खेऊँ वसु कर्म उड़ाय, आतम गुण प्रगटे॥ श्रीपंच० ॥ ७॥

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्यो अष्टकर्म विध्वंसनाय धूपं० ।

पिस्ता बादाम अनार, श्रीफ़ल आदि खरे।
सहजिक शिव लहं सुखकार, पूजूं मोद भरे॥ श्रीपंच० ॥ ८॥

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्यो मोक्षफल प्राप्तये फलं० ।

वसु आठों द्रव्य मिलाय, स्वर्ण रकेबी में।
शाश्वत अनर्घ्य पद पाय, अर्घ्य चढ़ाऊँ मैं॥ श्रीपंच० ॥ ९॥

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्यो अनर्घ्य पद प्राप्तये अर्घ्यं ।

सोरठा

पंच परम गुरु तीर्थ, जयवंते जग में सदा।
आत्मिक सुख के हेतु, शांतिधारा मैं करूं॥

शांतये शांतिधारा।

दोहा

ज्ञान सूर्य जब प्रगट हो, आत्म कमल खिल जाय।
भक्ति सुमन अर्पण करूं, मनवांछित फल पाय॥

दिव्य पुष्पांजलिः।

प्रत्येक गुण के पृथक्-पृथक् अर्घ्य

अर्हंत संबंधी अर्घ-जन्म के दस अतिशय

शेर छंद

प्रभु का हि सुंदर रूप लख नहि तृप्त हो निरखें।
परमाणु शुद्ध रूप में प्रभु देह में बसें॥
दस अतिशय जन्म के समय प्रभु देह में खिलें।
श्रद्धा सुमन से पूजते, जन जन के मन मिलें॥ १ ॥टेक॥

ॐ ह्रीं सुंदर रूप अतिशय सहित अर्हत्परमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं० ।

अर्हंत सुगंधित शरीर में सदा लसे।
ना विश्व में ऐसा कभी सुगंध तन दिखे॥ दस० ॥ २ ॥

ॐ ह्रीं सुगंध शरीर अतिशय सहित अर्हत्परमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं० ।

अर्हंत के शरीर में नहिं स्वेद हो कभी।
जो सूर्य की किरणों से बढ़के छवि दिखे जभी॥ दस० ॥ ३ ॥

ॐ ह्रीं स्वेद रहित सहजातिशय धारक अर्हत्परमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं० ।

मल मूत्र आदि से रहित, प्रभु आप शोभते।
गणना न कोई कर सके, भवि मन को मोहते॥ दस० ॥ ४ ॥

ॐ ह्रीं निर्मलत्व सहजातिशय धारक अर्हत्परमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं० ।

प्रभु आपके प्रिय हित बचन द्वारा अमृत झरें।
अमृत का पान करके भद्र प्राणि शिव वरें॥ दस० ॥ ५ ॥

ॐ ह्रीं मधुरवचनातिशय सहित अर्हत्परमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं० ।

प्रभु के अतुल्य बल को लख सुर इंद्र भी कंपें।
जिनके समक्ष चक्रवर्ती भी न टिक सकें॥ दस० ॥ ६ ॥

ॐ ह्रीं अनंतबलातिशय सहित अर्हत्परमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं० ।

प्रभु तन में रुधिर श्वेत निर्मल दुग्ध सम दिखे।
जब कर्म परमाणु भी कुछ बिगाड़ ना सके॥ दस० ॥ ७ ॥

ॐ ह्रीं क्षीरगौर श्रोणितातिशय सहित अर्हत्परमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं० ।

प्रभु एक सहस आठ लक्षण से सुशोभते।
मानो तीर्थंकर पुण्य की कलियां बिखेरते॥ दस० ॥ ८ ॥

ॐ ह्रीं शुभ लक्षण सहित शरीर अतिशयधारक अर्हत्परमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं० ।

प्रभु तन सुडौल सौम्य समचतुरस्र कहे हैं।
निर्माण सुभग नामकर्म साथ रहे हैं॥
दस अतिशय जन्म के समय प्रभु देह में खिलें।
श्रद्धा सुमन से पूजते, जन जन के मन मिलें॥ ९॥
ॐ ह्रीं समचतुरस्रसंस्थान अतिशय सहित अर्हत्परमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं०।
प्रभु वज्रवृषनाराच संहनन को लहावें।
अद्भुत चरम शरीर चमत्कार दिखावें॥ दस०॥ १०॥
ॐ ह्रीं वज्रवृषभनाराचसंहनन सहजातिशय अर्हत्परमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं०।

केवलज्ञान के दस अतिशय

अडिल्ल छंद

समोशरण युत तीर्थंकर तिष्ठें जहां।
हो सुभिक्ष शत योजन चहुं दिश में वहां॥
दस अतिशय हो प्रगट सुकेवलज्ञान में।
ज्योति जगे जब प्रभु ज्ञाता दृष्टा बने॥ टेक। १॥
ॐ ह्रीं शत योजन सुभिक्ष अतिशय सहित अर्हत्परमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं०।
जभी करें प्रभु गमन अधर आकाश में।
जय जय ध्वनि कर मनुज इंद्रगण साथ में॥ दस०॥ २॥
ॐ ह्रीं आकाशगमनातिशय सहित अर्हत्परमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं०।
समोशरण में शोभ रही बारह सभा।
चहुं दिश प्रभु मुख दिखे सभी लेवें मजा॥ दस०॥ ३॥
ॐ ह्रीं चतुर्मुख अतिशय सहित अर्हत्परमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं०।
जहां रहें जिनदेव न हिंसा हो कभी।
प्रभु महिमा से दयाभाव रखते सभी॥ दस०॥ ४॥
ॐ ह्रीं अदयाभाव अतिशय सहित अर्हत्परमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं०।
चेतन और अचेतन द्रव्य कहें सभी।
इनसे नहिं उपसर्ग प्रभू पर हो कभी॥ दस०॥ ५॥
ॐ ह्रीं उपसर्गाभाव अतिशय सहित अर्हत्परमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं०।
आयु अंत नहिं प्रभु के कवलाहार है।
फिर भी कांति बढ़े तन में अचरज लहें॥ दस०॥ ६॥
ॐ ह्रीं कवलाहाररहित अति[illegible] सहि[illegible] अर्हत्परमेष्ठि[illegible] अर्घ्यं

सब विद्याओं के अधिपति इक प्रभु लसे।
जिनकी छवि लख भविजन मिथ्यातम नशें॥ दस०॥ ७॥
ॐ ह्रीं सर्व विद्येश्वर अतिशय सहित अर्हत्परमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं०।
नहीं बढ़े नख केश प्रभो माहात्म से।
दिव्य देह लख सुर विद्याधर नाचते॥ दस०॥ ८॥
ॐ ह्रीं समाननखकेशत्व अतिशय सहित अर्हत्परमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं०।
नेत्र सदा टिमकार रहित न पलक हिलें।
चमत्कार लख जनजन के बहु मन खिलें॥ दस०॥ ९॥
ॐ ह्रीं पक्ष्मस्पंद रहित अतिशय सहित अर्हत्परमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं०।
प्रभु की छाया कभी किसी को नहिं पड़े।
चरम शरीर को लख आश्चर्य सभी करें॥ दस०॥ १०॥
ॐ ह्रीं छाया रहित अतिशय सहित अर्हत्परमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं०।

देवकृत चौदह अतिशय

चाल—आई शुभ की घड़ी

कर लो आतम का कल्याण आई शुभ की घड़ी।
आई शुभ की घड़ी देखो मंगल घड़ी॥ टेक॥
तीर्थंकर सर्वांग खिरी, सर्वार्धमागधी भाषा।
कहें देवकृतअतिशय चौदह जन जन के मन भाता॥
वे ही करते आतमध्यान आई शुभ की घड़ी॥ कर०॥ १॥
ॐ ह्रीं सर्वार्धमागधीभाषादेवोपनीत अतिशय सहित अर्हत्परमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं०।
जात विरोधी जीव परस्पर मैत्री भाव धरे हैं।
चमत्कार प्रभु का लख सब मिल बैरविरोध हरे हैं॥
वे ही करें प्रभू का ध्यान, आई शुभ की घड़ी॥ कर०॥ २॥
ॐ ह्रीं सर्वजीवमैत्रीभावदेवकृत अतिशय सहित अर्हत्परमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं०।
प्रभु प्रताप से दशों दिशा, निर्मल अतिशय सुर कीना।
तत्त्वचिंतवन करके, जो निजआतम में चित दीना॥
पावें अतिशय पुण्य महान, आई शुभ की घड़ी॥ कर०॥ ३॥
ॐ ह्रीं सर्वदिशानिर्मलदेवकृत अतिशय सहित अर्हत्परमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं०।

सदा दिखे आकाश सुनिर्मल, भवि हितकर सुर कीनी।
यह अतिशय लख सब विकथा तज आत्मकथा भज लीनी॥
जिससे करें आत्म उत्थान, आई शुभ की घड़ी।
कर लो आतम को कल्याण आई शुभ की घड़ी।
आई शुभ की घड़ी देखो मंगल घड़ी॥ ४॥
ॐ ह्रीं गगननिर्मलदेवकृतअतिशयसहित अर्हत्परमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं०।
जहां विराजें प्रभु जी, षटऋतु के फल फूल खिले हैं।
यह अतिशय को देख सभी जिन भक्ती हेतु घिरे हैं॥
जिससे बढ़ता पुण्य महान, आई शुभ की घड़ी॥ कर०॥ ५॥
ॐ ह्रीं सर्वऋतुफलादिशोभितदेवकृतअतिशयसहित अर्हत्परमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं०।
जहाँ जहाँ प्रभु गमन करें, भूरत्नमयी सुर कीना।
यह महिमा लख भव्य जीव, झट रागद्वेष तज दीना॥
जब ही करें प्रभू यशगान, आई शुभ की घड़ी॥ कर०॥ ६॥
ॐ ह्रीं रत्नमयीमहीदेवकृतअतिशयसहित अर्हत्परमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं०।
जहां जहां प्रभुचरण पड़े, वहां स्वर्ण कमल सुर रचते।
चमत्कार यह देख सभी जन, मन ही मन में नचते॥
जब ही करें प्रभु गुणगान, आई शुभ की घड़ी॥ कर०॥ ७॥
ॐ ह्रीं चरणकमलतलरचितस्वर्णकमलदेवकृतअतिशयसहित अर्हत्परमेष्ठिभ्य:अर्घ्यं०।
मंद सुगंधित पवन चले अनुकूल शुद्ध सुखकारी।
रोग शोक सब दूर होय यह अतिशय सुरकृत भारी॥
जिससे पावें सिद्धि महान आई शुभ की घड़ी॥ कर०॥ ८॥
ॐ ह्रीं सुगंधितपवनदेवकृतअतिशयसहित अर्हत्परमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं०।
चतुर्प्रकार देवगण नभ में, जय जय ध्वनि उच्चारें।
अतिशय ताल मृदंग बजाकर वीणा झन झंकारें॥
प्रभु का करें सुमंगलगान, आई शुभ की घड़ी॥कर०॥ ९॥
ॐ ह्रीं जयजयशब्ददेवकृतअतिशयसहित अर्हत्परमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं०।
पावन गंधोदक की वृष्टी, मेघकुमार जु कीना।
यह महात्म्य लख सभी भक्त मिल षट आवश्यक कीना॥
जिससे पावें ऋद्धि महान, आई शुभ की घड़ी॥ कर०॥ १०॥
ॐ ह्रीं मेघकुमारकृतगंधोदकवृष्टिदेवकृतअतिशयसहित अर्हत्परमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं०।

पवन कुमार द्वारा निष्कंटक आदि सुभूमि लसे है।
प्रभु प्रसाद से दुर्भिक्षादिक सब ही रोग नशे है॥
पावें सुख आरोग्य निधान, आई शुभ की घड़ी॥ कर०॥ ११॥
ॐ ह्रीं भूमिकंटकरहितदेवकृतअतिशयसहित अर्हत्परमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं०।
प्रभु का जहां विहार होय, सब जन आनंदित होते।
कोई जिनधर्मी बनते कोई श्रावक व्रत धरते॥
देखो प्रभु का अतिशय शान, आई शुभ की घड़ी॥ कर०॥ १२॥
ॐ ह्रीं सर्वजनआनंदकारकदेवकृतअतिशयसहित अर्हत्परमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं०।
धर्मचक्र सर्वाण्ह यक्ष, मस्तक पर धारण करते।
प्रभु के आगे चलकर जन जन के मिथ्यातम नशते॥
देखो धर्मचक्र माहात्म, आई शुभ की घड़ी॥ कर०॥ १३॥
ॐ ह्रीं धर्मचक्रदेवकृतअतिशयसहित अर्हत्परमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं०।
कलश छत्र ध्वज चमर व दर्पण, भृंग ताल स्वस्तिक हैं।
मंगल द्रव्य ये आठ कहें, सुर आगे लिये चलत हैं॥
जिनकी महिमा बड़ी महान, आई शुभ की घड़ी॥ कर०॥ १४॥
ॐ ह्रीं अष्टमंगलद्रव्यदेवकृतअतिशयसहित अर्हत्परमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं०।

प्रातिहार्य के ८ अर्घ्य

शेर छंद

ऊँचे अशोक वृक्ष नीचे, चमचमा रहा।
प्रभु आपका यह रूप, अतिशय मन को हर रहा॥
ज्यों मेघ ढिग रवि बिंब, तम हर क्रांति कर रहा।
त्यों तरु निकट प्रतिबिंब, प्रभु तव भ्रांति हर रहा॥ १॥
ॐ ह्रीं अशोकवृक्षमहाप्रातिहार्यसहित अर्हत्परमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं०।
रत्नों का सिंहासन अहो, विचित्र सा दिखे।
जिस पर शरीर आपका, कंचन सा प्रभु लसे॥
मानों ये सूर्य शीघ्र उदयाचल शिखर चले।
किरणों की झालर को बना, प्रभु भक्ति को करें॥ २॥
ॐ ह्रीं सिंहासनमहाप्रातिहार्यसहित अर्हत्परमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं०।

प्रभु आपके सिर पर हि, तीन छत्र शोभते।
जो चन्द्र सम रमणीय, रवि प्रताप रोकते॥
मणि मोतियों से युक्त, मानों आप प्रति झुकें।
त्रिभुवन के परमेश्वरपने को प्रगट कर नचें॥ ३॥

ॐ ह्रीं छत्रत्रयमहाप्रातिहार्यसहित अर्हत्परमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं० ।

प्रभु तव प्रभामण्डल की ऐसी ज्योति प्रकाशे।
जिसके सुमुख त्रैलोक्य की द्युति क्रांति ना भासे॥
जो कोटि सूर्य से अधिक बढ़कर है प्रतापी।
जिसमें दिखे भव सात चांदनी न सुहाती॥ ४॥

ॐ ह्रीं भामंडलमहाप्रातिहार्यसहित अर्हत्परमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं० ।

अपवर्ग स्वर्ग मार्ग दर्शक विश्व प्रकाशे।
सत् धर्म तत्व में कुशल अज्ञान विनाशे॥
अरु अर्थ विशद सर्व भाषारूप मय फले।
ऐसी तव "दिव्य ध्वनि" प्रभो सर्वांग मय खिरे॥ ५॥

ॐ ह्रीं दिव्यध्वनिमहाप्रातिहार्यसहित अर्हत्परमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं० ।

बहु कल्पद्रुम कुसुमों की नभ से हो रही वृष्टी।
मंदार पारिजात आदि, की हुई सृष्टी॥
अरु मंद-मंद वायु सुरभि, वारि की वृष्टी।
मानो प्रभो मुख से खिरे, अमृत वचन पंक्ती॥ ६॥

ॐ ह्रीं सुरपुष्पवृष्टिमहाप्रातिहार्यसहित अर्हत्परमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं० ।

प्रभु आपके हिम देह पर, सुन्दर चंवर ढुरें।
जो कुंद पुष्प सम धवल, जन जन का मन हरे॥
मानों सुमेरु गिरि के ऊपर, स्वच्छ जल झरें।
शशि कांति सम निर्मल सदा जो प्रभु चरण पड़े॥ ७॥

ॐ ह्रीं चतु:षष्टि:चामरमहाप्रातिहार्यसहित अर्हत्परमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं० ।

वादित्र नाद उच्च स्वर से व्याप्त चहुँ दिशा।
त्रिभुवन के जन जन को करें, आकर्ष ध्वनि शिखा॥
मानों सुधर्मराज को घोषित करें सदा।
प्रभु यश प्रगट आकाश में दुंदुभि बजे मुदा॥ ८॥

ॐ ह्रीं सुरदुंदुभिमहाप्रातिहार्यसहित अर्हत्परमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं० ।

—

(चार अनंत चतुष्टय)

तर्ज—कितना बदल गया इंसान

श्री अरिहंतजिनराज तुम्हारी महिमा अपरंपार।
कि सब मिल करते जय जयकार ॥ टेक ॥

तुमने भेष दिगंबर धारा, काम क्रोध मद लोभ निवारा।
शुद्ध ध्यान में आत्म निहारा, निस्पृह गुण को निज में धारा ॥
अनंतज्ञान के धारी प्रभुवर ज्योति जगे अपार ॥ सब० ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं अनंतज्ञानसहित अर्हत्परमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं० ।

ध्येय तुम्हारा था अतिप्यारा, मुक्ति पंथ के पथिक निराला।
सर्व बंधु के हो उपकारा क्षमा भाव को तुमने धारा ॥
अनंत दर्श गुणधारी भगवन लोकालोक निहार ॥ सब० ॥ २ ॥

ॐ ह्रीं अनंतदर्शनसहित अर्हत्परमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं० ।

जग को सर्व असार निहारा, अनुपम आत्मनिधी को सम्हारा।
आप तिरे औरन को तारा, भवसागर से लगे किनारा ॥
अनंत सौख्य के धारी जिनवर, अतिशय पुण्य अपार ॥ सब० ॥ ३ ॥

ॐ ह्रीं अनंतसौख्यसहित अर्हत्परमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं० ।

अनेकांत सिखलाने वाले, जग के हो आंखों के तारे।
मन मोदक भय हरने वाले, शांतिपंथ के राज दुलारे ॥
अनंत शक्ति के धारी गुरुवर भक्ति करें अपार ॥ सब० ॥ ४ ॥

ॐ ह्रीं अनंतबलसहित अर्हत्परमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं० ।

छयालिस गुणधारी भव भंजन, शिवपथ दर्शक आत्मनिरंजन।
ज्ञाता दृष्टा शुद्ध शिवंकर, आत्मरसिक व्यवहार कुशल वर ॥
"अभयमती" श्रद्धागुण प्रगटें, शीघ्र करो उद्धार ॥ सब० ॥ ५ ॥

ॐ ह्रीं षट्चत्वारिंशद्गुणसहित अर्हत्परमेष्ठिभ्य: पूर्णार्घ्यं० ।

शातंये शांतिधारा, पुष्पांजलिं: ।

(सिद्ध गुणों के आठ अर्घ्य)

तर्ज-आये महावीर भगवान

कर लो सिद्ध गुणों का पाठ आतम ज्योति जगे घट घट में ॥ टेक ॥
जो शुद्ध विधी से कराया, मनवांछित फल को पाया।
प्रभु मोहनी कर्म नशाया, गुण समकित शुद्ध लहाया ॥
जप लो सिद्धप्रभू की जाप, जिससे कर्म खिरें क्षण क्षण में ॥
॥ कर० ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं सम्यक्त्वगुणसहित सिद्धपरमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं० ।

प्रभु ज्ञानावरण नशाया, तब दिव्य ज्योति प्रगटाया।
सम्यग्ज्ञानादि गुण छाया, मंगल सद्बीज कहाया ॥
भज लो सब भक्ति से पाठ, जिससे हम न फंसे दल दल में ॥
॥ कर० ॥ २ ॥

ॐ ह्रीं अनंतज्ञानगुणसहित सिद्धपरमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं० ।

प्रभु दर्शनावरण नशाया, केवल दर्शन चमकाया।
ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूँ बतलाया, ह्रौं ह्रः परमेष्ठि कहाया ॥
अरु अ सि आ उ सा लहात, जिससे विघ्न टलें पल पल में ॥
॥ कर० ॥ ३ ॥

ॐ ह्रीं अनंतदर्शनगुणसहित सिद्धपरमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं० ।

अन्तराय कर्म विनशाया, प्रभु बल अनंत प्रगटाया।
रत्नत्रय सिद्ध कहाया, सब भूत पिशाच भगाया ॥
सुर नर नृत्य करें दिन रात, पुण्य रेख खिंचता करतल में ॥
॥ कर० ॥ ४ ॥

ॐ ह्रीं अनंतवीर्यगुणसहित सिद्धपरमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं० ।

प्रभु नाम कर्म नशायो, सूक्ष्मत्व शुद्ध गुण भायो।
तुम भी इस भांति दिखायो, बन के सुर इंद्र कहायो ॥
कर लो विधान का ठाठ, मध्यलोक के जिनमंदिर में ॥
॥ कर० ॥ ५ ॥

ॐ ह्रीं सूक्ष्मत्वगुणसहित सिद्धपरमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं० ।

प्रभु आयु कर्म विनशायो जब अवगाहन गुण पायो।
मंदिर में ध्वजा चढ़ायो, जब तीर्थंकर पद पायो॥
ऊँची ध्वजा लगाओ भ्रात, जिससे उन्नति हो पलपल में॥
॥ कर० ॥ ६ ॥

ॐ ह्रीं अवगाहनगुणसहित सिद्धपरमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं० ।

अरु गात्र कर्म खिपायो, अगुरुलघु गुण सहजिक भायो।
केशरिया आदि ध्वज लायो, दस चिह्न सहित फहरायो॥
शुभ स्वस्तिकादि लहरात, जिससे पाप नशें सब पल में॥
॥ कर० ॥ ७ ॥

ॐ ह्रीं अगुरुलघुगुणसहित सिद्धपरमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं० ।

प्रभु वेदनी कर्म नशाया, अव्याबाध सहज सुखपाया।
मैनासुंदरि रचवाया, अरु पति का कुष्ट नशाया॥
देखो सिद्ध प्रभू का ठाठ, जिससे रोग नशें सब क्षण में॥
॥ कर० ॥ ८ ॥

ॐ ह्रीं अव्याबाधसुखसहित सिद्धपरमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं० ।

प्रभु अष्टकर्म को नाशे, जब आठ मुख्य गुण भासे।
जो सिद्धगुणों को गाते, वे शीघ्र सिद्धपद पाते॥
मम "अभय" करो प्रभु आप, जिससे जन्म सफल हो पल में॥
॥ कर० ॥ ९ ॥

ॐ ह्रीं अष्टकर्मरहितअष्टगुणसहित सिद्धपरमेष्ठिभ्य: पूर्णार्घ्यं० ।

शांतये शांतिधारा, पुष्पांजलि: ।

आचार्य संबंधी अर्घ्य

चाल—श्री सिद्धचक्र का पाठ करो ....

संघ के अधिपति आचार्य गुरू महाराज जगत हितकारी।
उन गुरु को नमूं दुखहारी॥ टेक॥
संपूर्ण गुणों से भारी हैं, अरु नग्न दिगंबर धारी हैं।
जो आठभेद युत ज्ञानाचार के धारी ॥ उन० ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं ज्ञानाचारगुणसहित आचार्यपरमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं. . . ।

श्री श्रुत के सागर भी गुरु हैं, आगम के ज्ञाता सूरि कहें।
जो आठ अंग युत दर्शनाचार के धारी।
उन गुरु को नमूं दुखहारी॥ २॥
ॐ ह्रीं दर्शनाचारगुणसहित आचार्यपरमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं. . . . ।
अध्यात्म रसिक जिन सूरि कहें, व्यवहार कुशल गुण भूरि लहें।
जो तेरह विध चारित्राचार के धारी ॥ उन० ॥ ३ ॥
ॐ ह्रीं चारित्राचारगुणसहित आचार्यपरमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं. . . . ।
अरु ज्ञानध्यान में लीन रहें, मन विकथा शून्य मुनींद्र कहें।
बारह विध तप आचार के जो संचारी ॥ उन० ॥ ४ ॥
ॐ ह्रीं तप आचारगुणसहित आचार्यपरमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं. . . . ।
जीवों के रक्षक भी गुरु हैं , निष्कारण बंधू सूरि कहें।
जो पांच भेद युत वीर्याचार के धारी ॥ उन० ॥ ५ ॥
ॐ ह्रीं वीर्याचारगुणसहित आचार्यपरमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं. . . . ।

चाल—दयालु प्रभु से हम दया मांगते हैं.....

संघ के नायक श्री आचार्य गुरुवर, जगत के हैं तारक परम उपकारी।
॥टेक॥
दिशारूपधारी, नगन रूपधारी, करुणासिंधु के पुण्य रत्नाकर।
क्रोध को तज के उत्तम क्षमागुण धारी ऐसे गुरु को भजूं सुखकारी॥ ६।
ॐ ह्रीं उत्तम क्षमाधर्म सहित आचार्यपरमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं. . . . ।
गृहों को भी त्यागा विषयों को त्यागा।
गुणों को न त्यागा श्री आचार्य गुरुवर॥
मान को तजके उत्तम मार्दव गुणधारी॥ ऐसे० ॥ ७ ॥
ॐ ह्रीं उत्तम मार्दव धर्म सहित आचार्यपरमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं. . . . ।
विश्व शांति के सतत करने वाले।
अहिंसा धर्म की विजय करने वाले॥
कपट को तज के उत्तम आर्जव गुणधारी ॥ ऐसे० ॥ ८ ॥
ॐ ह्रीं उत्तम आर्जवधर्म सहित आचार्यपरमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं. . . . ।
समता रस के त्यागी भी गुरु हैं, चतुर्थकाल के परम वीतरागी।
लोभ को तज के उत्तम शौचगुणधारी ॥ ऐसे० ॥ ९ ॥
ॐ ह्रीं उत्तम शौचधर्म सहित आचार्यपरमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं. . . . ।

. पिंजर से मोह को छोड़ा, किंतु न आतम से प्रेम को तोड़ा।
झूठ को तज के उत्तमसत्य गुणधारी॥ ऐसे० ॥ १० ॥
ॐ ह्रीं उत्तम सत्यधर्म सहित आचार्यपरमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं. . . . ।
ध्यानाध्ययन मन विकथा शून्य निजात्म ध्यान के रागी हैं गुरुवर।
इंद्रियमनवशकरउत्तमसंयमगुणधारी॥ ऐसे० ॥ ११ ॥
ॐ ह्रीं उत्तम संयम धर्म सहित आचार्यपरमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं. . . . ।
मनहर मूर्ति लोक के प्रिय हैं, मुक्ति मार्ग के दर्शक गुरु हैं।
इच्छा निरोध उत्तमतप गुणधारी॥ ऐसे० ॥ १२ ॥
ॐ ह्रीं उत्तम तप धर्म सहित आचार्यपरमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं. . . . ।
संपूर्ण मूलगुणों से जो भारी, दर्पण सम जो परम मौनधारी।
दान को देकर उत्तमत्याग गुणधारी॥ ऐसे० ॥ १३ ॥
ॐ ह्रीं उत्तम त्याग धर्म सहित आचार्यपरमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं. . . . ।
सर्व भाषाओं के ज्ञाता भी गुरु हैं, सार्वउपदेशक वक्ता कहे हैं।
कुछ भी नहि मेरा उत्तम आकिंचनधारी॥ ऐसे० ॥ १४ ॥
ॐ ह्रीं उत्तम आकिंचन धर्म सहित आचार्यपरमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं. . . . ।
भव भोगों से मुखड़ा मोड़ा , शिवनारि से गुरुवर नाता जोड़ा।
आत्म में रमके उत्तम ब्रह्मचर्य धारी॥ ऐसे० ॥ १५ ॥
ॐ ह्रीं उत्तम ब्रह्मचर्य धर्म सहित आचार्यपरमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं. . . . ।

चाल—ओ दुपट्टा मेरा. . . .

गुरु की भक्ति सहाई ओ चेतो भाई॥ टेक॥
कुंदकुंद आचार्य हुये हैं , समयसार अध्यात्म रचे हैं।
बेलादिक उपवास किये हैं, अनशन तप से सूरि लसे हैं।
आत्मज्योति प्रगटाई ओ चेतो भाई॥ गुरु० ॥ १६ ॥
ॐ ह्रीं अनशन तप सहित आचार्यपरमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं. . . . ।
अमृतचंद्र मुनीश्वर सोहें , अमृत ज्ञान कलश भर देवें।
ग्रास को कम कर भोजन लेवें, ऊनोदर तप ऋषिधर लेवें॥
ज्ञान ज्योतिं जगाई , ओ चेतो भाई॥ गुरु० ॥ १७ ॥
ॐ ह्रीं अवमौदर्य तप सहित आचार्यपरमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं. . . . ।
मानतुंग जी ध्यान धरे हैं , बंधन सब ही स्वयं खुले हैं।
चर्या समय जो नियम करे हैं , वृत्तिपरिसंख्यान धरे हैं॥
अतिशय गुरु दर्शाई , ओ चेतो भाई॥ गुरु० ॥ १८ ॥
ॐ ह्रीं वृत्ति परिसंख्यानतप सहित आचार्यपरमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं. . . . ।

समंत भद्र पुरुषार्थ जगाया, भस्मक व्याधि सर्व नशाया।
दुग्ध मिष्ट रस आदि कहाया, रस परित्याग धरें मुनिराया॥
चमत्कार प्रगटाई, ओ चेतो भाई॥
गुरु की भक्ति सहाई ओ चेतो भाई॥ १९॥
ॐ ह्रीं रस परित्याग तप सहित आचार्यपरमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं....।
वादिराज मुनि कष्ट मिटायो, एकीभाव स्तोत्र रचायो।
जो एकांत में ध्यान लगायो, विविक्तशय्यासन कहलायो॥
आत्म भक्ति उर भाई, ओ चेतो भाई॥ गुरु० ॥ २०॥
ॐ ह्रीं विविक्तशय्यासन तप सहित आचार्यपरमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं....।
पूज्यपाद शांत्यष्ट रचे हैं, नेत्र ज्योति तत्काल लसे हैं।
घोर परीषह तप में तपे हैं, काय क्लेश कर कर्म नशे हैं॥
गुरुवर महिमा गाई, ओ चेतो भाई॥ गुरु० ॥ २१॥
ॐ ह्रीं काय क्लेशतप सहित आचार्यपरमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं....।
उमास्वामि मोक्षशास्त्र रचाया, चतुर्योग शिवपथ बतलाया।
व्रत में जो भी दोष लगाया, गुरु से प्रायश्चित्त लहाया॥
ज्ञानपुष्प बिकसाई, ओ चेतो भाई॥ गुरु० ॥ २२॥
ॐ ह्रीं प्रायश्चित तप सहित आचार्यपरमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं....।
महा सूरि शुभचंद्र कहायो, ज्ञानार्णव बहु शास्त्र रचायो।
दर्शन ज्ञान चरित तप भायो, इनमें विनय सुतप उर ध्यायो॥
अतिशय गुरु दर्शाई, ओ चेतो भाई॥ गुरु० ॥ २३॥
ॐ ह्रीं विनय तप सहित आचार्यपरमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं....।
चंद्रगुप्त गुरु भक्ति जगावें, चमत्कार सबको दिखलावें।
वैयावृत्ति में चित्त लगावें, तीर्थंकर पद शीघ्र लहावें॥
धर्मध्वजा फहराई, ओ चेतो भाई॥ गुरु० ॥ २४॥
ॐ ह्रीं वैयावृत्तितप सहित आचार्यपरमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं....।
श्रीधरसेनधवलादि रचायो, ज्ञानकिरणजग में चमकायो।
शास्त्र में नित उपयोग रमायो, यह ही तप स्वाध्याय कहायो॥
दिव्य ज्योति प्रगटाई, ओ चेतो भाई॥ गुरु० ॥ २५॥
ॐ ह्रीं स्वाध्यायतप सहित आचार्यपरमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं....।
भूतबली पुष्पदंत कहावें, ये ऋषि षट खंडागम बनावें।
तन परिग्रह में ममत न लावें, व्युत्सर्ग तप में चित्त लगावें॥
सिद्धी कर दिखलाई ओ चेतो भाई॥ गुरु० ॥ २६॥
ॐ ह्रीं व्युत्सर्गतप सहित आचार्यपरमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं....।

शांति सिंधु धर्मसिंधु आदि ये, अरु अनंत ऋषि चतुर्काल के॥
शुद्ध ध्यान तप को ये करे हैं, बारह तप ये ऋषी धरे हैं॥
हम सब शीश झुकाई, ओ चेतो भाई॥ गुरु० ॥ २७॥
ॐ ह्रीं ध्यान तप सहित आचार्यपरमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं. . . . ।

बसंततिलका छंद

आचार्य ध्यान करके निज को निहारें।
जो साम्य भाव धर के मम बुद्धि टारें॥
ऐसे मुनींद्र भजके, भवि मुक्ति पावें।
आत्मा महान बनके गुण में समावें॥ २८॥
ॐ ह्रीं समता आवश्यक गुण सहित आचार्यपरमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं. . . . ।
तीर्थंकरों कि स्तुति सूरि सदा करे हैं।
ये योगि सातिशय पुण्य अदा करे हैं॥ ऐसे० ॥ २९॥
ॐ ह्रीं चतुर्विंशतिस्तव आवश्यक गुण सहित आचार्यपरमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं. . . . ।
योगीश देव जिन वंदन को करें हैं।
वे पापमूल भव बंधन को हरे हैं॥ ऐसे० ॥ ३०॥
ॐ ह्रीं वंदनावश्यक गुण सहित आचार्यपरमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं. . . . ।
जो दोष चारित व संयम में लगे हैं।
योगी प्रतिक्रमण से उनको नशे हैं॥ ऐसे० ॥ ३१॥
ॐ ह्रीं प्रतिक्रमण आवश्यक गुण सहित आचार्यपरमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं. . . . ।
आहार सूरि नित चार प्रकार त्यागे।
प्रत्यानुख्यान निज में लहं दोष नाशे॥ ऐसे० ॥ ३२॥
ॐ ह्रीं स्वाध्याय आवश्यक गुण सहित आचार्यपरमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं. . . . ।
कायोत्सर्ग कर देह ममत्व टारे।
एकाग्र चिंतन करें ऋषि होय ठाढ़े॥ ऐसे० ॥ ३३॥
ॐ ह्रीं कायोत्सर्ग आवश्यक गुण सहित आचार्यपरमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं. . . . ।

मुक्तक छंद

परम हंस आचार्य श्रेष्ठ गुरुवर हैं जग के हितकारी।
दिशावस्त्र के धारी होकर, नग्नरूप महाव्रतधारी॥
करुणासिंधु पुण्य रत्नाकर तीन कम नौ कोटि ऋषिराज।
मनोगुप्ति के धारक गुरुवर, वंदन करूँ नमाकर माथ॥ ३४॥
ॐ ह्रीं मनोगुप्ति गुण सहित आचार्यपरमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं. . . . ।

ज्ञानी ध्यानी होकर जो व्यवहार कुशल भी सूरि कहें।
आत्मध्यान के रागी होकर, विषयों से वैराग्य लहें॥
क्षमा मूर्ति के धारी होकर, पूर्ण गुणों के धारी हैं।
वचन गुप्ति के पालक गुरुवर, सहे परीषह भारी हैं॥ ३५॥
ॐ ह्रीं वचो गुप्ति गुण सहित आचार्यपरमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं. . . . ।
जगत के शांति प्रदायक होकर, धर्मध्वजा फहराते हैं।
मुक्ति मार्ग के दर्शक होकर, सर्वलोक दर्शाते हैं॥
कायगुप्तिधारी गुरु को नित भक्ति सुमन अर्पण करके।
श्रद्धा से नत पुनः पुनः दर्शन चाहूं तव पद युग के॥ ३६॥
ॐ ह्रीं कायगुप्ति गुण सहित आचार्यपरमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं. . . . ।

बेशरी छंद

ज्ञानध्यान तप चरित धुरंधर, दुर्द्धर तप को करत निरंतर।
छत्तीस मूलगुणों के धारी, ऐसे सूरि भजूं सुखकारी॥
ॐ ह्रीं षटत्रिंशत् गुण सहित आचार्यपरमेष्ठिभ्यः पूर्णार्घ्यं. . . . ।
शातंये शांतिधारा, पुष्पांजलिः।

उपाध्याय संबंधी अर्घ्य

शंभु छंद

प्रथमहि आचारंग कहे जो, जिनवर की सच्ची बाणी।
संतयती मुनि गणधर कहते सरस्वती तू अमलानी॥
जिसमें सहस अठारह पद अरु, मुनी धर्म वर्णन भानी।
ऐसे आचारांग सहित बहुश्रुत को पूजूं सुखदानी॥ १॥
ॐ ह्रीं आचारांगज्ञानधारकउपाध्यायपरमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं . . . . ।
दूजे सूत्र कृतांग माँहि पद, छत्तिस सहस मुनीन्द्र कहें।
तिनमें जिन श्रुत के आराधन, योग्य मूल्य बहु विनय लहें॥
विनय क्रिया वर्णन जिसमें वह, दरशज्ञान तप चरित कहें।
इस अंग ज्ञान से भूषित पाठकगण को भजके मुक्ति लहें॥ २॥
ॐ ह्रीं सूत्रकृतांगज्ञानधारकउपाध्यायपरमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं . . . . ।

अरु तीजे स्थानांग सभी पद गुरुवर व्यालिस सहस कहे।
तिनमें ही नित षट् द्रव्यनि के, एकादिनेक स्थान लहे॥
द्रव्यों के जाने बिन कभी न, हेयोपादिक ज्ञान रहे।
इस अंग ज्ञान के धारी उपाध्याय को वंदत सिद्धि लहें॥ ३॥
ॐ ह्रीं स्थानांगज्ञानधारकउपाध्यायपरमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं ....।
अरु चौथे समवायांग माँहि पद इक लख चौसठ सहस कहे।
तिनमें जीवादि पदार्थ द्रव्य, नित क्षेत्र काल अरु भाव लहें॥
द्रव्यादि सुआश्रित तत्वार्थो में नित समानता गुरू कहें।
ऐसे अंग सुशोभित बहुश्रुत की भक्ती कर ऋद्धि लहें॥ ४॥
ॐ ह्रीं समवायांगज्ञानधारकउपाध्यायपरमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं ....।
पंचम व्याख्या प्रज्ञप्ति अंग, पद दो लख सहस अट्ठाइस हैं।
तिनमें जीवों के अस्तिनास्ति, इत्यादि कथन नित भूरि लहें॥
वे अस्ति नास्ति इत्यादि प्रश्न सब साठ सहस बुध सदा कहें।
इस अंग ज्ञान से सहित श्रमण को भजूं जभी मन खिला रहे॥ ५॥
ॐ ह्रीं व्याख्याप्रज्ञप्तिअंगज्ञानधारकउपाध्यायपरमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं ....।
छट्ठे ज्ञातृ धर्म कथांग के लख पंच सहस छप्पन पद हैं।
तिनमें गणधरकर प्रश्न किये माफिक जीवादि स्वभाव कहें॥
ज्यों अग्नि उष्ण जल शीत नीम कडु इक्षु: मधुर स्वभाव लहे।
त्यों इस अंग ज्ञान सत पाठक को भज के दुर्भाव जहें॥ ६॥
ॐ ह्रीं ज्ञाततृधर्मकथांगज्ञानधारकउपाध्यायपरमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं ....।
सप्तम उपासकाध्ययन अंग पद सत्तर सहस व ग्यारह लख।
तिनमें श्रावक के सदाचार आचार क्रिया चारित्र स्वच्छ॥
और इन्हीं के मंत्रनिका नित, सही रूप उपदेश लहे।
इस अंग ज्ञान के ज्ञाता उपाध्याय को भज के मुक्ति गहे॥ ७॥
ॐ ह्रीं उपासकाध्ययानांगज्ञानधारकउपाध्यायपरमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं ....।
अष्टम अन्त:कृतदशांग पद, सहस अट्ठाइस तेइस लक्ष।
अरु तिनमें इक-इक तीर्थंकर के, तीर्थ माहि दस-दस महंत॥
वे ऋषि उपसर्गों को सहके अंतकृत केवलि हो मुक्त हुये।
उन सब केवलि अरु अंग सहित गुरु भजके हम भी मुक्ति लहें॥ ८॥
ॐ ह्रीं अंतकृत [illegible]ांगज्ञानधारकउपाध्यायप[illegible]मे[illegible]: अर्घ्यं ....।

मदअवलिप्त कपोल छंद

अनुत्तरोपपादिकदशांग , कहं बानवे लख पद सहस चवाल।
तिनमें इक-इक तीर्थंकर के , तीर्थ माँहि दस-दस ऋषिराज।।
महा भयंकर घोरोपसर्ग सहित सुरों से पूज्य महन्त।
इस अंग ज्ञानयुत बहुश्रुत की भक्ती करके शिव पहुंचो संत।। ९ ।।
ॐ ह्रीं अनुत्तरोपपादिकदशांगज्ञानधारकउपाध्यायपरमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं ....।
दशम प्रश्न व्याकरण अंग पद, षोडश सहस तिरानवे लक्ष।
तिनमें लाभ-अलाभ नष्ट अरु मुष्टि सुक्ख दुख जीवन मृत्यु।।
इत्यादिक प्रश्नों का वर्णन, सही रूप नित कहें जिनेश।
इस अंग ज्ञान के ज्ञाता ऋषि वंदन कर सुख लहं पूर्ण विशेष।। १० ।।
ॐ ह्रीं प्रश्नव्याकरणअंगज्ञानधारकउपाध्यायपरमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं ....।
ग्यारवें विपाकसूत्रांग पद , एक कोड़ि चौरासी लक्ष।
तिनमें कर्मों के उदय और सत्ता उदीर्णा कथन सत्य।।
क्षण में रागी होय विरागी, लाभ अलाभ व सुख दुख संत।
ऐसे अंगज्ञान के धारी गुरु की अर्चन कर लहं शिव संत।। ११ ।।
ॐ ह्रीं विपाकसूत्रांगज्ञानधारकउपाध्यायपरमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं .....।
दृष्टिवाद के चतुर भेद में, चौदह भेद कहें बुध जन।
जिनमें नित उत्पाद पूर्व के, एक कोटि पद कहें ऋषिजन।।
तिनमें जीवादिक द्रव्य तथा उत्पादादि स्वभाव कथन।
इस पूर्व ज्ञानयुत पाठक को भजके निज ज्योति लहे भविजन।। १२ ।।
ॐ ह्रीं उत्पादपूर्वज्ञानधारकउपाध्यायपरमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं ....।
अग्रायणी पूर्व दूजा पद जिसमें छयानवें लाख प्रमाण।
द्वादशांग का सारभूत अरु, सप्त तत्व तिनमें शुभ जान।।
नव पदार्थ षट् द्रव्य सात सौ, सुनय व दुर्नय आदि बखान।
इस पूर्व विज्ञानी पाठक की भक्ती से मिटता बहु अज्ञान।। १३ ।।
ॐ ह्रीं अग्रायणीपूर्वज्ञानधारकउपाध्यायपरमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं ....।
वीर्यानुवादपूर्व तीजा जु , सत्तर लक्ष जिसमें पद जान।
तिनमें आत्म वीर्य परवीर्य व, कामवीर्य निश्चित ही मान।।
काल वीर्य निज भाव वीर्य अरु, तपोवीर्य आदिक सब जान।
इस पूरब ज्ञानी बहुश्रुत को वंदन कर फले सभी अरमान।। १४ ।।
ॐ ह्रीं वीर्यानुवादपूर्वज्ञानधारकउपाध्यायपरमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं ....।

अस्ति नास्ति प्रवाद पूर्व जु जिसमें भी पद है लख साठ।
तिनमें जीवादिक द्रव्य के स्व पर चतुष्टय से सत् असत् बतात॥
इत्यादिक सब सप्त भंग कहँ नित्य अनित्य व एक अनेक।
इस पूर्वज्ञानधारी गुरु को भज अनेकांत लहँ हरें कलेश॥ १५॥
ॐ ह्रीं अस्तिनास्तिप्रवादपूर्वज्ञानधारकउपाध्यायपरमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं ....।
पंचम ज्ञान प्रवाद पूर्व के पद इक कम इक कोटि बखान।
मति श्रुत अवधि मनः पर्यय अरु केवल ज्ञान कहे सुप्रमाण॥
और कुमति कुश्रुति विभंग ये, मिथ्या ज्ञान कहे अप्रमाण।
इस पूर्व ज्ञान के पाठी गुरु को भज के इसकी महिमा जान॥ १६॥
ॐ ह्रीं ज्ञानप्रवादपूर्वज्ञानधारकउपाध्यायपरमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं ....।

कुसुमलता छंद

छट्ठा सत्य प्रवाद पूर्व पद, एक कोटि छह अधिक प्रमाण।
तिनमें बचन गुप्ति व वचन के, संस्कार का कारण जान॥
अरु द्वादश भाषा अरु वक्ता के बहु भेद जिनेश बखान।
इस पूरब ज्ञानी उपाध्याय को भजके बहुविध सत्य को जान॥ १७॥
ॐ ह्रीं सत्यप्रवादपूर्वज्ञानधारकउपाध्यायपरमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं ....।
सप्तम आत्म प्रवाद पूर्व के पद कहँ छब्बिस कोटि प्रमाण।
तिनमें आत्मा जीव व कर्त्ता, भोक्ता वक्ता पुद्गल मान॥
वेद व विष्णु स्वयंभू मायी, मान वियोगि असंकुट जान।
इस पूर्वज्ञान से सहित श्रमण को पूजत भवि लहं मुक्ति प्रधान॥ १८॥
ॐ ह्रीं आत्मप्रवादपूर्वज्ञानधारकउपाध्यायपरमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं ....।
अष्टम कर्म प्रवाद पूर्व के, एक कोटि अरु अस्सी लाख।
तिनमें कर्मों का बंध उदय, उदीर्ण सत्व उत्कर्ष खास॥
उपशम संक्रमणविधि निकाचित आदि अवस्था ईश बखान।
इस पूर्व ज्ञान से भूषित गुरु की भक्ती कर हो अभय महान॥ १९॥
ॐ ह्रीं कर्मप्रवादपूर्वज्ञानधारकउपाध्यायपरमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं ....।
नवमें प्रत्याख्यान पूर्व के पद, चौरासी लक्ष प्रमाण।
नाम स्थापना द्रव्य भाव कर, आश्रय पुरुषनि तिनमें जान॥
तिनके निश्चित यथा शक्ति सत, असत काल लेकर कर त्याग।
इस पूर्वज्ञान के पाठी को भजके हो संयम चरित महान॥ २०॥
ॐ ह्रीं प्रत्याख्यानपूर्वज्ञानधारकउपाध्यायपरमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं ....।

दसम पूर्व विद्यानुवाद पद, एक कोटि दस लक्ष कहान।
तिनमें अंगुष्ट प्रसेनादिक, विद्या अल्प सात सौ जान॥
रोहिणी आदिक महा सुविद्या, पंच शतक लक्षण बल मान।
इस पूर्व ज्ञानधारी बहुश्रुत को भजके लहें निमित्तक ज्ञान॥ २१॥

ॐ ह्रीं विद्यानुवादपूर्वज्ञानधारकउपाध्यायपरमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं....।

कल्याण वाद पूर्व ग्यारहवां, सदा कोटि छब्बिस पद जान।
तिनमें तीर्थंकर आदिक के कल्याणादि महोत्सव ठान॥
इनके कारण सोल भावना वा तप चरण आदि सब जान।
इस पूर्व ज्ञान के पाठक गुरु को भजके इनका फल शुभ जान॥ २२॥

ॐ ह्रीं कल्याणवादपूर्वज्ञानधारकउपाध्यायपरमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं....।

प्राणनुवाद शुभ पूर्व बारवाँ पद, कहँ तेरह कोटि प्रमाण।
तिनमें आयुर्वेद अष्टांग, काय चिकित्सा प्राणायाम॥
वैद्य सुविद्या भूत कर्म अरु, जांगलिका व इला पिंगलादि।
इस पूर्व ज्ञान से सहित श्रमण की भक्ती कर समझें द्रव्यादि॥ २३॥

ॐ ह्रीं प्राणानुवादपूर्वज्ञानधारकउपाध्यायपरमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं....।

क्रिया विशाल पूर्व तेरहवां पद नव कोटि कहें ऋषिराज।
अलंकार संगीत शास्त्र छन्द, कला बहत्तर कहं मुनिराज॥
स्त्री के चौसठ गुण शिल्प ज्ञान, गर्भादानादिक क्रिया चुरासि।
इस पूर्व ज्ञान युत गुरु को वंदन कर सब क्रिया समझ इत्यादि॥ २४॥

ॐ ह्रीं क्रियाविशालपूर्वज्ञानधारकउपाध्यायपरमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं....।

त्रिलोक विंदुसार चौदहवां, पद कहं साढ़े बारा कोटि।
तिनमें त्रैलोक्य स्वरूप और छब्बिस परिकर्म अष्ट व्यवहारि॥
चार बीज अरु मोक्ष स्वरूप व मोक्ष गमन हित क्रिया बखान।
इस पूर्व ज्ञानधारी गुरु को भजके शिवपथ में लगे महान॥ २५॥

ॐ ह्रीं लोकविंदुसारपूर्वज्ञानधारकउपाध्यायपरमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं....।

पूर्णार्घ

द्वादशांग ही भविक जनों को, सच्चा सुख दर्शाता है।
द्वादशांग आतम से परमातम बनना सिखलाता है॥

इक शत बारह कोटि तिरासी लख ठावन पद सहस सु पांच।
इन अंगपूर्व युत उपाध्याय को पूजूं सदा नमाकर माथ॥ २६॥
ॐ ह्रीं पंचविंशतिगुणसहितउपाध्यायपरमेष्ठिभ्य: पूर्णार्घ्यं ....।
शांतये शांतिधारा, पुष्पांजलि: ।

साधु संबंधी अर्घ्य

चाल—ऐ मेरे वतन के लोगों.....

शिवपंथ प्रदर्शक ऋषि का, दुनियां में नाम है जिनका।
गुण गाऊं साधु संतों का, शत वंदन परम गुरू का॥ टेक॥
संपूर्ण गुणों के धारी, धर भेष चिदंबर भारी।
अहिंसा महाव्रत के धारी, करुणा सिंधु गुरू का॥ शिव०॥ १॥
ॐ ह्रीं अहिंसामहाव्रत सहित साधुपरमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं ....।
पक्षपात किसी से न करते, सब पर सम दृष्टि रखते।
अरु सत्य महाव्रतधारी, दर्पणवतनिर्मल गुरु का॥ शिव०॥ २॥
ॐ ह्रीं सत्यमहाव्रत सहित साधुपरमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं ....।
द्वादश तप में जो तपते, दस धर्म को धारण करते।
अचौर्य महाव्रतधारी, रत्नत्रयधारी गुरु का॥ शिव०॥ ३॥
ॐ ह्रीं अचौर्यमहाव्रत सहित साधुपरमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं ....।
भव भोगों से मुख मोड़ा, शिवपुर से नाता जोड़ा।
ब्रह्मचर्यमहाव्रत धारी, उदारभावी गुरु का॥ शिव०॥ ४॥
ॐ ह्रीं ब्रह्मचर्यमहाव्रत सहित साधुपरमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं ....।
शुद्ध बुद्ध प्रभावी गुरु हैं, अति सरल स्वभावी गुरु हैं।
अपरिग्रह महाव्रतधारी, जग के उपकारी गुरु का॥ शिव०॥ ५॥
ॐ ह्रीं अपरिग्रहमहाव्रत सहित साधुपरमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं ....।
जो बाल ब्रह्मचारी हैं, अतिशांत स्वभावी भी हैं।
ईर्यासमिति के धारक, अतिनिस्पृहधारी गुरु का॥ शिव०॥ ६॥
ॐ ह्रीं ईर्यासमिति सहित साधुपरमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं ....।
उपसर्गपरीषह सहते, मेरूसमनिश्चल रहते।
भाषा समिति प्रतिपालक, श्रुत के भंडारी गुरु का॥ शिव०॥ ७॥
ॐ ह्रीं भाषा समिति सहित साधुपरमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं ....।

अध्यात्म रसिक भी गुरु हैं, अरू न्याय प्रभाकर भी हैं।
एषणा समिति के धारक, मन इंद्रिय विजयी गुरु का॥
शिवपंथ प्रदर्शक ऋषि का, दुनियां में नाम है जिनका।
गुण गाऊं साधु संतों का, शत वंदन परम गुरू का॥ ८॥
ॐ ह्रीं एषणासमिति सहित साधुपरमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं....।
साहस के धारी गुरु हैं, जग के विख्याता गुरु हैं।
आदाननिक्षेप समिति धर निज आतम विजयी गुरु का॥शिव०॥९॥
ॐ ह्रीं आदान निक्षेपणसमिति सहित साधुपरमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं....।
अति परम उपेक्षाधारी, उत्कृष्ट ज्ञान भंडारी।
उत्सर्ग समिति के धारक, श्री चतुर्थकाल के गुरु का॥ शिव०॥ १०॥
ॐ ह्रीं उत्सर्गसमिति सहित साधुपरमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं....।

बसंततिलका छंद

स्पर्शेन्द्रिनित्य मखमल्ल गदी बिछावे।
हाथी समान हथिनी पर दौड़ जावें॥
हा व्यर्थ प्राण तज के जग में भ्रमावे।
वे साधु इंद्रि वश में कर मुक्ति पावें॥ ११॥
ॐ ह्रीं स्पर्शेंद्रियनिरोधव्रत सहित साधुपरमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं....।
जो है रसेंद्रि बरफी रबड़ी सुहावें।
मछली समान रस में झट दौड़ जावे॥
जो तार में लपटके निज प्राण खोवे।
वे साधु इंद्रि वश में कर नित्य सोहें॥ १२॥
ॐ ह्रीं रसनेंद्रियनिरोधव्रत सहित साधुपरमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं....।
घ्राणेंद्रि इत्रक फुलेल सुगंध लेवे।
भौंरे समान खुशबू सह प्राण देवे॥
कोल्हू सुबैल सम व्यर्थ दुखी कहावे।
वे साधु इंद्रिवश में कर मुक्ति जावें॥ १३॥
ॐ ह्रीं घ्राणेंद्रियनिरोधव्रत सहित साधुपरमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं....।
चक्षु जु इंद्रिय सदा खुश नृत्य देखें।
हा वे पतंग सम ही गिर प्राण सूखें॥

जो है विमूढ़ घटि यंत्र समान घूमें।
वे साधु इंद्रिवश में कर आत्म झूमें॥ १४॥

ॐ ह्रीं चक्षुनिरोधव्रत सहित साधुपरमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं ....।

जो कर्ण इंद्रिय पुराण कथा सुने है।
गीता मृदंग सुनके खुश हो भुने हैं॥
जो व्यर्थ ही मृग समान जु प्राण खोवे।
वे साधु इंद्रि वश में कर नित्य सोहें॥ १५॥

ॐ ह्रीं श्रोत्रइंद्रियनिरोधव्रत सहित साधुपरमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं ....।

बेशरी छंद

विषय व तृष्णा के गुरु त्यागी, आरंभ परिग्रह से जो विरागी।
सामायिक कर समताधारी, ऐसे गुरु को नमूं सुखकारी॥ १६॥

ॐ ह्रीं समताआवश्यकगुणसहित साधुपरमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं ....।

इंद्रिय विषयों से मुख मोड़ा, चौबिस जिनवर से नेह जोड़ा।
परम तपस्वी आत्म विहारी, ऐसे ऋषिवर हों दुखहारी॥ १७॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतिस्तवआवश्यकगुणसहित साधुपरमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं ....।

मेरु समनिश्चल अध्यात्म योगी आनंद रस के हैं उपभोगी।
देवगुरू वंदन कर भारी, ऐसे योगीश्वर भजूं सुखकारी॥ १८॥

ॐ ह्रीं वंदनाआवश्यकगुणसहित साधुपरमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं ....।

सिंह समान पराक्रमशाली, निज गुण में करते संचारी।
प्रतिक्रमण कर दोष निवारी, ऐसे गुरु को नमूं हितकारी॥ १९॥

ॐ ह्रीं प्रतिक्रमणआवश्यकगुणसहित साधुपरमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं ....।

चतुर्योग श्रुत के भंडारी, दोष त्याग करते सब भारी।
प्रत्याख्यान लियो दुखहारी, ऐसे गुरु वंदना हमारी॥ २०॥

ॐ ह्रीं प्रत्याख्यानआवश्यकगुणसहित साधुपरमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं ....।

सभी क्रियायें करते सारी, खड्गासन में रत अनगारी।
कायोत्सर्ग धरे जो भारी, ऐसे गुरु वंदना हमारी॥ २१॥

ॐ ह्रीं कायोत्सर्गआवश्यकगुणसहित साधुपरमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं ....।

तर्ज—जहां डाल डाल पर....

संसार असार समझ करके झट साधु तजे जग सारा।
धारें गुणरत्न निराला॥टेक॥

जिनके उर अमल अखंड अतुल, अकलंक सूर्य भंडारा।
चैतन्य ज्योति के जगने से, खिलती है ज्ञान की माला॥
निस्पृह गुण में रमके योगी, झट केशलोंच कर डाला।
धारें गुणरत्न निराला॥ २२॥

ॐ ह्रीं केशलोंचगुणसहित साधुपरमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं ....।

जिनके विराग का दृश्य देख, रागादि भाव नश जाता।
जिन भेष दिगंबर को लख के, जब आत्मकमल खिल जाता॥
जहां नित्य निरंजन धर्मध्यान, अरु शुक्लध्यान की माला।
धारें गुणरत्न निराला॥ २३॥

ॐ ह्रीं आचेलक्यगुणसहित साधुपरमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं ....।

स्नान रहित गुरु रत्नत्रय भूषित गुण सभी बढ़ाते।
श्रद्धा नत हो लौकांतिक सुर इंद्र सभी झुक जाते॥
जिनके द्वारे पर निशदिन रहता, ज्ञान ज्योति का नारा।
धारें गुण रत्न निराला॥ २४॥

ॐ ह्रीं अस्नानगुणसहित साधुपरमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं ....।

जिनकी अध्यात्म रसिक वाणी से मिथ्यातम भग जाता।
सम्यक्त्व प्रकाशित करके जो, निज मुक्ति से जोड़े नाता॥
जो भूमिशयन गुण लहे श्रमण, निजमें वैराग्य को धारा।
धारें गुणरत्न निराला॥ २५॥

ॐ ह्रीं क्षितिशयनगुणसहित साधुपरमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं ....।

जिनके अनुभव से सहजतृप्त निज सहजानंद की धारा।
जिनके गुण रत्नों से मिलती है मोक्षमहल की माला॥
नहिं करें दंत मंजन योगीश्वर नमूँ मैं बारंबारा।
धारें गुणरत्न निराला॥ २६॥

ॐ ह्रीं अदंतधावनगुणसहित साधुपरमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं ....।

जिनकी महिमा को चक्रवर्त्ति धरणेंद्र सभी नित गाते।
वीतरागता प्राप्त हेतु ऋषिवर जी ध्यान लगाते॥
जो आत्म ज्योति में रमण करें ऋषि खड़े लेय आहारा।
धारें गुणरत्न निराला॥ २७॥

ॐ ह्रीं स्थिति भोजनगुणसहित साधुपरमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं ....।

जिनकी छाया में स्वर्ण चांदनी सी दिखती है माया।
जिनकी आभा में स्वयं सिद्ध चितपिंड अमूरत काया॥
जिस आत्मध्यान के बल पर ऋषि, इक बार लेय आहारा।
धारें गुणरत्न निराला॥ २८॥

ॐ ह्रीं एकभक्तगुणसहित साधुपरमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं ....।

ज्ञाता दृष्टा जिनका स्वभाव, कहते हैं भविजन प्यारा।
निज के द्वारा निज को भजके, निज में निज रूप निहारा॥
अट्ठाइसगुणयुत ऋषि भजके, कर लो जीवन उद्धारा।
धारें गुणरत्न निराला॥ २९॥

ॐ ह्रीं अष्टाविंशतिगुणसहित साधुपरमेष्ठिभ्य: अर्घ्यं ....।

शांति धारा पुष्पांजलि:।

जाप्य—ॐ ह्री श्री धर्मचक्राय नम:

जयमाला

दोहा

पंच परमेष्ठी तीर्थ को भजूं सदा सुखकार।
गाऊँ गुण जयमालिका हो भवदधि से पार॥

तर्ज—भव सागर अपार है....

पंच परमेष्ठी को नित मेरा बारम्बार प्रणाम है।
आत्म से परमातम बनकर जो दिखलाया शिवधाम है।
वीतराग सर्वज्ञ हितंकर मोक्षमार्ग के नेता जी।
चार घातिया कर्म नाश कर विश्व तत्व के ज्ञाता जी॥
छयालीस मूलगुण धारी ऐसे अरहंतों को प्रणाम है॥ आत्म०॥ १॥
अष्ट कर्म के नाशक प्रभुवर तुम ही अन्तर्यामी जी।
भवसागर से पार करो मोहि तुम ही, शिव सुख दानी जी॥
अष्टमूलगुण धारी ऐसे सिद्धों को प्रणाम है॥ आत्म०॥ २॥
शिक्षा दीक्षा देकर के जो मुनि संघ के अधिपति जी।
आत्म रसिक होकर के जो व्यवहार कुशल भी हैं गुरु जी॥
छत्तीस मूलगुण धारी ऐसे आचार्यों को प्रणाम हैं॥ आत्म०॥ ३॥

पढ़ना और पढ़ाना जिनका मात्र एक ही ध्येय जी।
हितोपदेशक आत्म भावना मात्र ही जिनका ध्येय जी॥
पच्चीस मूलगुण धारी ऐसे उपाध्यायों को प्रणाम है॥
पंच परमेष्ठी को नित मेरा बारम्बार प्रणाम है।
आत्म से परमातम बनकर जो दिखलाया शिवधाम है॥ ४॥
विषय वासना रहित निरंबर निरारंभ निर्ग्रन्थ जी।
आत्म साधना में रत रहते ध्यानी अरु शिवपंथ जी॥
अट्ठाईस मूलगुण धारी ऐसे साधुओं को प्रणाम है॥ आत्म० ॥ ५ ॥
इंद्र इंद्राणी नाचे गावें, जिनवर के दरबार जी।
भक्ति भाव से पूजन करते, फल मिलता तत्काल जी॥
करें मंगलाचार हैं होवें जयजयकार है॥ आत्म० ॥ ६ ॥
कोई ताल मृदंग बाजाकर, जिनवर के गुण गावें जी।
कोई प्रभु का ध्यान लगाकर, आतम ज्योति जगावें जी॥
यही गले का हार है, मानव का श्रृंगार है॥ आत्म० ॥ ७ ॥
दीप सजाकर करूँ आरती प्रभु जी तेरे द्वार में।
ज्ञान ज्योति जगे उर अंतर बंधू न मिथ्याजाल में॥
मनुष्य जनम ही सार है, खुला चतुर्मुख द्वार है॥ आत्म० ॥ ८ ॥
चौबीसों जिन पंचपरम गुरु रत्नत्रय शिरधार जी।
अवधि ऋद्धि धारक ऋषि गण को भक्ति सहित शिरधार जी॥
ह्रींकार ओंकार है, प्रभु की भक्ति अपार है॥ आत्म० ॥ ९ ॥
यह तन तेरा इकदिन चेतन बूंद पड़े गल जायेगा।
पंचपरमेष्ठी पाठ करें जो वह अहमिंद्र कहायेगा॥
बीज यंत्र साकार है, मूल यंत्र आधार है॥ आत्म० ॥ १० ॥

दोहा

पंचपरमेष्ठी पाठ कर, होवे आत्म विकास।
श्रेणी सिद्धों की लहें, जब हो तत्व प्रकाश॥

ॐ ह्रीं पंच परमेष्ठिभ्य: जयमालापूर्णार्घ्यं. . . . ।

शांतये शांतिधारा पुष्पांजलि: ।

मुक्तक छंद

अरिहंत सिद्ध आचार्य श्रेष्ठ अरु उपाध्याय ऋषि संत भजूं।
आप्त कथित श्री द्वादशांग निर्ग्रन्थ दिगंबर साधु जजूं॥
सर्वज्ञ कथित दसधर्म दयामय षोडश श्रुत भावन भाऊं।
रत्नत्रय को धारण कर निज गुण में रमकर शिव पाऊं॥

॥ इत्याशीर्वादः ॥

पूजा नं०—८

अर्हंतजिन पूजा

स्थापना-अडिल्लछंद

समरंभ और समारंभ आरंभ तीन जूँ।
मन वच तन कृत कारित मोद कषाय चऊ॥
इन्हें गुणित कर पाप एक सौ आठ जूँ।
जीव रुले कर पाप मुक्त प्रभु को जजूँ॥

ॐ ह्रीं अष्टोत्तरशत पापास्त्रव विमुक्त अर्हत् जिन ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं अष्टोत्तरशत पापास्त्रव विमुक्त अर्हत् जिन ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।

ॐ ह्रीं अष्टोत्तरशत पापास्त्रव विमुक्त अर्हत् जिन ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं॥

अष्टपदी छंद

चाल—नंदीश्वर श्री जिन धाम....

अर्हंत के चरणों में हम भक्ति अमर कर दें।
श्रद्धा के सुमन लेकर निज शक्ति प्रबल कर दें॥ टेक॥

जग के प्राणी सब ही माया में डूब रहें।
जिनदेव के पूजन से भव नैया पार लहें॥
जलधार करें चरणान सब रोग विनश कर दें॥
अर्हंत के चरणों में हम भक्ति अमर कर दें।
श्रद्धा के सुमन लेकर निज शक्ति प्रबल कर दें॥ १॥

ॐ ह्रीं अष्टोत्तरशतपापास्रव विमुक्त अर्हत्‌जिनाय जलं० ॥

प्रभु राग रंग तजकर, वैराग्य धरें उर में।
तेरे गुण की सौरभ, प्रभु समा गई मुझमें॥
तव पद चंदन चर्चूं, भव ताप दूर कर दें॥ अर्हंत० ॥ २॥

ॐ ह्रीं अष्टोत्तरशतपापास्रवविमुक्तअर्हत्‌जिनाय चंदनं० ॥

भौतिक सुख में रमकर विज्ञान न हो निज में।
शाश्वत सुख बिन प्रभुवर अनुभव न हुआ मुझमें॥
शुभ पुंज अखंड लिये, अक्षत अर्पण कर दें॥ अर्हंत० ॥ ३॥

ॐ ह्रीं अष्टोत्तरशतपापास्रवविमुक्तअर्हत्‌जिनाय अक्षतं० ॥

लख चुरासि योनि में, भ्रमकर बहुदुख सहे।
प्रभु की मुद्रा लखके, आतम में लीन हुये॥
भक्ति के सुमन लेकर, कामारि दलन कर दें॥ अर्हंत० ॥ ४॥

ॐ ह्रीं अष्टोत्तरशतपापास्रवविमुक्तअर्हत्‌जिनाय पुष्पं० ॥

षटरस व्यंजन खाकर, फिर भी नहि तृप्त हुये।
प्रभु क्षुधा को नश करके, आतम रस स्वाद लिये॥
मैं भी निज रस चखकर, क्षुधा रोग दूर कर दें॥ अर्हंत० ॥ ५॥

ॐ ह्रीं अष्टोत्तरशतपापास्रवविमुक्तअर्हत्‌जिनाय नैवेद्यं०

लौकिक दीपक द्वारा जग का अंधकार नशे।
ले ज्ञानदीप अनुपम, मिथ्यातम दूर हटे॥
प्रभु की आरति करके, निज ज्ञान ज्योति भर दें॥ अर्हंत० ॥ ६॥

ॐ ह्रीं अष्टोत्तरशतपापास्रवविमुक्तअर्हत्‌जिनाय दीपं० ॥

कर्मों से निर्मित जीव, जगत में नित्य फंसे।
दुर्लभ नरतन पाकर नहि आतम रूप लसें॥
वर धूप शुद्ध खेकर, कर्मों का हवन कर दें॥ अर्हंत० ॥ ७॥

ॐ ह्रीं अष्टोत्तरशतपापास्रवविमुक्तअर्हत्‌जिनाय धूपं० ॥

मनवांछित फल इच्छुक, चहुंगति में खूब भ्रमे।
मनइंद्रिय वश करके, चक्रवर्ती शीघ्र बने॥
शाश्वत शिव फल हितु मैं, श्रीफल अर्पण कर दें॥ अर्हंत० ॥ ८॥
ॐ ह्रीं अष्टोत्तरशतपापास्रवविमुक्तअर्हत्जिनाय फलं० ॥
कंचन थाली लेकर, आठों ही द्रव्य सजें।
तेरे गुण अपने में, भरके निज रूप भजें॥
प्रभु अर्घ्य चढ़ाकर मैं, शिवपुर को गमन कर दें॥ अर्हंत० ॥ ९॥
ॐ ह्रीं अष्टोत्तरशतपापास्रवविमुक्तअर्हत्जिनाय अर्घ्यं० ॥

दोहा

इक सौ आठ जु पाप को, नशे धीर भगवंत।
ज्ञान गंग की धार दें, लगे भव्य शिवपंथ॥
शांतये शांतिधारा।
कर्मों की त्रेसठ प्रकृति, नशें वीर अर्हन्त।
पुष्पांजलि अर्पण करें, तिरें भवोदधि संत॥
दिव्य पुष्पांजलिः।

१०८ पाप रहित अर्हंत् भगवान के १०८ अर्घ

चाल- ऐ मां तेरी सूरत से अलग

अर्हंतदेव मन भाये हैं, श्रद्धायुत प्रभु को भज लेंगे।
भगवान-२ तेरी भक्ति के लिये हम अर्घ समर्पण कर देंगे॥ टेक॥
इक सौ अठ पाप कहे, मन संरंभ क्रोध किया।
अरिहंत रहित इनसे, पापों का विनाश किया॥
मन मंदिर में प्रभु को रख के, मन संरंभ क्रोध विनश देंगे।भग० ।१॥
ॐ ह्रीं क्रोध कृतमनः संरंभमुक्त अर्हत्जिनाय अर्घ्यं....।
पर से मन क्रोध संरंभ, प्रेरित कर कर्म बंधे।
भगवंत विमुक्त हुये, परमानंद शुद्ध लसे॥
अतिशय मूरत के दर्शन कर, सब पापों का क्षय कर देंगे।भग० ।२।
ॐ ह्रीं क्रोधकारितमनःसंरंभमुक्त अर्हत्जिनाय अर्घ्यं....।
क्रोधित मन से संरंभ, जो करते अनुमति दें।
प्रभु सदा रहित इनसे, कर्मों से नही बंधते॥

प्रभु तेरी अनुपम छवि लखके, सब दुख का विसर्जन कर देंगे ।।
अर्हंतदेव मन भाये हैं, श्रद्धायुत प्रभु को भज लेंगे।
भगवान-२ तेरी भक्ति के लिये हम अर्घ समर्पण कर देंगे ।। ३ ।।
ॐ ह्रीं क्रोधअनुमतमनःसंरंभमुक्तअर्हत्‌जिनाय अर्घ्यं. . . . ।
क्रोधी मन कर समारंभ, भव भव में नित्य भ्रमें।
प्रभु इनसे मुक्त हुये, निज में निज रूप रमें ।।
ऐसी अतिशय मूरत भजके शिवपंथ में विचरण कर देंगे ।भग० ।४ ।।
ॐ ह्रीं क्रोधकृतमनःसमारंभमुक्तअर्हत्‌जिनाय अर्घ्यं. . . . ।
पर क्रोधी मन समारंभ प्रेरित कर खेद लहें।
प्रभु पापों से हो विमुक्त, सिद्धों की श्रेणि गहें ।।
तेरे दरबार में आकर के तन मन धन अर्पण कर देंगे ।। भग० । ५ ।।
ॐ ह्रीं क्रोधकारितमनःसमारंभमुक्तअर्हत्‌जिनाय अर्घ्यं. . . . ।
जो मन से करते क्रोध, समारंभ में हर्ष करे।
प्रभु दूर करें सब क्षोभ आत्म स्वरूप धरें ।।
दुनियां की सब आशाओं को चरणों में तर्पण कर देंगे ।।भग० । ६ ।।
ॐ ह्रीं क्रोधअनुमतमनःसमारंभमुक्तअर्हत्‌जिनाय अर्घ्यं. . . . ।
क्रोधित मन से आरंभ, करके बहु पाप बंधे।
कर्मों से रहित अबंध प्रभु दर्पण सम चमके ।।
तेरे यश गुण को गाकर प्रभु हम हृदय कमल में रख लेंगे ।।
।। भग० ।। ७ ।।
ॐ ह्रीं क्रोधकृतमनःआरंभमुक्तअर्हत्‌जिनाय अर्घ्यं. . . . ।
जो मन से क्रोधारंभ, करवाते दोष घने।
प्रभु कभी न करते बंध, अकलंक विशुद्ध बने।
प्रभु तेरा ध्यान लगा करके, हम संयम धारण कर लेंगे ।। भग० ।८ ।
ॐ ह्रीं क्रोधकारितमनःआरंभमुक्तअर्हत्‌जिनाय अर्घ्यं. . . . ।
जो मन से क्रोधारंभ, कर अनुमति देत घने।
प्रभु तज कर्मों का द्वंद निर्विकार निरंजन हैं ।।
तेरे चरणों में झुक झुक कर, हम मुक्तिपुरी में बस लेंगे ।भग० ।९ ।
ॐ ह्रीं क्रोधअनुमतमनःआरंभमुक्तअर्हत्‌जिनाय अर्घ्यं. . . . ।

मुक्तकछंद

मान सहित मनोयोग द्वार से संरंभ करके पाप बंधे।
इन पापों से रहित शुद्ध अकलंक देव सब कर्म नशें॥
योगी भी जिनको उर में धारण कर आतम ध्याते हैं।
उन अरिहंत प्रभू को भजकर शिवपुर में बस जाते हैं॥ टेक॥

ॐ ह्रीं मानकृत मनः समरंभ मुक्त अर्हत्जिनाय अर्घ्यं. . . . ॥ १० ॥

मान उदय मनयोग से जो पर संरंभ कराते हैं।
इनसे विरहित परमातम के पाप कर्म धुल जाते हैं॥ योगी० ॥

ॐ ह्रीं मानकारितमनः समरंभमुक्त अर्हत्जिनाय अर्घ्यं. . . . ॥ ११ ॥

मान से जो संरंभ करे मन उनमें अनुमोदन धरते।
इनसे मुक्त हुये भगवन जो, निज में अवलोकन करते॥ योगी० ॥

ॐ ह्रीं मान अनुमतमनः समरंभमुक्त अर्हत्जिनाय अर्घ्यं. . . . ॥ १२ ॥

मान सहित मन संबंधी समारंभ करत जिय भ्रमत फिरे।
करें त्याग सब शुद्धातम में अचल लीन भगवंत खिलें॥ योगी० ॥

ॐ ह्रीं मानकृतमनः समारंभ मुक्त अर्हत्जिनाय अर्घ्यं. . . . ॥ १३ ॥

मानी मन से समारंभ कर, प्रेरित कर जो कष्ट सहें।
इन भावों से विरहित प्रभु जी, शुद्ध निजातम रूप लहें॥ योगी० ॥

ॐ ह्रीं मानकारितमनः समारंभमुक्तअर्हत्जिनाय अर्घ्यं. . . . ॥ १४ ॥

समारंभ मानी कर मन से, उनमें हर्षित कुगति लहें।
मुक्त हुये इन सबसे प्रभुवर, परमानंद में लीन रहें॥ योगी० ॥

ॐ ह्रीं मान अनुमत मनः समारंभ मुक्त अर्हत्जिनाय अर्घ्यं. . . . ॥ १५ ॥

मान युक्त मन से आरंभ कर, चौरासी लख योनि धरें।
इन पापों से विरहित प्रभु जी, कभी न फिर भव भ्रमण करें।योगी० ।

ॐ ह्रीं मानकृतमनः आरंभमुक्त अर्हत्जिनाय अर्घ्यं. . . . ॥ १६ ॥

मन से मान सहित आरंभ कर, उनको जो प्रेरित करते।
निर्विकल्प हो प्रभु जी इनसे, निज रस का स्वादन करते॥ योगी० ॥

ॐ ह्रीं मानकारित मनः आरंभ मुक्त अर्हत्जिनाय अर्घ्यं. . . . ॥ १७ ॥

मन युत मान से आरंभ कर, उनमें भी जो आनंद मानें।
निरालंब हो प्रभु जी इनसे , निज में निज को पहिचानें॥ योगी० ॥

ॐ ह्रीं मानअनुमतमनः आरंभमुक्त अर्हत्जिनाय अर्घ्यं. . . . ॥ १८ ॥

दोहा

मायावी मन से करें संरंभ पाप महान।
इनसे मुक्त प्रभो सदा गुण चैतन्य बखान॥
ॐ ह्रीं मायाकृतमन: संरंभ मुक्त अर्हत्‌जिनाय अर्घ्यं. . . . ॥१९ ॥

मायावी मन कर संरंभ जो प्रेरित दुख पाय।
इनसे रहित जिनेंद्र नित, आतम ज्योति जगाय॥
ॐ ह्रीं मायाकारितमन: संरंभ मुक्त अर्हत्‌जिनाय अर्घ्यं. . . . ॥ २० ॥

मायायुत मन कर संरंभ, उनमें जो हर्षाय।
प्रभु लहं शुद्ध स्वभाव को, सभी विभाव नशाय॥
ॐ ह्रीं माया अनुमतमन: संरंभमुक्त अर्हत्‌जिनाय अर्घ्यं. . . . ॥ २१ ॥

मायायुत मन से करें, समारंभ दुःख पाय।
इनसे मुक्त प्रभो भजूं चेतन गुण प्रगटाय॥
ॐ ह्रीं माया कृतमन: समारंभमुक्त अर्हत्‌जिनाय अर्घ्यं. . . . ॥ २२ ॥

मायावी समारंभ मन, जो प्रेरित कर खेद।
तिर्यंचायु बंधे जभी, भजूं प्रभो तज क्लेश॥
ॐ ह्रीं मायाकारितमन: समारंभमुक्त अर्हत्‌जिनाय अर्घ्यं. . . . ॥ २३ ॥

मायायुतसमारंभ मन, करें जो इनमें हर्ष।
पूजूं मैं अरिहंत को, तजे सभी संघर्ष॥
ॐ ह्रीं मायाअनुमतमन: समारंभमुक्त अर्हत्‌जिनाय अर्घ्यं. . . . ॥ २४ ॥

मायावी आरंभ मन, करके भ्रमे हैं आप।
चक्री सुरनर पूजतें, प्रभो तजें संताप॥
ॐ ह्रीं मायाकृतमन: आरंभमुक्त अर्हत्‌जिनाय अर्घ्यं. . . . ॥ २५ ॥

मायायुत आरंभ मन, इनमें पाप कराय।
चौरासि लख योनि धर, भजूं मुक्त जिनराय॥
ॐ ह्रीं मायाकारितमन: आरंभमुक्त अर्हत्‌जिनाय अर्घ्यं. . . . ॥ २६ ॥

आरंभ मन माया सहित, इनमें हर्ष बढ़ाय।
वे स्त्रीपर्याय धर भजूं प्रभो शिव पाय॥
ॐ ह्रीं मायाअनुमतमन: आरंभमुक्त अर्हत्‌जिनाय अर्घ्यं. . . . ॥ २७ ॥

स्रग्विणी छंद

लोभ में मन से संरंभ जो भी करे।
कर्म को बांधकर चारों गति में फिरे॥
इंद्र चक्री सभी प्रभु के चरणों नमें।
शाश्वत सुख प्राप्त कर ना कभी भव भ्रमें॥ २८॥

ॐ ह्रीं लोभकृतमनः संरंभमुक्त अर्हत्‌जिनाय अर्घ्यं...।

मन से संरंभ जो भी करे लोभ में।
अन्य प्रेरित करे योनियों में घुमे॥ इंद्र० ॥ २९ ॥

ॐ ह्रीं लोभकारितमनः संरंभमुक्त अर्हत्‌जिनाय अर्घ्यं....।

लोभी मन से हि सरंभ पाप करें।
जो भी हर्षित हुये नर्क गति को धरें॥ इंद्र० ॥ ३० ॥

ॐ ह्रीं लोभअनुमतमनः संरंभमुक्त अर्हत्‌जिनाय अर्घ्यं....।

लोभी मन से समारंभ पाप करें।
दुःख भोगे अनंते हि अश्रु भरें॥ इंद्र० ॥ ३१ ॥

ॐ ह्रीं लोभकृतमनः समारंभमुक्त अर्हत्‌जिनाय अर्घ्यं....।

लोभी मन से समारंभ करते सदा।
प्रेरणा दे जो भव अंत नहि हो कदा॥ इंद्र० ॥ ३२ ॥

ॐ ह्रीं लोभकारितमनः समारंभमुक्त अर्हत्‌जिनाय अर्घ्यं....।

जो समारंभ कर मन सहित लोभ में।
उनमें अनुमति दें वे दुःख भोगे घने॥ इंद्र० ॥ ३३ ॥

ॐ ह्रीं लोभ अनुमतमनः समारंभमुक्त अर्हत्‌जिनाय अर्घ्यं....।

लोभी आरंभ करते मनोयोग में।
कर्मों का आस्रव होता सदा भोग में॥ इंद्र० ॥ ३४ ॥

ॐ ह्रीं लोभकृतमनः आरंभमुक्त अर्हत्‌जिनाय अर्घ्यं....।

लोभ में करते आरंभ मनयोग से।
प्रेरणा दे न वे सुख लहें शोक से॥ इंद्र० ॥ ३५ ॥

ॐ ह्रीं लोभकारितमनः आरंभमुक्त अर्हत्‌जिनाय अर्घ्यं....।

लोभी आरंभ कर मन से पाप घने।
जो करें हर्ष उनमें नरकायु बंधे॥ इंद्र० ॥ ३६ ॥

ॐ ह्रीं लोभअनुमतमनः आरंभमुक्त अर्हत्‌जिनाय अर्घ्यं....।

हरिगीतिका छंद

क्रोधी वचन से प्राप्त संरंभ नित्य पापास्त्रव करें।
जो आत्म अनुभव अरु कभी संयम अवस्था नहि धरें।।
परमौदारिक सौम्य छवि अरिहंत प्रभु को जो भजें।
पंचमगती को प्राप्त कर वे, आत्म ज्योती जगमगे।। टेक।। ३७।।

ॐ ह्रीं क्रोधकृतवचन संरंभमुक्त अर्हत्‌जिनाय अर्घ्यं. . . .।

जो वचन से संरंभ क्रोध उदय में करते पाप हैं।
उनमें करें नित प्रेरणा जो भोगते संताप हैं।। परमौदारिक०।।

ॐ ह्रीं क्रोधकारितवचन संरंभमुक्त अर्हत्‌जिनाय अर्घ्यं. . . .।। ३८।।

क्रोधी वचन से नित करें संरंभ उनमें अनुमती।
वे मूढ, भेदविज्ञान के बिन , प्राप्त करते दुर्गती।। परमौदारिक०।।

ॐ ह्रीं क्रोधअनुमतवचन संरंभमुक्त अर्हत्‌जिनाय अर्घ्यं. . . .।। ३९।।

समारंभ क्रोधी कर वचन से कर्म बंधन बांधते।
वे भवोदधि में डूबते निज आत्म गुण को घातते।। परमौदारिक०।।

ॐ ह्रीं क्रोधकृतवचन समारंभमुक्त अर्हत्‌जिनाय अर्घ्यं. . . .।। ४०।।

जो क्रोध में अरु वचन से समारंभ करवाते सदा।
वे मनुष जीवन व्यर्थ कर नहि रत्नत्रय पाते कदा।। परमौदारिक०।।

ॐ ह्रीं क्रोध कारितवचन समारंभमुक्त अर्हत्‌जिनाय अर्घ्यं. . . .।। ४१।।

जो वचन से क्रोधी सदा समारंभ में हर्षित हुये।
वे क्षणिक दुख संसार में फिर पुनर्भव संचित किये।परमौदारिक०।।

ॐ ह्रीं क्रोध अनुमतवचन समारंभमुक्त अर्हत्‌जिनाय अर्घ्यं. . . .।। ४२।।

आरंभ करते वचन से अरु क्रोध में पापी सदा।
विषयों में फंसकर वे नहीं जीवन सफल करते कदा।।परमौदारिक०।

ॐ ह्रीं क्रोधकृतवचन आरंभमुक्त अर्हत्‌जिनाय अर्घ्यं. . . .।। ४३।।

जो क्रोध युत निजवचन से आरंभ में प्रेरित करें।
हिंसा अधिक करके कभी वे मुक्ति लक्ष्मी नहि धरें।परमौदारिक०।

ॐ ह्रीं क्रोधकारितवचन आरंभमुक्त अर्हत्‌जिनाय अर्घ्यं. . . .।। ४४।।

जो सदा आरंभ करते वचन से बहु क्रोध में।
उनमें करें अनुमोदना जो धर्म बिन जग में भ्रमे।। परमौदारिक०।।

ॐ ह्रीं क्रोध अनुमतवचन आरंभमुक्त अर्हत्‌जिनाय अर्घ्यं. . . .।। ४५।।

शेरछंद

जो वचन से संरंभ करे मान उदय में।
चिरकाल तक दुख भोग कर वे लोक में भ्रमे॥
नसे विमुक्त प्रभु का जो भी ध्यान लगावे।
वे आत्मनिधि, को प्राप्त ज्ञान ज्योति जगावे॥ टेक॥ ४६॥
ॐ ह्रीं मानकृतवचनसंरंभ मुक्त अर्हत्‌जिनाय अर्घ्यं....।
मानी करें संरंभ पाप नित्य वचन से।
प्रेरित करें इनमें जो सहे क्लेश व्यसन से॥ इनसे० ॥ ४७॥
ॐ ह्रीं मानकारितवचनसंरंभमुक्त अर्हत्‌जिनाय अर्घ्यं....।
जो मानयुत संरंभ वचन से करें सदा।
हर्षित हुये उनमें वे, बहुविध प्राप्त दुख सदा॥ इनसे० ॥ ४८॥
ॐ ह्रीं मानअनुमतवचनसंरंभमुक्त अर्हत्‌जिनाय अर्घ्यं....।
करते हैं समारंभ वचन से जो मान में।
वे मुक्ति मार्ग छोड़कर लगते कुमार्ग में॥ इनसे० ॥ ४९॥
ॐ ह्रीं मानकृतवचनसमारंभमुक्तअर्हत्‌जिनाय अर्घ्यं....।
जो मान युत वाणी से समारंभ कराते।
दुर्लभ चिंतामणि पाकर के वे व्यर्थ गमाते॥ इनसे० ॥ ५०॥
ॐ ह्रीं मानकारितवचनसमारंभमुक्त अर्हत्‌जिनाय अर्घ्यं....।
समारंभ मान सहित जो वचन से नित करें।
उनमें करें अनुमोदना , वे मुक्ति नमि धरें॥ इनसे० ॥ ५१॥
ॐ ह्रीं मानअनुमतवचनसमारंभमुक्त अर्हत्‌जिनाय अर्घ्यं....।
आरंभ करते मान में , वचन से मूढ़ जो।
तिर्यंचयोनी में पड़े, जहां कष्ट अधिक हो॥ इनसे० ॥ ५२॥
ॐ ह्रीं मानकृतवचनआरंभमुक्त अर्हत्‌जिनाय अर्घ्यं....।
जो वचन से आरंभ कराते हैं मान में।
संयम बिना वे पाप कमाते हैं नाम में॥ इनसे० ॥ ५३॥
ॐ ह्रीं मानकारितवचनआरंभमुक्त अर्हत्‌जिनाय अर्घ्यं....।
आरंभ करते मान सहित वचन से जो भी।
उनमें करें अनुमोदना, नहि तृप्त हों कभी॥ इनसे० ॥ ५४॥
ॐ ह्रीं मान अनुमतवचनआरंभमुक्त अर्हत्‌जिनाय अर्घ्यं....।

नाराचछंद

करें सरंभ पाप वाणि से महान् छद्म में।
धरें संबंध आत्म कर्म से महान शल्य में॥
रहें विमुक्त शुद्ध जो प्रभो ऋषी यती नमें।
मिले उन्हें अतींद्रि सुःख आत्म ज्योति में रमें॥ ५५॥ टेक॥

ॐ ह्रीं मायाकृतवचनसंरंभमुक्त अर्हत्‌जिनाय अर्घ्यं....।

धरें जु छद्म वाक्य से संरंभ को करावते।
करे विधात आप में न दिव्य ज्योति पावते॥ रहें० ॥ ५६॥

ॐ ह्रीं मायाकारितवचनसंरंभमुक्त अर्हत्‌जिनाय अर्घ्यं....।

संरंभ वाणि से जु छद्म में प्रमोद से भरें।
अनंत दुःख हेतु बंध को विनोद में करे॥ रहें० ॥ ५७॥

ॐ ह्रीं माया अनुमतवचनसंरंभमुक्त अर्हत्‌जिनाय अर्घ्यं....।

अडिल्लछंद

करें समारंभ मायायुत नित वचन से।
कुटिल भाव धर नहीं अंत भव भ्रमण से॥
कर्मों से निर्लेप शुद्ध प्रभु को भजूं।
मुझ में शक्ति प्रगट हो भक्ति सुमन सजूं॥ टेक॥ ५८॥

ॐ ह्रीं मायाकृतवचनसमारंभमुक्त अर्हत्‌जिनाय अर्घ्यं....।

समारंभ कर मायाचारी वचन से।
प्रेरित कर जो शोक लहें दुर्व्यसन से॥ कर्मों० ॥ ५९॥

ॐ ह्रीं मायाकारितवचनसमारंभमुक्त अर्हत्‌जिनाय अर्घ्यं....।

वाणी से कर समारंभ छल कपट में।
हर्ष लहें दुख इंद्रिविषय के लपट में॥ कर्मों० ॥ ६०॥

ॐ ह्रीं मायाअनुमतवचनसमारंभमुक्त अर्हत्‌जिनाय अर्घ्यं....।

माया से अरुवचन से कर आरंभ जो।
आधि व्याधि से ग्रस्त, प्रभू को नहि भजो॥ कर्मों० ॥ ६१॥

ॐ ह्रीं मायाकृतवचनआरंभमुक्त अर्हत्‌जिनाय अर्घ्यं....।

छल से और वचन से आरंभ जो करे।
उनमें जो प्रेरित कर संकट में पड़े॥ कर्मों० ॥ ६२॥

ॐ ह्रीं मायाकारितवचनआरंभमुक्त अर्हत्‌जिनाय अर्घ्यं....।

आरंभ कर जो वाणी से छलकपट में।
धरें हर्ष हो भ्रष्ट, कर्म के झपट में॥ कर्मों० ॥ ६३॥

ॐ ह्रीं मायाअनुमतवचनआरंभमुक्त अर्हत्‌जिनाय अर्घ्यं....।

मत्तगयंदछंद

चाल—वीर हिमाचल ते निकली.....

लोभ उदै नित वाणि करे बहु पाप संरंभ महा दुख पायो।
भेद विज्ञान बिना यह जीव, कभी नहिं आत्मस्वभाव सुहायो।।
नित्यनिरंजन शुद्ध चिदंबरचिद् परमातम को उर ध्यायो।
सूक्ष्म अतींद्रिय शाश्वत अक्षय सुक्ख सदा निज में प्रगटायो।टेक।६४।

ॐ ह्रीं लोभकृतवचनसंरंभमुक्त अर्हत्जिनाय अर्घ्यं....।

वाणी करे नित पाप संरंभ परिग्रह से युत लोभ उदय में।
जो इनमें कर प्रेरित यंत्रघटीसम मूढ़ सदा बहु घूमे।। नित्य०।। ६५।।

ॐ ह्रीं लोभ कारितवचनसंरंभमुक्त अर्हत्जिनाय अर्घ्यं....।

लोभ उदै युत पाप संरंभ करें नित वाणि सदा व्यसनों से।
जो नित हर्ष धरें उनमें बहु कर्म बंधे नित दुर्वचनों से।।नित्य०।६६।।

ॐ ह्रीं लोभअनुमतवचनसंरंभमुक्त अर्हत्जिनाय अर्घ्यं....।

पद्धरि छंद

जो समारंभ कर लोभ कीन, अरु वचन से कर भाषा मलीन।
प्रभु अमल अखंड स्वभाव युक्त मैं भजूं सदा संशय विमुक्त।६७।।

ॐ ह्रीं लोभकृतवचनसमारंभमुक्त अर्हत्जिनाय अर्घ्यं....।

जो वचन लोभ कर समारंभ, उनमें प्रेरित कर लहें द्वंद।प्रभु०।६८।

ॐ ह्रीं लोभकारितवचनसमारंभमुक्त अर्हतजिनाय अर्घ्यं....।

समारंभ में जो नित करे लोभ, लहं हर्ष वचन से धरे क्षोभ।प्रभु०।६९।

ॐ ह्रीं लोभ अनुमतवचनसमारंभमुक्त अर्हत्जिनाय अर्घ्यं....।

जो लोभ सहित आरंभ कीन, वे वचन से कर आतम मलीन।प्रभु०।७०।

ॐ ह्रीं लोभकृतवचनसमारंभमुक्त अर्हत्जिनाय अर्घ्यं....।

आरंभवचन कर लोभ सहित, जो करें प्रेरणा ज्ञान रहित।।प्रभु०।। ७१।।

ॐ ह्रीं लोभकारितवचनआरंभमुक्त अर्हत्जिनाय अर्घ्यं....।

आरंभ करे जो वचन लोभ, जो आनंद माने लहें क्षोभ।
प्रभु अमल अखंड स्वभाव युक्त, मैं भजूं सदा संशय विमुक्त।७२।

ॐ ह्रीं लोभअनुमतवचनआरंभमुक्त अर्हत्जिनाय अर्घ्यं....।

कुंडलिया

क्रोध उदय में काय से करें संरंभ महान।
लेश मात्र सुख नहि मिले, पाप करें मनमान॥
पाप करें मनमान पुण्य फल नाहि फले है।
विघ्न उपद्रव रोग आदि दुख नाहि टले है॥
जिनवर पाप विमुक्त, लोभ के शिखर पे जावें।
हम पूजें हो शुद्ध जगमग ज्योति जगावे॥ टेक॥ ७३॥
ॐ ह्रीं क्रोधकृतकायसंरंभमुक्त अर्हत्‌जिनाय अर्घ्यं....।
काय से जो नित क्रोध में बहु संरंभ कराय।
पंच परावर्तन बिषें, भ्रमत करत दुख पाय॥
भ्रमत करत दुख पाय, शांति सुख नाहि मिले है।
प्रभू की महिमा से ही सब आपत्ति टले है॥ जिन०॥ ७४॥
ॐ ह्रीं क्रोधकारितकायसंरंभमुक्त अर्हत्‌जिनाय अर्घ्यं....।
क्रोध में तन से कर संरंभ, हर्ष करें बहु जोर।
व्रत संयम पाले नहीं, खूब करें झकझोर॥
खूब करें झकझोर व्यर्थ में पाप कमावें।
क्रोध पाप के वशीभूत कुल दाग लगावे॥ जिन०॥ ७५॥
ॐ ह्रीं क्रोधअनुमतकायसंरंभमुक्त अर्हत्‌जिनाय अर्घ्यं....।
समारंभ कर काय से क्रोध सहित यह जीव।
सम्यकचारित के बिना, प्राप्त न हो संजीव॥
प्राप्त न हो संजीव कभी नहि प्रभु गुण गावें।
कोल्हू जैसा बैल, सदा ये कर्म घुमावें॥ जिन०॥ ७६॥
ॐ ह्रीं क्रोधकृतकायसमारंभमुक्त अर्हत्‌जिनाय अर्घ्यं....।
तन से जो भी क्रोध में समारंभ करवाय।
वे सम्यक्त्व निधी बिना, मोक्ष महल नहि पांय॥
मोक्ष महल नहि पांय व्यर्थ में नरतन खोवें।
दुर्लभ रत्न गमांय कांच टुकड़े को लेवें॥ जिन०॥ ७७॥
ॐ ह्रीं क्रोधकारितसमारंभमुक्त अर्हत्‌जिनाय अर्घ्यं....।
क्रोध युक्त तन से करें, समारंभ में मोद।
जो मन में दुर्भाव धर, करें न पाप निरोध॥

करें न पाप निरोध, अशुभ चेष्टा तन कीने।
सहे वेदना तीव्र, दुख संताप हो मन में॥ जिन०॥ ७८॥
ॐ ह्रीं क्रोधअनुमतकायसमारंभमुक्त अर्हत्जिनाय अर्घ्यं....।
आरंभ करें शरीर से क्रोध उदय में आप।
परम श्रेष्ठ बुद्धि बिना, निज संपत्ति न प्राप्त॥
निज संपत्ति न प्राप्त न श्रेष्ठ गुणों को धारें।
चिदानंद को ध्याय, वे ही कर्म विदारें॥ जिन०॥ ७९॥
ॐ ह्रीं क्रोधकृतकायआरंभमुक्त अर्हत्जिनाय अर्घ्यं....।
क्रोध उदय में काय से जो आरंभ कराय।
इष्ट वियोग अनिष्ट का योग महा दुखदाय॥
योग महादुखदाय आरत ध्यान करे हैं।
जिसके कारण जीव तिर्यंचकुयोनि धरे हैं॥ जिन०॥ ८०॥
ॐ ह्रीं क्रोधकारितकायआरंभमुक्त अर्हत्जिनाय अर्घ्यं....।
जो शरीर से क्रोध युत आरंभ में कर हर्ष।
अन्तरात्म बिन नहि लहें शुद्धातम पद श्रेष्ठ॥
शुद्धातम पद श्रेष्ठ लहें नहि जन्म मरण फिर।
स्वात्मसुधारस मांहि, पुनर्भव धरें न फिर फिर॥ जिन०॥ ८१॥
ॐ ह्रीं क्रोधअनुमतकायआरंभमुक्त अर्हत्जिनाय अर्घ्यं....।

चाल—जब तेरी डोली निकाली जायेगी....

जिनवर को भज करके हो शुद्धात्मा।
आत्मा से मैं बनूं परमात्मा॥ टेक॥
तन से जो संरंभ करते मान में।
जिंदगी बरबाद करते शान में॥
प्रभु हुये कृतकृत्य शुद्ध महात्मा॥ आत्मा०॥ ८२॥
ॐ ह्रीं मानकृतकायसंरंभमुक्त अर्हत्जिनाय अर्घ्यं....।
संरंभ तन से करवाते जो मान में।
संकट भोगे मूढ़ नित अभिमान में॥
प्रभु जी हैं निर्पेक्ष शुद्ध महात्मा॥ आत्मा०॥ ८३॥
ॐ ह्रीं मानकारितकायसंरंभमुक्त अर्हत्जिनाय अर्घ्यं....।

मान में कर संरंभ तन से हर्ष जो।
रागद्वेष करके दुख भोगे मूढ़ वो॥
प्रभु जी हैं निर्विकार शुद्ध महात्मा॥
आत्मा से मैं बनूं परमात्मा॥ ८४॥

मानअनुमतकायसंरंभमुक्त अर्हत्‌जिनाय अर्घ्यं....।

समारंभ करते तन से जो मान में।
देवदर्शनबिन लहें दुख शान में॥
प्रभु जी हैं निकलंक शुद्ध महात्मा॥ आत्मा० ॥ ८५ ॥

मानकृतकायसमारंभमुक्त अर्हत्‌जिनाय अर्घ्यं....।

तन से करवाते समारंभ मान में।
रात्रि भोजन करें न सुख अभिमान में॥
प्रभु जी हैं निष्कर्म शुद्ध महात्मा॥ आत्मा० ॥ ८६ ॥

ं मानकारितकायसमारंभमुक्त अर्हत्‌जिनाय अर्घ्यं....।

तन से हर्षित समारंभ युत मान में।
भौतिक सुख में डूबते हैं नाम में॥
प्रभु जी पापों से विमुक्त महात्मा॥ आत्मा० ॥ ८७ ॥

ह्रीं मानअनुमतकायसमारंभमुक्त अर्हत्‌जिनाय अर्घ्यं....।

आरंभ करते काय से अभिमान में।
कंदमूल खाते अज्ञानी जान में॥
प्रभु जी हैं अविनश्वर शुद्ध महात्मा॥ आत्मा० ॥ ८८ ॥

ह्रीं मानकृतकायआरंभमुक्त अर्हत्‌जिनाय अर्घ्यं....।

काय से जो करवाते आरंभ सदा।
परमानंद को नहि लहे मानी कदा॥
प्रभु जी शाश्वत सुख में रमें महात्मा॥आत्मा० ॥ ८९ ॥

ह्रीं मानकारितकायआरंभमुक्त अर्हत्‌जिनाय अर्घ्यं....।

आरंभ करते काय से हर्षित हुये।
अष्टमूलगुणबिन नही शिवपुर लहें॥
पंचमगति प्रभु लहें विशुद्ध महात्मा॥ आत्मा० ॥ ९० ॥

ॐ ह्रीं मानअनुमतकायआरंभमुक्त अर्हत्‌जिनाय अर्घ्यं....।

चाल—मेरे मन मंदिर.....

मेरे मन मंदिर में आन पधारो श्री अर्हंत महान॥ टेक॥
संरंभ करते तन माया में लुटा दिया निधि सब काया में।
प्रभु विशुद्ध कर यशगुण गान॥ पधारो० ॥ ९१ ॥

ॐ ह्रीं मायाकृतकायसंरंभमुक्त अर्हत्‌जिनाय अर्घ्यं....।

तन संरंभ कराते छल में।
मिथ्यातम छाया है मन में॥
कर्म मुक्त प्रभु उर में आन॥ पधारो० ॥ ९२ ॥

ॐ ह्रीं मायाकारितकायसंरंभमुक्त अर्हत्‌जिनाय अर्घ्यं....।

छल से संरंभ करे काय में।
उनमें हर्ष धरें, सुचाव में॥
सम्यक ज्योति लहें उर आन॥ पधारो० ॥ ९३ ॥

ॐ ह्रीं मायाअनुमतकायसंरंभमुक्त अर्हत्‌जिनाय अर्घ्यं....।

समारंभ कर जो काया में।
पाप की गठरी बंधे माया में॥
दिव्य सुपुंज प्रभो उर आन॥ पधारो० ॥ ९४ ॥

ॐ ह्रीं मायाकृतकायसमारंभमुक्त अर्हत्‌जिनाय अर्घ्यं....।

जो तन से समारंभ कराते।
छलकपटी स्त्रीयोनिमें जाते॥
आत्मतृप्ति कर प्रभु उर आन॥
पधारो श्री अर्हंत महान॥ ९५ ॥

ॐ ह्रीं मायाकारितकायसमारंभमुक्त अर्हत्‌जिनाय अर्घ्यं....।

तन से छल में समारंभ कर।
दुर्गति कारण अनुमोदन कर॥
परमामृत लहं प्रभु उर आन॥ पधारो० ॥ ९६ ॥

ॐ ह्रीं मायाअनुमतकायसमारंभमुक्त अर्हत्‌जिनाय अर्घ्यं....।

आरंभ करते जो सराग में।
काया से छल करें राग में॥
वीतराग युत प्रभु उर आन॥ पधारो० ॥ ९७ ॥

ॐ ह्रीं मायाकृतकायआरंभमुक्त अर्हत्‌जिनाय अर्घ्यं....।

तन से कपट करें अज्ञानी।
आरंभ में प्रेरित दुखदानी॥
आत्मिक सुख लहं प्रभु उर आन॥पधारो०॥९८॥

ॐ ह्रीं मायाकारितकायआरंभमुक्त अर्हत्‌जिनाय अर्घ्यं....।

कपट करें तन से मनमानी।
आरंभ में हर्षित हैं प्राणी॥
निज वैभवयुत प्रभु उर आन॥ पधारो०॥ ९९॥

ॐ ह्रीं मायाअनुमतकायआरंभमुक्त अर्हत्‌जिनाय अर्घ्यं....।

चाल—श्याम तेरी बंशी.....

आओ सब मिल करलें, प्रभू का गुणगान।
मुक्ति का धाम मिले, सिद्धों का नाम॥
आतम की ज्योति, जगे है महान।
मुक्ति का धाम मिले, सिद्धों का नाम॥ टेक॥
लोभ में तन से संरंभ, करके दुख उठावे।
सुंदर सुंदर हाथों में, कंगन लटकावें॥
दान देकर जीवन, को सफल बनावें।
मोक्ष टिकट ले लो जिसमें रत्नत्रय नाम॥मुक्ति०॥ १००॥

ॐ ह्रीं लोभकृतकायसंरंभमुक्त अर्हत्‌जिनाय अर्घ्यं....।

लोभ में तन से संरंभ करावे।
पैरों से पायल की घुंघरू बजावें॥
तीर्थों की यात्रा में मन ना लुभावे।
सब तीर्थ यात्रा करो जी अभिराम॥ मुक्ति०॥ १०१॥

ॐ ह्रीं लोभकारितकायसंरंभमुक्त अर्हत्‌जिनाय अर्घ्यं....।

लोभ में तन से संरंभ करके हर्ष बढ़ावें।
नेत्रों से फिल्म देख मन बहलावे॥
कानों को व्यर्थ की बातें सुनावें।
शास्त्रों को सुनके प्रभु दर्शन को आन॥मुक्ति०॥ १०२॥

ॐ ह्रीं लोभ अनुमतकायसंरंभमुक्त अर्हत्‌जिनाय अर्घ्यं....।

लोभ में तन से समारंभ कर सारे।
मर्म भेदी वचनों को मुख से निकाले॥
धर्मामृत वाणी को बोलो सुजान॥ मुक्ति०॥ १०३॥
ॐ ह्रीं लोभकृतकायसमारंभमुक्त अर्हत्‌जिनाय अर्घ्यं....।
लोभ में तन से समारंभ करावे।
वस्त्र आभूषण से तन को सजावे॥
साबुन फुलेल इत्र पाउडर लगावे।
इनको तजके गुण से सजाओ आतमराम॥ मुक्ति०॥ १०४॥
ॐ ह्रीं लोभकारितकायसमारंभमुक्त अर्हत्‌जिनाय अर्घ्यं....।
काय से लोभयुत समारंभ में हर्षावे।
भौतिक वासनाओं में पाप कमावें।
भक्ति करके प्रभु का करो आत्मध्यान॥ मुक्ति०॥ १०५॥
ॐ ह्रीं लोभअनुमतकायसमारंभमुक्त अर्हत्‌जिनाय अर्घ्यं....।

चाल—चंदना पुकारे तेरे द्वार पे खड़ी.....

अरिहंतों की पूजन कर गुणगान नित करूं।
आत्म से परमात्म बनकर सिद्ध पद धरूं॥ टेक॥
लोभ में काय से आरंभ कर जो आतम से मुख मोड़ रहे हैं।
मोह के कारण से मोही नित खूब आरंभ को जोड़ रहे हैं॥
शुद्ध बुद्ध अरिहंतों का मैं ध्यान नित करूं॥ आत्म०॥ १०६॥
ॐ ह्रीं लोभकृतकायआरंभमुक्त अर्हत्‌जिनाय अर्घ्यं....।
काय सहित यह प्राणी लोभ में आकर बहु आरंभ करावें।
मकड़ी का सा जाल बनाकर, उसमें फँसकर प्राण गमावें॥
समोशरण में अरिहंतों का ध्यान नित करूं।
आत्म से परमात्म बनकर सिद्ध पद धरूं॥ १०७॥
ॐ ह्रीं लोभकारितकायआरंभमुक्त अर्हत्‌जिनाय अर्घ्यं....।
तन से लोभ उदय में प्राणी आरंभ करके हर्ष बढ़ावें।
जो भवि सब पापों को तजते, वे भववारिधि से तिर जावें॥
सर्व पाप से मुक्त प्रभू की भक्ति नित करूं॥ आत्म०। १०८॥
ॐ ह्रीं लोभ अनुमतकायआरंभमुक्त अर्हत्‌जिनाय अर्घ्यं....।

पूर्णार्घ्य

चाल—दीनानाथपुकार .....

भगवन मेरी विनती सुनलो चेतन ज्योति पुकार।
तेरे बिन स्वामी मेरा कौन करे उद्धार॥ टेक॥
कर्म बहुत ही दुख दिये भरमाये हैं।
फल किंपाक समान भोग तड़फाये हैं॥
सती चंदना के फाटक खुलवाये हैं।
कोदों को चावल के खीर बनाये हैं।
सती अंजना का तुमने ही दुख मेटो तत्काल ॥ तेरे० ॥
अंजन जैसे पापी तुमने तारे हैं।
पतित अनाथों को भव पार उतारे हैं।
सेठ सुदर्शन को शूली से सिंहासन पे बिठार॥ तेरे० ॥
तुमने ही द्रोपदि का चीर बढ़ाया था।
सीता प्रति सिंहासन कमल रचाया था॥
गणधर इंद्र सभी प्रभु यशगुण गाते हैं।
भक्ती करके वे दुख से तिर जाते हैं।
भंवर बीच है मेरी नैया कर दो किनारे पार॥ तेरे० ॥

दोहा

पाप एक सौ आठ कहं, हुये मुक्त अरिहंत।
इक शत अठ गुण शोभते, पूजूं श्री भगवंत॥

ॐ ह्रीं अष्टोत्तरशतपापास्रवमुक्तइकशतअष्टगुणसहित अर्हत्जिनाय पूर्णार्घ्यं० ॥
जाप्य—ॐ ह्रीं श्री धर्मचक्राय नम:

जयमाला

सोरठा

भजूं प्रभू को नित्य, भव वारिधि से झट तिरूँ।
आत्म शांति के हेतु, गाऊं प्रभु जयमालिका॥

चाल—आई शुभ की घड़ी.....

मेरी अर्हंतों के ध्यान में बीते जिंदगी॥
निशदिन आतम के कल्याण में बीते जिंदगी॥ टेक॥
क्रोध मानमायालोभादिक पाप किये मनमानी।
विषयों के फंदों में फंसकर बांधे कर्म अज्ञानी॥
चिंता चिंता में निकल गई सारी जिंदगी॥ १॥
बचपन खेलकूद में बीता, यौवन में घुर्राया।
देख बुढ़ापा लाठी टेकी सूझ बूझ नहिं पाया॥
निद्रा-निद्रा में निकल गई सारी जिंदगी॥ मेरी०॥ २॥
कोट बूट पतलून पहनकर, तन को खूब सजाया।
इतने पर भी दिल नहिं माना, सिर पर टोप लगाया॥
तृष्णा-तृष्णा में निकल गई सारी जिंदगी॥ मेरी०॥ ३॥
चीन-जर्मनी इंग्लैंड की, खूब हवा मैं खाया।
होटल की भी चाय मंगाकर, मौज से खूब उड़ाया॥
भिक्षा-भिक्षा में निकल गई सारी जिंदगी॥ मेरी०॥ ४॥
मकड़ी का सा जाल बिछाकर, गृह जंजाल बढ़ाया।
पुत्र कलत्र स्वजन बंधू में, खूब हि प्रीत लगाया॥
ममता-ममता में निकल गई सारी जिंदगी॥ मेरी०॥ ५॥
धर्म-कर्म आचार उठाकर, विषय देख ललचाया।
खाकर भक्षा-भक्ष गटा-गट, मिथ्यातम है छाया॥
धंधा-धंधा में निकल गई सारी जिंदगी॥ मेरी०॥ ६॥
वही भव्य है देव शास्त्र गुरु के प्रति भक्ति जगाया।
रत्न अमोलक पाकर के जो जीवन सफल बनाया॥
टंटा-टंटा में निकल गई सारी जिंदगी॥ मेरी०॥ ७॥
अतः बंधुओं मुक्तिपंथ में लगकर तज दो माया।
"अभयमतीजी" कहे वीर की वाणी भज लो भाया॥
घंटा घंटा में निकल गई सारी जिंदगी। मेरी०॥ ८॥

घत्ता

जय अरिंहता, जिन भगवंता पूर्ण महंता सुखकारी।
मैं पूजूं ध्याऊं , शीश झुकाऊं बलिबलि जाऊं दुखहारी॥

ॐ ह्रीं अष्टोत्तरशतपापास्त्रवमुक्तइकशतअष्टगुणसहित अर्हत्जिनाय जयमाला पूर्णार्घ्यं० ॥

गीता छंद

जो भव्य श्रद्धा भक्ति से अर्हंत जिन पूजा करें।
वे ऋद्धि सिद्धि समृद्धि लौकिक आदि सुख निधि को भरें।
फिर मुक्ति लक्ष्मी का वरण कर सहज आत्मिक सुख जगे।
शिव महल में आवास कर, निज आत्मज्योति जगमगे॥

॥ इत्याशीर्वादः ॥

पूजा नं०— ९

श्री आदिनाथ जिन पूजा

स्थापना

हरिगीतिका छंद

पितु नाभिराज व मात मरुदेवी सुसुत वृषभेश जी।
सर्वार्थसिद्धि से उतरकर मध्यलोक विराजही॥
सुर इन्द्र नर धरणेंद्र सब मिल, आपकी कर स्तुती।
आह्वान विधिकर पूजियो, जिससे मिले नहि दुर्गती॥

ॐ ह्रीं श्री आदिनाथजिनेंद्र ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।
ॐ ह्रीं श्री आदिनाथजिनेंद्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।
ॐ ह्रीं श्री आदिनाथजिनेंद्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं।

अष्टपदी छंद

चाल— नंदीश्वर पूजन०......

क्षीरोदधि शुचि जल धार, जिन चरणन छोडूं।
प्रभु जन्म जरा निरवार, अन्तर मल धोलूं॥
श्री आदिनाथ ऋषिराज, तुमको नित अर्चूं।
बस यही भावना आज, भव भव से छूटूं॥ टेक॥ १॥
ॐ ह्रीं श्री आदिनाथजिनेंद्राय जन्मरामृत्यु विनाशनाय जलं....।

कर्पूर सुगंधित सार, चंदन शुद्ध घसूं।
भव दुख आताप निवार, प्रभु चरणन चर्चूं॥ श्री०॥ २॥
ॐ ह्रीं श्री आदिनाथजिनेंद्राय संसार ताप विनाशनाय चंदनं....।

सित सुरभि अखंडित शालि, कंचन थाल भरूं।
अक्षय पद के हितकारि, अक्षत पुंज धरूं॥ श्री०॥ ३॥
ॐ ह्रीं श्री आदिनाथजिनेंद्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं....।

बहु भांति सुपुष्प मंगाय, प्रभु के चरण सजूं।
जब काम वाण विनशाय, निज के हेतु जजूं॥ श्री०॥ ४॥
ॐ ह्रीं श्री आदिनाथजिनेंद्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं....।

बहुविध पकवान बनाय, नेवज थाल भरूं।
जब क्षुधा रोग नश जाय, प्रभु को भेंट करूं॥ श्री०॥ ५॥
ॐ ह्रीं श्री आदिनाथजिनेंद्राय क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं....।

रत्नों के दीप सजाय, आरति खूब करूं।
प्रभु जगमग ज्योति जलाय, मोह विनाश करूं॥ श्री०॥ ६॥
ॐ ह्रीं श्री आदिनाथजिनेंद्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं....।

वर धूप सुगंधित लाय, प्रभु आगे खेऊं।
जब अष्ट कर्म जल जाय, निज आतम सेऊं॥ श्री०॥ ७॥
ॐ ह्रीं श्री आदिनाथजिनेंद्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं....।

बहु फल अंगूर अनार, श्रीफल आदि धरूं।
शिव प्राप्त हेतु निर्धार, प्रभु को भेंट करूं॥ श्री०॥ ८॥
ॐ ह्रीं श्री आदिनाथजिनेंद्राय मोक्षफल प्राप्तये फलं....।

जल चन्दन अक्षत पुष्प, नेवज दीप सजूं।
फल धूप अर्घ ले हर्ष, प्रभु को नित्य भजूं॥ श्री०॥ ९॥
ॐ ह्रीं श्री आदिनाथजिनेंद्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं....।

चाल— जिनने तीन लोक.....

चौबोल छंद

इस दुनियां में आकर तुमने क्या कुछ धर्म कमाया है।
मोह जाल में फंसकर सचमुच हीरा जनम गमाया है॥
नेत्र युगल हैं पास तुम्हारे और पास में है पैसा।
प्रभु की भक्ती कर ले क्यों तू व्यर्थ में पाप कमाया है॥ १॥
पुष्प समान हृदय कोमल है सोच नहीं पाया तुमने क्या।
चल तू आदिनाथ के पथ पर जिनने मुक्ति दिखाया है॥
अब तो चेत रे चेतन प्यारे मानुषरत्न जो पाया है।
आत्म शांति हितु धार देत प्रभु, जीवन सफल बनाया है॥

शांतये शांतिधारा।

दोहा

मन वच तन से नित भजूं आदिनाथ ऋषिराज।
पुष्पांजलि अर्पण करूं, आत्मसिद्धि के काज॥

"दिव्य पुष्पांजलिः"।

पंच कल्याणक अर्घ्य

सखी छंद

प्रभु स्वर्गपुरी से आये, मरुदेवी के उर भाये।
वदि दोज अषाढ़ कहाये, शुभ गर्भ कल्याण मनाये॥ १॥

ॐ ह्रीं आषाढकृष्णाद्वितीयायां गर्भकल्याणकप्राप्तायश्री आदिनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं.।

शुभ चैत वदी नवमी का, प्रभु जन्म अयोध्यापुरी का।
हो जन्म कल्याण प्रभू का, हम पूजें ऋषभ जिनेशा॥ २॥

ॐ ह्रीं चैत्र कृष्णा नवम्यां जन्मकल्याणकप्राप्तायश्री आदिनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं..।

वदि चैत सुनवमी प्यारा, सब तज प्रभु संयम धारा।
हो तप कल्याणक न्यारा, हम पूजें ऋषभ दुलारा॥ ३॥

ॐ ह्रीं चैत्रकृष्णा नवम्यां तपकल्याणकप्राप्तायश्री आदिनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं...।

वदि फागुन एकादशी के हो, ज्ञान कल्याणक श्री के।
सुन दिव्यध्वनि इन्द्र अर्चें, हम भी प्रभु को नित चर्चें॥ ४॥

ॐ ह्रीं फाल्गुनकृष्णाएकादश्यां ज्ञानकल्याणकप्राप्तायश्री आदिनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं।

कृष्ण माघ सु चौदस भाये, प्रभु मोक्ष कल्याण मनाये।
भवि जीवों को हर्षाये, हम सब जिन शीश झुकाये॥ ५॥

ॐ ह्रीं माघकृष्णाचतुर्दश्यांमोक्षकल्याणकप्राप्तायश्री आदिनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं. .।
जाप्य—ॐ ह्रीं श्री धर्मचक्राय नम:

जयमाला

हम सब पूजें आपको, आदीश्वर ऋषिराज।
गाऊँ तव जयमालिका, आत्मसिद्धि के काज॥

स्रग्विणी छन्द वर्णिक

ओ ऋषभदेव जी, ओ ऋषभदेव जी।
मम सुनो वीनती ओ ऋषभदेव जी॥
दु:ख चारों गती में सतायो सही।
एक लो भोग मैं ना बटायो कहीं॥ १॥
मैं निगोदी हुआ, नारकी भी हुआ।
मानुषी भी हुआ किन्तु पापी हुआ॥
औ पशू भी हुआ दु:ख पायो घना।
कोइ मारो घना कोइ बांधो घना॥ २॥
कोइ काटे घना अंग फाड़े घना।
ऊँट भैंसा हुवा भार लादे घना॥
पुण्य संजोग से देव वासी हुआ।
किन्तु देवांगना संग रागी हुआ॥ ३॥
खेल क्रीडा कियो भोग में भी रम्यो।
मैं कछू ना कियो काल यों ही गयो॥
माल मुर्झाइ अज्ञानि रोते फिरें।
हाय कर्मों की रेखा न टाले टले॥ ४॥
गर्भ में दु:ख संताप भारी धरे।
ना हिले ना डुले ना चले ना फिरे॥
चर्परो मात खावे घना त्रास हो।
गर्भ खावे जभी खूब संताप हो॥ ५॥

औंध झूल्यो रह्यो कष्ट से नीसर्‌यो।
खूब रोतो रु बिलख्यो जु नीचे पड्‌यों॥
भूख लागे घनी दूध पीवे जभी।
हाय संसार में को सुखी ना कभी॥ ६॥
यो न चारों गती में सुखी कोइ भी।
मैं कहूँ कौन सो आप जानो सभी॥
मेट दो दुःख मोको करूं वीनती।
हाथ जोड़ूँ पडूं पांव मैं झूमती॥ ७॥
इन्द्र की चाह ना चक्रि की चाह ना।
भोग की चाह ना सुःख की चाह ना॥
स्वर्ग की चाह ना ग्रन्थ की वासना।
वीतरागी बनूं मम यही कामना॥ ८॥
मैं करूं भक्ति तेरी ऋषभनाथ जी।
घोर संसार से मोहि तारो अभी॥
मैं करूं ध्यान तेरा हरूं दुःख जी।
मैं धरूं ज्ञान डेरा मिले मुक्ति भी॥ ९॥

दोहा

श्री जी की महिमा अगम है, को कर सके बखान।
मैं मति मन्द अजान हूँ, प्रभु गुणों की खान॥

ॐ ह्रीं श्री आदिनाथ जिनेन्द्राय जयमालापूर्णार्घ्यं०।

दोहा

ऋषभ प्रभू को नमन कर, पूजे मन वच काय।
"अभयमती"नित ध्यान धर, झट शिवपुर को जाय॥
कृपा सदा करते रहो, आदिनाथ भगवान।
भक्ति सुमन अर्पण करें, बनें शीघ्र भगवान॥

इत्याशीर्वादः पुष्पांजलिः।

पूजा नं०—१०

श्री अजितनाथ पूजन

स्थापना

शंभु छंद

चाल—पूजन करो जी ......

श्री अजितनाथ भगवान की सब पूजन करो जी।
जिनकी पूजन करने से मिथ्यात्व दूर भग जाता है।
निज तत्व प्रकाशित हो करके सम्यक्त्व पास में आता है॥
जिनकी अमृतवाणी से निज ज्ञान ज्योति जग जाता है।
स्थापन कर पूजूं भगवन जो शिवपुर को पहुंचाता है॥
पूजन करो जी . . . . .
श्री अजितनाथ भगवान की सब पूजन करो जी॥

ॐ ह्रीं अजितनाथ जिनेंद्र ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।
ॐ ह्रीं अजितनाथ जिनेंद्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।
ॐ ह्रीं अजितनाथ जिनेंद्र ! अत्र मम सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधीकरणं।

स्वच्छ शुद्ध जल प्रासुक लेकर जिनपद निर्मल धार करूं।
नित शोभित मम हृदय कमल में अजित प्रभू का ध्यान धरूं॥
हे नाथ आपकी भक्ती ही भव भव संचित कल्मष धोवे।
समतारस अमृत प्राप्त हेतु निज अंतर ज्योति प्रगट होवे॥ टेक॥

ॐ ह्रीं अजितनाथजिनेंद्राय जन्मजरामृत्यु विनाशनाय जलं. . . ॥ १ ॥

शीतलताहित चंदनघिसकर सुरभित जिनपद चर्च करूं।
नित्यविभूषित आत्म कमल में अजित प्रभू का ध्यान करूं।हे नाथ०।

ॐ ह्रीं अजितनाथजिनेंद्राय संसार ताप विनाशनाय चंदनं. . . . ॥ २ ॥

भक्ति सहित अक्षत लेकर श्री जिनप्रतिपुंज अखंड भरूं।
नित भूषित मम हृदय कमल में, अजितप्रभू का ध्यान धरूं।हेनाथ०।

ॐ ह्रीं अजितनाथजिनेंद्राय अक्षय पद प्राप्तये अक्षतं. . . . ॥ ३ ॥

काम वाण नाशक सुपुष्प ले, निज प्रति श्रद्धाभक्ति करूं।
सदा सुशोभित आत्मकमल में अजितप्रभू का ध्यान धरूं।।
हे नाथ आपकी भक्ती ही भव भव संचित कल्मष धोवे।
समतारस अमृत प्राप्त हेतु निज अंतर ज्योति प्रगट होवे।।
ॐ ह्रीं अजितनाथजिनेंद्राय कामवाण विध्वंसनाय पुष्पं. . . . ॥ ४ ॥
आतम रस चखने हित नेवज व्यंजन जिनमति भेंट करूं।
नित्य प्रकाशित हृदय कमल में अजित प्रभू का ध्यान धरूं।हेनाथ०।
ॐ ह्रीं अजितनाथजिनेंद्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं. . . . ॥ ५ ॥
मणिरत्नों के दीपक लेकर श्री जिनवर प्रति भक्ति करूं।
नित्य विराजित हृदय कमल में अजितप्रभू का ध्यान धरूं।।हेनाथ०।।
ॐ ह्रीं अजितनाथजिनेंद्राय मोहांधकार विनाशनाय दीपं. . . . ॥ ६ ॥
अष्ट कर्म नाशक सुधूप खे श्री जिनवर प्रति अर्च करूं।
नित विकसित मम हृदय कमल में अजितप्रभू का ध्यान धरूं।हेनाथ०।
ॐ ह्रीं अजितनाथजिनेंद्राय अष्टकर्म दहनाय धूपं. . . . ॥ ७ ॥
मुक्ति प्राप्ति हित कल्पवृक्ष के फल लेकर जिन भेंट करूं।
नित शोभित मम हृदय कमल में अजितप्रभू का ध्यान धरूं।हेनाथ०।
ॐ ह्रीं अजितनाथजिनेंद्राय मोक्षफल प्राप्तये फलं. . . . ॥ ८ ॥
शिवपुर मंजिल शाश्वत सुखहित श्रीजिनवर प्रति अर्घ धरूं।
नित्य विराजित हृदय कमल में अजित प्रभू का ध्यान धरूं।हेनाथ०।।
ॐ ह्रीं अजितनाथजिनेंद्रायअनर्घ्य पदप्राप्तये अर्घ्यं. . . . ॥ ९ ॥

शंभु छंद

झिलमिल झिलमिल छठा निराली पावन मूर्ति पवित्र अहा।
विघन निवारक मंगल कारक हो पवित्रप्रभु देव महा।।
मनवांछित फल प्राप्त करन को जजूं सौम्य शुभ मूर्ति अहा।
ज्ञान गंग की धार करूं प्रभु मेटो जग दुख फंद महा।।
शांतये शांतिधारा।
निर्मल स्वच्छ स्फटिक मणी अरु पुण्य चमेली समकांती।
ऐसी अनुपम छटा दिखे नित, बढ़े सुदिन दूनी क्रांती।।
कभी दिखे असली मुक्ताफल, कभी दुग्ध घृत समकांती।
कभी दिखे हीरा चांदी सम कभी रत्न सम है कांती।।
दिव्य पुष्पांजलिः।

पंचकल्याणक अर्घ्य

चाल— आओ भाई तुम्हें सुनाये.....

मिथ्यातम की रजनी बीती आया स्वर्ण प्रभात है।
तीर्थंकर कल्याण महोत्सव सफल करें दिनरात हैं॥
स्वर्गों से इंद्रों ने आकर अजितप्रभू के गुण गाया।
दिव्य अलौकिक रत्न ज्योति को प्रभु आंगन में चमकाया॥
उत्सव करते सभी इंद्रगण गर्भ कल्याण प्रभात है।तीर्थंकर० ॥ १ ॥
वंदे जिनवरं-३

ॐ ह्रीं अजितनाथस्य ज्येष्ठकृष्णामावस्यायां गर्भकल्याणकाय अर्घ्यं० ।

आसमान से तारे आकर प्रभु महिमा को दर्शाया।
मानो भक्ति में विभोर हो गुण रत्नों को फैलाया॥
देव इंद्र गुण गाकर हारे अतिशय जन्म प्रभात है।तीर्थंकर० ॥ २ ॥
वंदे जिनवरं-३

ॐ ह्रीं माघशुक्लादशम्यां अजितनाथजन्मकल्याणकाय अर्घ्यं० ।

धर्मवीर अरु कर्मवीर निज आत्मवीर बन दिखलाया।
सत्य शिवं सोऽहं को लेकर अनेकांत ध्वज फहराया॥
सुरगण इंद्र महोत्सव करते तप कल्याण प्रभात है।तीर्थंकर० ॥ ३ ॥
वन्दे जिनवरं-३

ॐ ह्रीं माघशुक्लानवम्यां अजितनाथदीक्षाकल्याणकाय अर्घ्यं० ।

मानव रूपी रत्न अमोलक भारत में है चमकाया।
आत्मधर्म का अद्‌भुत चेतन सत्यरूप बन दिखलाया॥
प्रभु की वाणी अमल करें हम मंगल ज्ञान प्रभात है।तीर्थंकर० । ४ ।
वन्दे जिनवरं-३

ॐ ह्रीं पौषशुक्लाएकादश्यां अजितनाथकेवलज्ञानकल्याणकाय अर्घ्यं० ।

अजितप्रभू ने आतम से ही बन परमातम दिखलाया।
जिओ और जीने दो सबको यही मंत्र है सिखलाया॥
राग द्वेश अरु विषय भोग ने चतुर्गती में भटकाया।
मोक्ष अमर पद पाने को अब मेरा मन है ललचाया।

ज्ञाता दृष्टा बनकर प्रभु ने पाया मोक्ष प्रभात है॥
तीर्थंकर कल्याण महोत्सव सफल करें दिनरात हैं॥ ५ ॥

वन्दे जिनवरं-३

ॐ ह्रीं चैत्रशुक्लापंचम्यां अजितनाथ मोक्षकल्याणकाय अर्घ्यं०।

जाप्य—ॐ ह्रीं श्री धर्मचक्राय नमः

जयमाला

दोहा

मन वच तन से जो सदा, अजितप्रभु कर ध्यान।
गाऊं गुण जयमालिका प्राप्त हो सिद्धि महान॥

कवित्त छंद

है धन्य-धन्य श्री अजितप्रभू जो घोर तपस्या खूब किया।
जिनके प्रताप से दूर हुई कल्मषकुबुद्धि रागादि क्रिया॥
जिनके प्रताप से मानगलित हो पुण्य सातिशय बंधे घना।
ऐसे अजित प्रभु को वंदूं जो अनेकांत मय शोह घना॥ १ ॥
प्रभुजी का ये अनेकांत ही सच्चा सुख दर्शाता है।
अनेकांत ही भिन्न विवेचक भेदज्ञान प्रगटाता है॥
अनेकांत ही अंतरंग में ज्ञान ज्योति चमकाता है।
उस अनेकांत को नमन करूं जो भव्य जनों को भाता है॥ २ ॥
द्वादशांग भी अनेकांत के बिना कभी नहि शोभ सका।
है अनेक धर्मीपदार्थ जिसको नहि कोई रोक सका।
अनेकांत ही स्यादवाद जो स्याद् पदों से चिह्नित है।
ज्यों जल शीतल है स्वभाव पर लहरों से प्रतिबिंबित है॥ ३ ॥
विंदु मात्र भी अनेकांत के विना नहि शोभित देता।
अनंत रूप नाटक जिसमें बुधजन प्रवेश झट फ़र लेता॥
स्यादवाद रूपी सागर में जो भी नर घुस जाता है।
सरस पूर्ण विज्ञान प्राप्त कर गुण रत्नों को पाता है॥ ४ ॥

स्यात् कथंचित कल्लोलों से पक्षपात का गंध मिटा।
खींचतान एकांतवाद अरु रागद्वेष का कलह हटा॥
धर्म अनंत स्वभाव रूप लेकर अंतर जग जाता है।
ज्ञान सूर्य विकसित होते ही, मिथ्यातम भग जाता है॥ ५ ॥
पीला चश्मा लगा लिया तो सब ही दीखेगा पीला।
ऐनक खोल अगर देखोगे कुछ भी नही लाल नीला॥
भावों का संसार भाव से सागर बन जाता टीला।
राग द्वेश को दूर करो जब कुछ भी नहीं लाल पीला॥ ६ ॥
एक व्यक्ति ही किसी अपेक्षा पिता पुत्र बन जाता है।
त्यों अनंत गुण धर्मों से युत, द्रव्य एक कहलाता है॥
अनेकांत गंगा में जो नर मलमल खूब नहाता है।
"अभयमती" कहं मन पवित्र कर झट शिवपुर को जाता है॥ ७ ॥
ॐ ह्रीं अजितनाथजिनेंद्राय जयमाला पूर्णार्घ्यं०।

दोहा

अजितनाथ भगवान को शतशत बार प्रणाम।
भक्ति का फल मैं लहूं हो आतम कल्याण॥
सुनो अरज हे नाथ जी, त्रिभुवन के आधार।
दुष्टकर्म का नाश कर शीघ्र करो उद्धार॥

॥ इत्याशीर्वादः पुष्पांजलिः ॥

पूजा नं०–११

श्री संभवनाथ पूजा

(मुक्तक छंद)

स्थापना

जय जय जय श्री संभव प्रभु तुम अतिशय महिमाशाली हो।
सौम्यमूर्ति प्रभु चमत्कार कर, अनुपम शिव सुख कारी हो॥
चंद्र कांति सम छटा निराली, भव्य मूर्ति मनहारी हो।
तारण तरण जहाज अलौकिक, भेष चिंदबर धारी हो॥

दोहा

संभव प्रभु को नित जजूं आत्मसिद्धि के काज।
स्थापन विधियुत करें मिटे सभी संताप॥

ॐ ह्रीं संभवनाथ जिनेंद्र ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।
ॐ ह्रीं संभवनाथ जिनेंद्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।
ॐ ह्रीं संभवनाथ जिनेंद्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं।

सखी छंद

प्रासुक अमृत जल लाऊं चरणों में धार चढ़ाऊं।
भव भ्रमण का दुःख मिटाऊं, जब शाश्वत शिव सुख पाऊं॥
श्री संभवनाथ जिनेशा कियो मेरु पे जिन अभिषेका।
कर भवदधि पार महेशा, पूजूं मैं प्रभु परमेशा॥
ॐ ह्रीं संभवनाथजिनेंद्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं० ॥ १ ॥

मलयागिर चंदन लाऊं, प्रभु अर्चन कर सुख पाऊँ।
भव का संताप मिटाऊं, जब आतम शुद्ध बनाऊं॥ श्री संभव०॥
ॐ ह्रीं संभवनाथजिनेंद्राय संसार ताप विनाशनाय चंदनं० ॥ २ ॥

अक्षत मुक्तासम लाऊं शुभ शालि अखंड चढ़ाऊं।
अक्षय निधि पावन पाऊं, चेतन रस में रम जाऊं॥ श्री संभव०॥
ॐ ह्रीं संभवनाथजिनेंद्राय अक्षय पद प्राप्तये अक्षतं० ॥ ३ ॥

बहु पुष्प सुगंधित लाऊं कामादि व्यथा विनशाऊं।
भव सागर से तिर जाऊँ, परमात्म परम पद पाऊं॥ श्री संभव०॥
ॐ ह्रीं संभवनाथजिनेंद्राय कामवाण विध्वंसनाय पुष्पं० ॥ ४ ॥
व्यंजन रस थाल सजाऊं तृष्णा को दूर भगाऊं।
निज पान सुधारस चाहूं, सहजानंदी बन जाऊं॥ श्री संभव०॥
ॐ ह्रीं संभवनाथजिनेंद्राय क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं० ॥ ५ ॥
कंचन मणि दीप जलाऊं मिथ्यातम मोह भगाऊं।
निज ज्ञान दीप प्रगटाऊं, त्रैलोक्य पूर्ण चमकाऊं॥ श्री संभव०॥
ॐ ह्रीं संभवनाथजिनेंद्राय मोहांधकार विनाशनाय दीपं० ॥ ६ ॥
वर धूप दशांग खिपाऊं, जब आठों कर्म उड़ाऊं।
झट भेदज्ञान प्रगटाऊं, तब आतम ज्योति जगाऊं॥ श्री संभव०॥
ॐ ह्रीं संभवनाथजिनेंद्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं० ॥ ७ ॥
चहुं गति में खूब रुला हूं, निज को न पिछान सका हूं।
शाश्वत सुख शिवफल पाऊं, इस विध प्रभु फल श्री चढ़ाऊँ।श्रीसंभव ।
ॐ ह्रीं संभवनाथजिनेंद्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं० ॥ ८ ॥
वसु अर्घ संजोकर लाऊं अर्चन कर प्रभु गुण गाऊं।
सब राग द्वेष हटाऊं, शिवपुर आवास कराऊं॥ श्री संभव०॥
ॐ ह्रीं संभवनाथजिनेंद्राय अनर्घ्य पद प्राप्तये अर्घ्यं० ॥ ९ ॥

दोहा

संभवनाथ जिनेंद्र को पूजूं मन वच काय।
शांतिधारा नित करूं, आत्म शांति को पाय॥
शांतये शांतिधारा।

शंभु छंद

खट्टा मीठा तीखा कड़ुवा और चरपरा खाया है।
इत्र सूंघ कर हर्षित हो जब विषय भोग मन भाया है॥
कोमल सुंदर फूल सजाकर मखमल सेज बिछाया है।
नाटक फिल्मी दृश्य देख कर मन ही मन हर्षाया है॥

दोहा

कल्पवृक्ष के पुष्प बहु लेकर मन हर्षाय।
पुष्पांजलि अर्पण करूं शीघ्र मुक्ति पद पाय॥
दिव्य पुष्पांजलिः।

पंचकल्याणक

चाल—आये महावीर भगवान...... (गीत)

आये संभवनाथ भगवान मात सुषेणा के आंगन में।
जब गर्भ कल्याणक आये तब सब नर मुनि हर्षाये॥ टेक॥
बरसी रत्न राशि तत्काल, मात सुषेणा के आंगन में।

ॐ ह्रीं संभवनाथस्य फागुनशुक्ला अष्टम्यां गर्भकल्याणकाय अर्घ्यं०।

जब जन्म कल्याणक आये तब ऐरावत सजवाये।
तब कलशदिये ढुखाय, मेरु शिखर पर जाकर क्षण में। आये संभव०।

ॐ ह्रीं कार्तिकपूर्णिमायां संभवनाथस्य जन्मकल्याणकाय अर्घ्यं०।

जब तप कल्याणक आये तब रत्न पालकी लाये।
तब केशलोंच कर शीघ्र संभवप्रभु जी शाल के वन में॥आये संभव०॥

ॐ ह्रीं मार्गशीर्षपूर्णिमायां संभवनाथस्य दीक्षाकल्याणकाय अर्घ्यं०।

जब ज्ञानकल्याणक आये, तब दिव्यध्वनि खिर जाये।
प्रभु वाणी लई झिलवाय, संभवनाथ के समोशरण में॥आये संभव०।

ॐ ह्रीं कार्तिककृष्णा चतुर्थ्यां संभवनाथस्य केवलज्ञान कल्याणकाय अर्घ्यं०।

जब मोक्ष कल्याणक आये तब सम्मेदशिखर जी सुहाये।
जब चैत सुदि षष्ठम जान दीपक ज्योति जले घर-घर में।आये संभव०।

ॐ ह्रीं चैत्रशुक्लाषष्ठ्यां संभवनाथस्य मोक्षकल्याणकाय अर्घ्यं०।

जाप्य—ॐ ह्रीं श्री धर्मचक्राय नमः

जयमाला

दोहा

प्रभु की महिमा अगम है कोई न पावे पार।
श्रद्धा भक्ति विनय करूं, गाऊं गुण जयमाल॥

शेर छंद

जय जय श्रीसंभवनाथ प्रभु अतिशय सुहावना।
मूरत अनोखी देख सब जन जन को मोहना॥ टेक॥
जिन सौम्य शांति मूर्ति, चमत्कारमय दिखे।
जो भी करें दर्शन सहज वे रोग सब नशे॥ जय०॥ १॥

पागल पुरुष सुंदर दिखे, दुखियों का दुख कटे।
भय भूत पिशाचिनि सभी प्रभु दर्श से हटे॥ जय० ॥ २ ॥
गुण गाकर प्रभु का पाप क्षय बहु पुण्य कमावे।
नर हंस संत साधु नित ही ध्यान लगावें॥ जय० ॥ ३ ॥
कोई करें प्रभु चिंतवन निज रूप में लसे।
कोई करें कीर्तन प्रभू का कर्ममल नशें॥ जय० ॥ ४ ॥
कोई प्रभू ढिग आकर के नित पुत्र धन चहें।
कोई प्रभू दरबार में सब संपदा जहे॥ जय० ॥ ५ ॥
कोई भिखारी बनकर प्रभु वरदान को चहें।
कोई प्रभू की भक्ति कर झट शिवपुर को लहे॥ जय० ॥ ६ ॥
संसार खार जान के प्रभु आत्म को लखा।
कर्मों से लड़ने के लिये निज शस्त्र को रखा॥ जय० ॥ ७ ॥
कंचन छटा यश कीर्ति चारों ओर फैलती।
अनुपम गुणों की क्रांति रत्न सी बिखेरती॥ जय० ॥ ८ ॥
सौ इंद्र प्रभु की भक्ति से नित वंदना करे।
अरु चक्रवर्ती भी सदा प्रभु अर्चना करें॥ जय० ॥ ९ ॥
देवांगनायें भी प्रभू ढिग नृत्य कर रहीं।
सुर देवियां श्रद्धा से प्रभु गुणगान कर रहीं॥ जय० ॥ १० ॥

दोहा

मेंढ़क सम पशु तिर गया, पूजन भक्ति प्रभाव।
फिर जो प्रभु पूजन करे, क्यों न तिरे हर्षाय॥

ॐ ह्रीं संभवनाथ जिनेंद्राय जयमाला पूर्णार्घ्यं०।

दोहा

झूठा सुत झूठी त्रिया, झूठा सब परिवार।
वीतराग विज्ञान ही, तीनलोक में सार॥
कोटि जन्म में कर्म जो बांधे हुये अनंत।
सो प्रभु छवि विलोकते छिन में हो है अन्त॥

॥ इत्याशीर्वादः पुष्पांजलिः ॥

पूजा नं०—१२

अभिनंदननाथ पूजा

मुक्तक छंद

स्थापना

जब तक मुक्ति मिले नहि मुझको हे प्रभु तेरी शरण गहूं।
शास्त्रों का अध्ययन सदा, अरु सत्संगति का लाभ लहूँ॥
गुणी जनों का यश गाकर पर निंदा चुगली दोष तजूं।
हित मित प्यारे वचन बोलकर प्रभु को निज के रूप भजूं॥

दोहा

कर्म प्रकृति त्रेसठ नशें, पायो केवलज्ञान।
शांति करो सब विश्व मैं अभिनंदन भगवान॥

ॐ ह्रीं श्री अभिनंदननाथजिनेंद्र ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।
ॐ ह्रीं श्री अभिनंदननाथजिनेंद्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।
ॐ ह्रीं श्री अभिनंदननाथजिनेंद्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं।

चाल— पूजो पूजो श्री अरिहंत देवा

क्षीरोदधि से सुरभि जल लाऊं, स्वर्ण भृंगार धार चढाऊँ।
जन्म मर्ण जरा को नशाऊँ, परम पदपाऊँ भजूं परमेशा॥
पूजूं अभिनंदननाथजिनेशा हरूं दुख संकट संक्लेशा।
हो तारण तरण महेशा, परमपद पाऊँ भजूं परमेशा॥ टेक॥
ॐ ह्रीं श्रीअभिनंदननाथजिनेंद्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं० ॥ १ ॥

शुद्ध काश्मीर गंध घिसायो, पद पंकज जजूं हर्षायो।
भव दाह विध्वंस करायो, परम पद पाऊं भजूं परमेशा॥ पूजूं०॥
ॐ ह्रीं श्रीअभिनंदननाथजिनेंद्राय संसार ताप विनाशनाय चंदनं० ॥ २ ॥

शुभ तन्दुल अखंड चुनाऊं, प्रभु निकट सुपुंज चढ़ाऊँ।
सुख अक्षय सहजपुर जाऊँ, परम पद पाऊँ भजूं परमेशा॥ पूजूं०॥
ॐ ह्रीं श्रीअभिनंदननाथजिनेंद्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं ॥ ३ ॥

पुष्प बहुविध ले रंग बिरंगे, भजूं जिनवर को नित मनचंगे।
काम दाह नशे बहुभंगे, परम पद पाऊं भजूं परमेशा।। पूजूँ०।।
ॐ ह्रीं श्रीअभिनंदननाथजिनेंद्राय कामवाणविध्वंसनाय पुष्पं० ॥ ४ ॥
मिष्ट व्यंजन व घेवर फेनी, नेवज अर्पण करूं प्रभु भीनी।
भूख व्याधा सभी क्षय कीनी, परम पदपाऊं भजूं परमेशा।। पूजूं०।।
ॐ ह्रीं श्रीअभिनंदननाथजिनेंद्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं० ॥ ५ ॥
जगमग मणिमय सुदीप जलाऊं, ज्ञानज्योति हृदय प्रगटाऊं।
सर्व मिथ्यात्व भाव हटाऊं परम पद पाऊं भजूं परमेशा।। पूजूँ०।।
ॐ ह्रीं श्रीअभिनंदननाथजिनेंद्राय मोहांधकार विनाशनाय दीपं० ॥ ६ ॥
लेऊं धूप दशांग सुगंधी, खेऊं व्याप्त चहूँ दिशगंधी।
वसु कर्म उडाय विभंगी, परम पद पाऊं भजूं परमेशा।। पूजूँ०।।
ॐ ह्रीं श्रीअभिनंदननाथजिनेंद्राय अष्टकर्म दहनाय धूपं० ॥ ७ ॥
कल्पतरु के सरस फल लाऊं, पूजूं जिनवर को उरमें ध्याऊं।
चारित रथ चढ़के शिवपुर जाऊं, परम पद पाऊं भजूं परमेशा।पूजूँ०।
ॐ ह्रीं श्रीअभिनंदननाथजिनेंद्राय मोक्षफल प्राप्तये फलं० ॥ ८ ॥
वसु द्रव्यादि अर्घ्य सजाऊं, रत्नथाली में लेय चढाऊं।
मुक्ति हेतु निज पाथेय बनाऊं, परम पदपाऊं भजूं परमेशा।। पूजूँ०।।
ॐ ह्रीं श्रीअभिनंदननाथजिनेंद्राय अनर्घ्य पद प्राप्तये अर्घ्यं० ॥ ९ ॥

कुसुमलता छंद

जब तक मुक्ति मिले नहि मुझको तब तक लीन रहूं भगवान्।
तव पुनीत चरणों में मम हिय, मम उर देव विराजो आन।।
अक्षर पद मात्रादि दोष युत जो कुछ वचन कहा वरदान।
हे दयालु! मम क्षमाकरो प्रभु धार देत दुख नशे महान्।। १०।।
शांतये शांतिधारा।

दोहा

प्रभु के दर्शन मंत्र से पाप कर्म धुल जांय।
फिर जो पुष्प से पूजते, क्यों नहि शिवपुर जांय।।
दिव्य पुष्पांजलिः।

पंच कल्याणक अर्घ्य

चाल—जहाँ डाल डाल पर......

श्री अभिनंदन जी के पूजन से मिटता मिथ्यात्व अंधेरा।
हो पंच कल्याणक मेला॥
जहां विश्व शांति अरु आत्म शांति का निशदिन रहे बसेरा॥
हो निज सम्यक्त्व उजेला॥ टेक॥

जिनके पद चरणों में झुकती, फल फूल लताएं शाखा।
शुद्ध भाव से चक्रवर्ति नर इंद्र झुकावें माथा।
जहाँ मुक्ति मार्ग अरु आत्मज्योति किरणों का रहे सबेरा।
हो गर्भ कल्याणक मेला॥ १॥

ॐ ह्रीं अभिनंदननाथस्य वैसाखशुक्लाषष्ठ्यां गर्भकल्याणकाय अर्घ्यं०।

जिनका गुण कीर्तन भारत देश विदेश सभी जन गाते।
भव्य मूर्ति के दर्शन करके , मन ही मन हर्षाते॥
जहाँ आत्मध्यान अरु धर्मध्यान हो स्वर्गपुरी का डेरा।
हो जन्मकल्याणक मेला॥ २॥

ॐ ह्रीं माघशुक्लाद्वादश्यां अभिनंदनजिनजन्मकल्याणकाय अर्घ्यं०।

जिनकी विरागता लखकर मात पिता सब जन घबड़ाये।
मोह प्रेम के वश होकर जन जन सब अश्रु बहायें॥
धर भेष दिगंबर लोंच किया, कर चारित रथ में डेरा।
हो तप कल्याणक मेला॥ ३॥

ॐ ह्रीं माघशुक्लाद्वादश्यां अभिनंदनजिनदीक्षाकल्याणकाय अर्घ्यं०।

जिनकी अमृतवाणी सुनकर नर नारि सभी हर्षायें।
चमत्कार का दृश्य देखकर आनंद खूब मनायें॥
ज्ञाता दृष्टा लहं आत्म ज्योति खिलता रवि ज्ञान उजेला।
हो ज्ञानकल्याणक मेला॥ ४॥

ॐ ह्रीं पौषशुक्लाचतुर्दश्यां अभिनंदनजिनकेवलज्ञानकल्याणकाय अर्घ्यं०।

जिनकी अवाक वाणी से निकले अमृत रस की धारा।
एकाग्र ध्यान मुद्रा को लखके, नृत्य करें सुरबाला॥

प्रभु निर्विकल्प निज शुक्लध्यान से लहें मुक्ति का डेरा।
हो मोक्षकल्याणक मेला ॥ ५ ॥

ॐ ह्रीं बैसाखशुक्लाषष्ठ्यां अभिनंदननाथमोक्षकल्याणकाय अर्घ्यं० ।
जाप्य—ॐ ह्रीं श्री धर्मचक्राय नमः

जयमाला

दोहा

कलियुग की महिमा अगम जगत करे नित शोर।
मन रूपी बंदर सदा मचल रहे सब ठोर॥
रत्न अमोलक पाय कर करलो पूजन दान।
अभिनंदन जयमाल पढ़ शीघ्र लहें शिव धाम॥

चाल—आओ भाई तुम्हें सुनायें......

आओ सब मिल प्रभु गुण गायें महिमा जिन की अपार है।
कर्मों का क्षय करते जो प्रभु मुक्ति लहें मजधार है॥ टेक॥
वंदे जिनवरं० ।

बीज वृक्ष सम जीव व पुद्गल का संयोग चला आया।
कर्म उपाधि व रागादिक मल का संबंध बना आया॥
व्रत तप चारित संयम द्वारा निष्कर्मी निर्विकार है॥ कर्मों० ॥
वंदे जिनवरं० ॥ १ ॥

जीवन पीछे मरण भोग के पीछे राग समावेगा।
संयोगों में है वियोग जो खिला फूल मुरझायेगा॥
इसीलिए तुम भजन करो प्रभु क्षण भंगुर संसार है॥ कर्मों० ॥
वंदे जिनवरं० ॥ २ ॥

शुक्ल पक्ष के बाद सदा ही कृष्ण पक्ष भी आएगा।
सुख के पीछे दुख दिन पीछे रात्रि अंधेरा छाएगा॥
जहाँ खिले हैं फूल वहाँ कांटों का भी आधार है॥ कर्मों० ॥
वंदे जिनवरं० ॥ ३ ॥

पिता पुत्र माता पुत्री, अरु भाई बहनें एक हुए।
अपने अपने कर्मों का फल भिन्न भिन्न सब भोग रहे॥
कोई बनता वैद्य डाक्टर कोई साहूकार है॥ कर्मों० ॥
वंदे जिनवरं० ॥ ४ ॥

है विचित्र कर्मों की लीला इसका ही सब रंग है।
जिसने जैसा कर्म किया है वैसा ही फल भंग है।
जो भी प्रभु का ध्यान धरें हैं मिले मुक्ति का द्वार है॥
कर्मों का क्षय करते जो प्रभु मुक्ति करें मजधार है॥
वंदे जिनवरं० ॥ ५ ॥
अपनी करनी पार उतरनी कोई न जाता संग है।
अपना मालिक आप स्वयं ही निज विभाव का जंग है॥
निश्चयनय से किसी जीव का कुछ भी नहिं अधिकार है॥कर्मों० ॥
वंदे जिनवरं० ॥ ६ ॥
जिन्हें देव के प्रति श्रद्धा अरु धर्मी से वात्सल्य है।
सत्य अहिंसा अनेकांत को धारण कर वो धन्य है॥
जो भी प्रभु को हृदयकमल में धारणकर भव पार है॥ कर्मों० ॥
वंदे जिनवरं० ॥ ७ ॥
छहों द्रव्य मिलते आपस में पर स्वभाव से भिन्न हैं।
'अनेकांत" है धर्म निराला नहीं किसी से छिन्न हैं॥
'अभयमती" कर निज गुणचिंतन सिद्ध शिला साकार है॥ कर्मों० ॥
वंदे जिनवरं० ॥ ८ ॥

स्रग्विणी छंद

धर्म ही सार है कुछ यहां ना वहां।
भव्य प्राणी ही जिनधर्म धारण किया।
इसलिये भव्य जीव! शिवपथ में लगें।
"अभयमती" कहं प्रभु की भक्ति करके जगें॥

ॐ ह्रीं अभिनंदननाथजिनेंद्रायजयमाला पूर्णार्घ्यं० ।

दोहा

तुम जाने बिन नाथ जी एक स्वांस के माहिं।
जनम मरण अठदस किये साता पाई नाहिं॥ १ ॥
राग द्वेष के चक्र से छुटना चाहें संत।
तो प्रभु का नित ध्यान धर जभी होय निःशंक॥ २ ॥
सुत दारा अरु लक्ष्मी पापी के भी होय।
संत समागम प्रभु भजन जग में दुर्लभ दोय॥ ३ ॥

इत्याशीर्वादः पुष्पांजलिं क्षिपेत् ।

पूजा नं०–१३ ।/।

श्री सुमतिनाथ पूजन

स्थापना

मुक्तक छन्द

श्री सुमतिनाथ स्वामीजी जिनकी अतिशय महिमा न्यारी।
कोटि चंद्र रवि से बढ़कर है, अजब अनोखी छवि प्यारी॥
जो हैं आत्मरसिक जिनकी, गुण कुसुम सुगंधित है क्यारी।
ऐसे सुमतिनाथ को बंदन करके, नशूं करम जाली॥

ॐ ह्रीं श्री सुमतिनाथजिनेंद्र ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।
ॐ ह्रीं श्री सुमतिनाथजिनेंद्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।
ॐ ह्रीं श्री सुमतिनाथजिनेंद्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं।

हरिगीतिका छंद

रोगी अनादी काल से अति हूँ दुखी संतप्त मैं।
अतएव कंचन कलश से, धारा करूं प्रभु चरण में॥
भगवान बनने के लिये, आया हूँ प्रभु दरबार में।
आत्मिक सहज सुख के लिये, जिन सुमतिप्रभु शिरधार मैं।१।टेक।

ॐ ह्रीं श्री सुमतिनाथजिनेंद्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं०।

इस देह को हमने सजाया रात दिन बहु राग में।
शीतल सुरभि चंदन लगाया, विषय भोग स्वराज में॥ भगवान०॥

ॐ ह्रीं श्री सुमतिनाथजिनेंद्राय संसारतापविनाशनाय चंदनं० ॥ २ ॥

मोती समान अखंड तंदुल, पुंज भरकर लाउं मैं।
अक्षय सुखों की प्राप्ति हित, प्रभु निकट नित्य चढ़ाउं मैं।भगवान०।

ॐ ह्रीं श्री सुमतिनाथजिनेंद्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं० ॥ ३ ॥

सुर कल्पतरु के पुष्प नाना विध, मनोहर शोभते।
चहुँदिश सुगन्धी फैलकर जो पुष्प जनमन मोहते॥ भगवान०॥

ॐ ह्रीं श्री सुमतिनाथजिनेंद्राय कामवाणविध्वंसनाय पुष्पं० ॥ ४ ॥

नाना प्रकार नवीन व्यंजन, स्वच्छ सरस बनाय के।
निज भूख शांत न हो कभी, अतएव प्रभु ढिग आयके॥
भगवान बनने के लिये, आया हूँ प्रभु दरबार में।
आत्मिक सहज सुख के लिये, जिन सुमतिप्रभु शिरधार मैं॥
ॐ ह्रीं श्री सुमतिनाथजिनेंद्राय क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं० ॥ ५ ॥
मणि रत्न दीप जलायके नित बाह्य तम को ही हरें।
निज आत्म ज्योति प्रकाश हित प्रभु की सदा आरति करें।भगवान०।
ॐ ह्रीं श्री सुमतिनाथजिनेंद्राय मोहाधंकारविनाशनाय दीपं० ॥ ६ ॥
कर्पूर मिश्रित धूप बहुविध चंदनादिक लाइये।
अष्ट करम विनाश हित, प्रभु चरण नित्य चढाइये॥ भगवान०॥
ॐ ह्रीं श्री सुमतिनाथजिनेंद्राय अष्टकर्म दहनाय धूपं० ॥ ७ ॥
बादाम श्रीफल निंबु दाडिम फल छहों ऋतु लाइये।
सब दुख निवारण सुक्ख कारण, प्रभु शरण में आइये॥भगवान०॥
ॐ ह्रीं श्री सुमतिनाथजिनेंद्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं० ॥ ८ ॥
अर्घ्य वसुविधि ले मनोहर, श्री जिनालय जाइये।
श्रद्धा विनय से प्रभु चरण में, सदा शीश झुकाइये॥ भगवान०॥
ॐ ह्रीं श्री सुमतिनाथजिनेंद्राय अनर्घ्य पद प्राप्तये अर्घ्यं० ॥ ९ ॥

शंभु छंद

हे जिनेश! तव चरण शरण को, पाऊं मैं निशदिन वरदान।
अरु समाधि युत मरण होय, कर्मों का क्षय हो बोध निधान॥
दुःखों का क्षय होय शीघ्र ही, लहं जिनगुण संपत्ति प्रधान।
धार देतप्रभु निज में रमकर पहुंचूँ शीघ्र सुगति शिवधाम॥
शांतये शांतिधारा।

दोहा

भद्रपरिणामी जीव ही होय निराकुल शांत।
पुष्प से प्रभु पूजन करें, मिटे जगत का भ्रांत॥
दिव्य पुष्पांजलिः।

पंचकल्याणक अर्घ्य

सुगीतिका छंद

जब सावन सुदि द्वितिया दिवस, शुभ गर्भ कल्याणक रहो।
सुत मातु पितु सकुटुम्ब आदिक, कर महोत्सव झट अहो ॥ १ ॥
ॐ ह्रीं सावनसुदिद्वितीयायां गर्भमंगलप्राप्ताय श्री सुमतिनाथजिनेंद्राय अर्घ्यं० ।
शुभ चैत सुदि ग्यारस जनम हो सुमतिप्रभु जिन चंद्रमा।
मेघप्रभ पितु अरु सुमंगला, सब गर्भ कल्याणक मना ॥ २ ॥
ॐ ह्रीं चैतसुदि एकादश्यां जन्ममंगलप्राप्ताय श्री सुमतिनाथजिनेंद्राय अर्घ्यं० ।
बैसाख सुदी नौमी को प्रभुजी , घोर तप कीना जभी।
तज राज विभव विरागता , लहँ होय तप कल्याणजी ॥ ३ ॥
ॐ ह्रीं बैसाखशुक्लानवम्यां तपोमंगलप्राप्ताय श्री सुमतिनाथजिनेंद्राय अर्घ्यं० ।
शुभ चैत सुदि ग्यारस दिवस प्रभु चार घाति करम नशें।
तब इंद्र चक्रि सुरेद्र केवल ज्ञान कल्याणक रचें ॥ ४ ॥
ॐ ही चैतशुक्लाएकादश्यां ज्ञानकल्याणक श्री सुमतिनाथजिनेंद्राय अर्घ्यं० ।
सम्मेदशिखर प्रसिद्ध श्री जिन सिद्ध क्षेत्र महान जो।
शुभ चैत सुदि ग्यारस के दिन, श्री सुमति प्रभु निर्वाण हो ॥ ५ ॥
ॐ ह्रीं चैतशुक्लाएकादश्यां मोक्षकल्याणक श्री सुमतिनाथजिनेंद्राय अर्घ्यं० ।
जाप्य—ॐ ह्रीं श्री धर्मचक्राय नमः

जयमाला

मुक्ति लक्ष्मी के धनी, त्रिभुवन नाथ सहाय।
मोक्ष प्राप्ति के कारणे, हम सब शीश झुकाय ॥

(वीर छंद)

जय सुमतिनाथ जिनदेव जगत्पति, तुम ही हो अन्तर्यामी।
पंचम तीर्थ जिनेश महामति , तुम ही हो त्रिभुवननामी ॥
आत्मध्यान में लीन हुये , फिर भी ज्ञाता दृष्टा स्वामी।
स्व पर प्रकाशक मिथ्या नाशक, अनुभव चेतन गुणभामा ॥ १ ॥
कहँ तीन लोक में द्रव्य व गुण, पर्याय अनंतानंत सदा।
सो एक समय में प्रतिभाषित, दर्पण वत चेतन में झलका ॥

अरु जो त्रिभुवन तिहुँकाल विज्ञ, अर्हन्त देव केवलज्ञानी।
ऐसे सुमतिनाथ का जिनमत है अनेकांत शिवसुखदानी ॥ २ ॥
हे प्रभु! जो दुख भोगे मैंने, तुम उनके ज्ञाता दृष्टा।
कबहूँ कर्म विकल इंद्रियलहं, कबहुँ निगोद नरक पटका ॥
कबहूँ पशुगति के दुख भोगे, छेदन भेदन मार सहे।
भूख प्यास की घोर वेदना, हे प्रभु तुमसे कौन कहे ॥ ३ ॥
पुण्य उदय से मानुषगति लहं, फिर भी होय नहीं साता।
क्षण क्षण में दुख इष्ट वियोग, अनिष्ट योग का हो जाता ॥
धन जीवन सुत नारि व संपति, प्राप्त जभी सब हर्ष करें।
इन सबका जब हो विनाश तब विपति भरी बहु शोक करें ॥ ४ ॥
सुरगति में भी एक दूसरों की संपति लख नित झूरे।
मरण चिन्ह लख बहु विकल्प कर, मिथ्यादृष्टी देव रूलें।
चारों गति में नित दुख ही दुख इक पंचमगति ही सुख पूरे।
नरतन पाके जो संयम लहं, वह ही संत करम चूरे ॥ ५ ॥
भविजन निशदिन करते ध्यान, तुम्हारा सुमतिनाथ स्वामी।
मैं भी ध्यान लगाऊं प्रभु जी, नशें कर्म जो दुखदानी ॥
ज्यों ताराओं की संख्या को, कोई कभी न गिन सकता।
त्यों प्रभु पूर्ण गुणों का वर्णन कोई कभी न कर सकता ॥ ६ ॥
जब तक मुक्ति न मिले प्रभूजी, तब तक मेरे हृदय बसो।
नित ध्यान धरूं प्रभु आपहि का, मम आत्म कमल में नित्य लसो ॥
तुम ही मातपिता गुरु त्राता तुम ही बंधु सखा प्रभु हो।
"अभयमती" नित शीश झुकावे, भव भव में प्रभु दर्शन दो ॥ ७ ॥

दोहा

जय जय जय श्री सुमतिप्रभु, पूर्ण करो मम आस।
अक्षय लक्ष्मी दीजिये, लहें मुक्ति का वास ॥

ॐ ह्रीं श्रीसुमतिनाथजिनेंद्राय जयमाला पूर्णार्घ्यं० ।

अडिल्ल छन्द

वर्तमान जिनसुमति भरत के जानिये।
पंचकल्याणक हो प्रभु सिद्ध विराजिये ॥
शुद्ध भाव से जो प्रभु को पूजें सही।
वे ही भविजन लहें शीघ्र अष्टम मही ॥

॥ इत्याशीर्वादः पुष्पांजलिं क्षिपेत् ॥

पूजा नं०—१४

श्री पद्मप्रभु जिन पूजा

स्थापना

वीरछंद

सौम्य मूर्ति श्री पद्मप्रभू का चमत्कार अतिशय भारी।
जो नर नारी दर्शन करते इच्छापूर्ण हुई सारी॥
सर्व विश्व में देखो कैसी पद्मप्रभू महिमा न्यारी।
जो भी भविजन ध्यान लगाते, संकट दूर हुआ भारी॥

दोहा

जय जय जय श्रीपद्मप्रभू, भव्य दिखे है रूप।
भक्ति सहित आह्वान कर पूजूं सदा स्वरूप॥

ॐ ह्रीं श्री पद्मप्रभु जिनेंद्र ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।
ॐ ह्रीं श्री पद्मप्रभु जिनेंद्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।
ॐ ह्रीं श्री पद्मप्रभु जिनेंद्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं।

(छन्द मात्रिक)

चाल—नंदीश्वर पूजन०......

शुचि निर्मल गंगा नीर, स्वर्ण सुभृंग धरूं।
हो तृषा निवारन ईर, चरणन धार करूं॥
श्री पद्मप्रभू परमेश, मंगल सुखकारी।
प्रभु मेटो संकट क्लेश, तुमको बलिहारी॥ १॥

ॐ ह्रीं श्रीपद्मप्रभुजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं०।

चन्दन सुगन्ध घनसार, कुंकुम संग घसूं।
प्रभु चरण जजूं सुखकार, भव आताप नशूं॥ २॥ श्री०।

ॐ ह्रीं श्रीपद्मप्रभुजिनेन्द्राय संसारतापविनाशनाय चंदनं०॥

शुभ तंदुल सुरभि अखण्ड, अक्षत भर लाऊं।
प्रभु निकट चढाऊं पुंज, अक्षत पद पाऊं॥
श्री पद्मप्रभू परमेश मंगल सुखकारी।
प्रभु मेटो संकट क्लेश, तुमको बलिहारी॥ ३॥
ॐ ह्रीं श्रीपद्मप्रभुजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं० ॥
सुरतरु के सुमन मंगाय, भाव सहित अर्चूं।
जब मदन दर्प नश जाय, चेतन रूप लसूं॥ ४॥ श्री०॥
ॐ ह्रीं श्रीपद्मप्रभुजिनेन्द्राय कामवाण विध्वंसनाय पुष्पं० ॥
षट रस युत व्यंजन लाय, कंचन थाल सजूं।
अर्पण कर क्षुधा नशाय, निज के हेतु जजूं॥ ५॥ श्री०॥
ॐ ह्रीं श्रीपद्मप्रभुजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं० ॥
रत्नों के दीप जलाय, सूर्य किरण विघटे।
निज ज्ञान ज्योति चमकाय, पाप तिमिर विनशे॥ ६॥ श्री०॥
ॐ ह्रीं श्रीपद्मप्रभुजिनेन्द्राय मोहांधकार विनाशनाय दीपं० ॥
शुभ धूप दशांग बनाय, अलि गुंजार करें।
खेऊं मैं प्रभु ढिग आय, वसुविध कर्म झरें॥ ७॥ श्री०॥
ॐ ह्रीं श्री पद्मप्रभु जिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं० ॥
पिस्ता किशमिश अखरोट दाडिम आदि भरूं।
मम शाश्वत शिवसुख हेतु प्रभु को भेट करूं॥ ८॥ श्री०॥
ॐ ह्रीं श्री पद्मप्रभु जिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं० ॥
जल फल आदिक वसु द्रव्य लेकर नित अर्चूं।
पूजन कर होऊं कृतार्थ, सिद्ध पुरी पहुँचूं॥ ९॥ श्री०॥
ॐ ह्रीं श्री पद्मप्रभु जिनेन्द्राय अनर्घ्य पदप्राप्तये अर्घ्यं० ॥

दोहा

जब तक मुक्ति नहीं मिले, तब तक कर प्रभु ध्यान।
आत्म ज्योति उर में लगे, धार देऊं सुखदान॥
शांतये शांतिधारा।

दोहा

पद्मप्रभू महिमा अगम, कोई न पावे पार।
पुष्पांजलि अर्पण करूं, हो भवि दधि से पार॥
दिव्य पुष्पांजलिः।

पंचकल्याणक

सखी छंद

माघ बदि षष्ठी दिन आयो, प्रभु गर्भ कल्याण मनायो।
पितु मात सभी हर्षायो , मैं पूजूं भक्ति बढायो॥ १॥

ॐ ह्रीं श्री पद्मप्रभु जिनेंद्राय माघ वदी षष्ठी गर्भ कल्याणक प्राप्ताय अर्घ्यं०।

कार्तिक सुदि तेरस गायो, प्रभु जन्म कल्याण मनायो।
मेरू पर न्हवन करायो , सुर नर सब मंगल गायो॥ २॥

ॐ ह्रीं श्री पद्मप्रभु जिनेन्द्राय कार्तिक सुदि तेरस जन्म कल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं०।

कार्तिक सुदि तेरस गायो, तप दुर्द्धर प्रभु मन भायो।
लौकांतिक प्रभु गुण गायो, तप कल्याण सबने मनायो॥ ३॥

ॐ ह्रीं कार्तिक कृष्णात्रयोदश्यां पद्मप्रभु जिन दीक्षाकल्याणकाय अर्घ्यं०।

चैत सुदि पूनम दिन आयो, प्रभु ज्ञान कल्याणक मनायो।
ध्वनि सुन भवि भ्रम को मिटायो, मैं पूजूं ज्ञान लहायो॥ ४॥

ॐ ह्रीं श्री पद्मप्रभुजिनेन्द्राय चैतसुदि पूनम ज्ञान कल्याणक प्राप्ताय अर्घ्यं०।

फागुन बदि चौथ सुहायो, प्रभु मोक्ष कल्याण मनायो।
सुरपति नर पूज रचायो , मैं पूजूं ध्यान लगायो॥ ५॥

ॐ ह्रीं श्री पद्मप्रभु जिनेन्द्राय फागुन बदि चौथ मोक्षकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं०।
जाप्य—ॐ ह्रीं श्री धर्मचक्राय नमः

जयमाला

दोहा

सौम्य मूर्ति अतिशय सहित पद्मप्रभु भगवान्।
गाऊँ गुण जयमालिका, पहुँचू शिवपुर धाम॥

शंभुछंद

जय जय जय श्रीपद्मप्रभु की है अतिशय महिमा न्यारी।
जो नर नारी दर्शन करते इच्छा पूर्ण हुई सारी॥
जो भी गुण गाते प्रभु निश्चित चमत्कार दिखता भारी।
अरु भविजन नित ध्यान लगाते संकट दूर हुआ भारी॥ १॥

लता मंजरी भी आकरके चरणों में शिर को नाते।
सुरनर किन्नर विद्याधर के नित भक्ती से शिर झुक जाते।।
निज के द्वारा निज को भजकर निज में ही प्रभु रम जाते।
समयसार को भजकर प्रभु जी समयसार मय हो जाते।। २ ।।
जो प्रभु का ये समयसार ही संजीवन कहलाता है।
इस समयसार को नमन करूं जो भव्य जनों को भाता है।।
समयसार ही भेदज्ञान कर, आत्म ज्योति चमकाता है।
समयसार ही आत्म रसिक, को सच्चा सुख दर्शाता है।। ३ ।।
ज्यों मंदिर में कलश चढ़ावे शोभा बनी निराली है।
समयसार अमृत कलशों से पूर्ण सुधारस प्याली है।।
तरण कला जाने बिन नर ज्यों नहि समुद्र से तिर सकता।
समयसार जाने बिन नर त्यों,, ज्ञान ज्योति नहि पा सकता।। ४ ।।
समयसार कर भिन्न विवेचक, कर्त्तृ कर्म को दूर करे।
समयसार ही स्वर्ण लोह सम , पुण्य पाप बेड़ी समझे।।
समयसार ही आस्रव को दुख का कारण बतलाता है।
समयसार संवरपूर्वक तप से निर्जरा दिखाता है।। ५ ।।
समयसार बंधन की बेड़ी को जब पूर्ण हटाता है।
निज के द्वारा निज में रमकर स्वयं मोक्ष पद पाता है।।
सर्व विशुद्ध ज्ञान में रत जो, वह ही समयसार पाता।
रसस्वादन कर तृप्त न हो जब, पुनः पुनः उसमें रमता।। ६ ।।
स्याद्वाद जो समयसार है, उसको पीकर रस चखता।
चेतन रस इक लवण डली सम सदा स्वयं निज में लसता।।
समयसार निज साध्यरु साधक का अविरोध कथन करता।
शुद्ध अमर पद प्राप्त कराकर मुक्ति रमा वश में करता।। ७ ।।

घत्ता

जय पद्म जिनेशं, शिव परमेशं पूर्ण विशेषं सुखकारी।
मैं पूजूं ध्याऊं शीश नमाऊं "अभयमती" शिवपदधारी।।

ॐ ह्रीं श्री पद्मप्रभु जिनेंद्राय जयमाला पूर्णार्घ्यं०।

सोरठा

पदमप्रभु पद्मेश, अतिशय युक्त मनोज्ञ छवि।
जो पूजें उर ध्याय, वे निश्चय शिवसुख लहें॥
दर्शन सो अघ जाय नाम उचारत सुख लहे।
ऐसे हैं जिनराय पूजत पावें देवपद॥

इत्याशीर्वादः पुष्पांजलिं क्षिपेत्

पूजा नं०—१५

श्री सुपार्श्वजिन पूजा

स्थापना

दोहा

प्रभु पूजन के भाव से क्षुद्र प्राणि तिर जाय।
फिर जो प्रभु पूजन करे क्यों न तिरे नर पाय॥

चौबोला

क्यों न तिरे नर पाय भक्त जिनवर के वचन सुहाये।
भव्य ही पाले वचन आप्त के नहि अभव्य मन भावे॥
इसीलिये भवभ्रमण करें नित कभी भी मोक्ष न जावें।
आप्त कथित वचनों को पालें वे ही मुक्ति लहावें॥

दौड़

प्रभु के अमृत वचन को जी, सुनके भवि हर्षाये जी।
अति आनंदित होके।
धन्य भाग्य मेरा जन्म सफल भयो प्रभु के दर्शन पाके॥

ॐ ह्रीं श्री सुपार्श्वजिन ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।
ॐ ह्रीं श्री सुपार्श्वजिन ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।
ॐ ह्रीं श्री सुपार्श्वजिन ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं।

गीता छंद

क्षीरोदधि का शुद्ध जल ले कनक झारी में भरूं।
सब कर्म मल प्रक्षालने को प्रभु चरण धारा करूं॥
श्रद्धा विनय भक्ति से मैं जिनदेव को ध्याऊं सदा।
आत्मिक रसास्वादन को ले निज में ही, रम जाऊं सदा॥ टेक॥

ॐ ह्रीं श्री सुपार्श्वनाथजिनेंद्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं० ॥ १ ॥

फिर भी न शांत हुआ हृदय, चंदन सुकेशर युत घसूं।
संसार ताप विनाश हित, शुभ गंध प्रभु चरणन खचूं।२।आत्मिक०

ॐ ह्रीं श्री सुपार्श्वनाथजिनेंद्राय संसार ताप विनाशनाय चंदनं०।

इंद्रिय सुखों के भोग मधुर, अनंत बार सभी चखें।
फिर भी न तृप्ति हुई कदाचित्, इसलिये अक्षत रखें॥३॥आत्मिक०

ॐ ह्रीं श्री सुपार्श्वनाथजिनेंद्राय अक्षय पद प्राप्तये अक्षतं०।

फिर भी पवित्र नहीं हुआ तन, इसलिये बहु पुष्प लें।
नित कामवाण विनाश हित, प्रभु चरण में अर्पण करें।४।आत्मिक०

ॐ ह्रीं श्री सुपार्श्वनाथजिनेंद्राय कामवाण विध्वंसनाय पुष्पं।

बहुविध क्षुधादिक रोग नाशक, शीघ्र नेवज लाय के।
प्रभु चरण में अर्पण करूं मैं, शुद्ध मन वच काय से।५॥आत्मिक०

ॐ ह्रीं श्री सुपार्श्वनाथजिनेंद्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं०।

अरु मोह मिथ्यातम विनाशक, प्रभु निकट दीपक जले।
तुम तरण तारण दुख निवारण, अतः प्रभु चरणन पड़े।६।आत्मिक०

ॐ ह्रीं श्री सुपार्श्वनाथजिनेंद्राय मोहांधकार विनाशनाय दीपं०।

श्रद्धा विनय से धूप देकर सर्व, कर्म जलाइये।
विकसित सुगंधी चहुँ दिशा में, सर्व मैल उड़ाइये॥ ७॥आत्मिक०॥

ॐ ह्रीं श्री सुपार्श्वनाथजिनेंद्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं०।

मोक्ष सहजिक प्राप्त हित, जिन चरण भेंट चढ़ाइये।
आत्मरत हो जब कभी, संसार में नहि आइये॥ ८॥आत्मिक०।

ॐ ह्रीं श्री सुपार्श्वनाथजिनेंद्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं०।

अष्ट कर्म विनाश हित श्री अर्घ्य शुद्ध चढ़ाइये।
चारित्र संयम धारके, संसार से तिर जाइये॥ ९॥ आत्मिक०॥

ॐ ह्रीं श्री सुपार्श्वनाथजिनेंद्राय अनर्घ्य पद प्राप्तये अर्घ्यं०।

दोहा

जिनवर की महिमा अगम को कर सके बखान।
शांतिधारा करत ही क्रम से लहें शिवथान॥
शांतये शांतिधारा।
जिनवर सांचा जानिये, मन है स्वर्ण समान।
गले ढले भूषण बने गले मिले भगवान्॥
दिव्य पुष्पांजलिः।

पंचकल्याणक अर्घ्य

गीता छंद

शुभ रत्न षटनव मास बरषाये महान कुबेर जो।
प्रभु के चरण पूजूं व अर्घ चढ़ाऊं निशदिन भाव सों॥ १॥
ॐ ह्रीं भाद्रपदशुक्लाषष्ठ्यां सुपार्श्वनाथस्य गर्भकल्याणकाय अर्घ्यं०।
कर मेरु पर अभिषेक इंद्रादिक व सुर मिलकर घना।
ऐसे सुपार्श्व जिन पूजहूँ, बहु अर्घ लेके सब जना॥ २॥
ॐ ह्रीं जेठशुक्लाद्वादश्यां सुपार्श्वनाथस्य जन्मकल्याणकाय अर्घ्यं०।
नर देव इंद्र नरेंद्र विद्याधर, प्रफुल्लित हों तभी।
ऐसे सुपार्श्व जिनेंद्र प्रभु को, अर्घ देवें हम सभी॥ ३॥
ॐ ह्रीं जेठशुक्लाद्वादश्यां सुपार्श्वनाथस्य दीक्षाकल्याणकाय अर्घ्यं०।
जब झट कुबेर समोसरण रचना करी बारह सभा।
दिव्यध्वनी सुर भ्रांति तज प्रभु अर्घ दूं हम सब मुदा॥ ४॥
ॐ ह्रीं फागुनकृष्णाषष्ठ्यां सुपार्श्वनाथस्य केवलज्ञानकल्याणकाय अर्घ्यं०।
सुर इन्द्र नर धरणेन्द्र सब मिल, मोक्ष कल्याणक कियो।
ऋषिवर समंत सुचक्रवर्ती अर्घ से सब पूजियो॥ ५॥
ॐ ह्रीं फागुनवदिसप्तम्यां सुपार्श्वनाथस्य मोक्षकल्याणकाय अर्घ्यं।
जाप्य—ॐ ह्रीं श्री धर्मचक्राय नमः

जयमाला

दोहा

चिदानंद निर्मल प्रभो, पूजूं मनवचकाय।
सुपार्श्व प्रभू का ध्यान धर, भवदधि से तिर जाय॥

चाल—दयालु प्रभु से हम.....

जिनवर की भक्ती कर हो निज में उजेला।
जभी जाग जायें तभी है सबेरा॥ टेक॥
प्रभु तुम सा वीतरागी देव न दूजा।
श्रद्धा विनय से हम करें सच्ची पूजा॥
प्रभु तुम सव जगतारण देव न कोई।
ध्यान लगा के तेरा अर्घ संजोई।
गुण गाऊं कर दो प्रभु जी पावन मन मेरा॥ जभी० ॥ १ ॥
जो कलियाँ खिली थी वे मुस्करा गई हैं।
जो बतियाँ गिरी थी वे कुम्हला गई हैं।
कभी इस दिशा में कभी उस दिशा में।
गगन के सितारे चमक ही रहे हैं।
तारो प्रभू जी मुझको दो दिन का मेला॥ जभी० ॥ २ ॥
चमकती हुई सूर्य की लालिमायें।
ज्यों देखा कि तारे भी ढलते गये हैं॥
जीवन भी ऐसा क्षणिक है पवन सा।
विद्युत व इंद्र धनुष सम चपल सा॥
उड़ जायेगा चेतन हंस अकेला॥ जभी० ॥ ३ ॥
गई सो गई अब रही राख चेतन।
जीवन सुधारें करें हित हे चेतन॥
नया दिन हुआ है नया पग बढ़ायें।
नई भावनायें सुचिंतन में लायें।
प्रभु का चिंतन कर जब हो कर्मों का फेरा ॥जभी० ॥४ ॥

ऐसा न अवसर कभी आने वाला।
दुर्लभ ये पारसमणी ढलने वाला।
श्री शांतिसागर गुरुवर वीरसिंधु आये॥
अमर ज्योति उनकी सदा जगमगाये।
तरुवर पे पक्षी का रैन बसेरा॥ जभी०॥ ५॥
कभी इस गली में कभी उस गली में।
भिखारी बना मैं भटकता रहा हूँ।
भवरूपी सागर से कैसे तिरूं मैं।
सदा मूल में भूल मैं कर रहा हूँ॥
पार लगा दो प्रभु जी हो मुक्ति में डेरा॥ जभी०॥ ६॥
सुपथ छोड़ करके कुपथ पर सदा से।
विज्ञान बिन मैं कदम रख रहा हू॥
दुर्लभ ये चिंतामणीरत्न पाकर।
अरे व्यर्थ में मैं इसे खो रहा हूँ।
"अभयमती" कहँ प्रभु जी कर दो शिवपुर में बसेरा॥जभी०॥ ७॥

दोहा

सुपार्श्वनाथ जिनराज की महिमा अपरंपार।
पूजूं मन वच काय से, होवे बेड़ा पार॥

ॐ ह्रीं श्रीसुपार्श्वनाथ जिनेंद्राय जयमाला पूर्णार्घ्यं०।

दोहा

अति अदभुत प्रभुता लखी, वीतरागता माहिं।
विमुख होय ते दुख लहें, सन्मुख सुखी लहाहिं॥ १॥
करनी कर कथनी करी, श्रीसुपार्श्व भगवान।
कथनी कर करनी करें, वे विरले अब जान॥ २॥
प्रभु बिन इस संसार में, कोई न वस्तू सार।
प्रभु बिन हम, सब समझ लें जीवन सब बेकार॥ ३॥

इत्याशीर्वादः पुष्पांजलिः क्षिपेत्।

पूजा नं०—१६

श्री चन्द्रप्रभुजिन पूजा

अथ स्थापना

दोहा

निर्मल स्फटिक मणि सदृश, कांति दिखे है अपार।
जो प्रभु का नित ध्यान धर, हो सब विघ्न निवार॥
चन्द्र प्रभु अतिशय महा, निज में गुण प्रगटाय।
पूजूं कर विधि स्थापना, आतम ज्योति जगाय॥

ॐ ह्रीं चन्द्रप्रभु जिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं ।
ॐ ह्रीं चन्द्रप्रभु जिनेन्द्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।
ॐ ह्रीं चन्द्रप्रभु जिनेन्द्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं।

अडिल्ल छन्द (मात्रिक)

स्वर्ण भृंग शुभ शुद्ध नीर भर लाइयो।
धार देत चरणन सब पाप नशाइयो॥
चन्द्र प्रभू का अतिशय जन जन में लसे।
जो भी दर्शन कियो पाप संकट कटे॥ १॥

ॐ ह्रीं श्री चन्द्रप्रभु जिनेन्द्राय जन्मजरामृत्यु विनाशनाय जलं०. . . ।

चन्दन बहु गोसीर सुगन्ध घिसाय के।
जजूं चरण उर भक्ति सहित हर्षाय के॥ चन्द्र० ॥ २॥

ॐ ह्रीं श्री चन्द्रप्रभु जिनेन्द्राय संसार ताप विनाशनाय चन्दनं०. . . ।

निर्मल धवल अखंड शालि शुभ लाइयो।
शाश्वत सुख हित जिनवर पुंज चढाइयो॥ चन्द्र० ॥ ३॥

ॐ ह्रीं श्री चन्द्रप्रभु जिनेन्द्राय अक्षय पद प्राप्तये अक्षतं०. . . ।

कमल केतकी विविध सुपुष्प मंगाइयो।
जजूं चन्द्र प्रभु काम कलंक नशाइयो॥ चन्द्र ॥ ४॥

ॐ ह्रीं श्री चन्द्रप्रभु जिनेन्द्राय कामबाण विनाशनाय पुष्पं०. . . ।

नेवज से बहु रत्न थाल सजाइयो।
आत्म स्वाद हितु प्रभु नैवेद्य चढ़ाइयो॥ चन्द्र० ॥ ५ ॥

ॐ ह्रीं श्री चन्द्रप्रभु जिनेन्द्राय क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं०... ।

जगमग जगमग मणिमय दीप जलाइयो।
मिथ्यातम नश सम्यक गुण प्रगटाइयो॥ चन्द्र० ॥ ६ ॥

ॐ ह्रीं श्री चन्द्रप्रभु जिनेन्द्राय मोहान्धकार विनाशनाय दीपं०... ।

शुद्ध सुरभि चन्दन की धूप बनायके।
खेऊं प्रभु ढिग कर्म उड़े घबड़ायके॥ चन्द्र० ॥ ७ ॥

ॐ ह्रीं श्री चन्द्रप्रभु जिनेन्द्राय अष्टकर्म विनाशनाय धूपं०... ।

आड़ू लीची आम्र अनार मंगायके।
प्रभु अर्पण कर शिवफल लहं हर्षाय के॥ चन्द्र० ॥ ८ ॥

ॐ ह्रीं श्री चन्द्रप्रभु जिनेन्द्राय मोक्षफल प्राप्तये फलं०... ।

जल फलादि युत कंचन थाल भराइयो।
पद अनर्घ्य हितु प्रभु को अर्घ्य चढाइयो॥ चन्द्र० ॥ ९ ॥

ॐ ह्रीं श्री चन्द्रप्रभु जिनेन्द्राय अनर्घ्य पदप्राप्तये अर्घ्यं०... ।

बसंततिलका छंद

जो स्याद्वाद जिनदेव कहें सुप्यारा।
है अस्ति नास्ति गुण भूषित सत्य न्यारा॥
धर्मानुराग जिसको धर अंत सारा।
गूंथे सुतत्व गुण की पहने सुमाला॥

शांतये शांतिधारा।

जो आत्म चिंतन करें भगवान तेरा।
तो शीघ्र बंध हटके मिट जाय फेरा॥
विज्ञान चेतन सदा रहता अकेला।
आनंद लीन प्रभु में जब मुक्ति डेरा॥

दिव्य पुष्पांजलिः ।

पंचकल्याणक अर्घ्य

(पद्धरि छंद)

पितु महासेन लक्ष्मणा माय चित बदि पंचम प्रभु गर्भ आय।
जब गर्भ कल्याणक सुर मनाय जजूं रत्नवृष्टि आंगन सुहाय॥ १ ॥
ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभुजिनेन्द्राय चैतबदिपंचमी गर्भमंगलमंडिताय अर्घ्यं०... ।
दिन पौष कृष्णा ग्यारस कहाय, चंद्रपुरि में जन्म कल्याण भाय।
सुर कियो मेरु अभिषेक साथ, हम जजूं इन्द्र कर नृत्य ठाठ॥ २ ॥
ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभुजिनेन्द्राय पौषकृष्णाएकादशी जन्ममंगलमंडिताय अर्घ्यं०..।
वदि पौष सु एकादशी भाय, लौकांतिक सुर गुण प्रभू गाय।
प्रभु पंचमुष्टि कर केशलोंच, सुर तप कल्याणक कियो सोच॥ ३ ॥
ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभुजिनेन्द्राय पौषवदीएकादशी तपोमंगलमंडिताय अर्घ्यं०..।
फागुन बदि सप्तम दिन महान, प्रभु कर्मनाश लहं पूर्णज्ञान।
भवि दिव्यध्वनि सुन भ्रमनशाय, भजूं ज्ञानकल्याणक सुर मनाय।४।
ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभुजिनेन्द्राय फागुनबदिसप्तमी केवलज्ञानप्राप्ताय अर्घ्यं०...।
प्रभुमुक्ति लहें सम्मेदशिखर, फागुन सुदि सप्तमि दिन सुन्दर।
सुर इन्द्र पंचकल्याणक भाय, हम पूजें सब मिल हर्ष मांय॥ ५ ॥
ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभुजिनेन्द्राय फागुनसुदीसप्तमी मोक्षमंगलमण्डिताय अर्घ्यं०..।
जाप्य—ॐ ह्रीं श्री धर्मचक्राय नमः

जयमाला

दोहा

जो चन्द्र प्रभु दर्शकर भूत प्रेत भग जाय।
करूं शुद्ध जयमालिका, मन वांछित फल पाय॥

वीरछंद

जय जय जय श्री चन्द्रप्रभु तुम, अतिशय महिमाशाली हो।
चमत्कार दिखलाकर जग में, अनुपम शिव सुखकारी हो॥
चंद्रकांति सम छटा निराली, भव्य मूर्ति मनहारी हो।
तारण तरण जिहाज अलौकिक, भेष दिगंबर धारी हो॥ १ ॥

ऋषी समंत-भद्र गुरुवर जब, अंतरंग में ध्यान किया।
पिंडी फटी तब चन्द्रप्रभु के, दर्शन करं उर हर्ष हुआ॥
देवों के तुम देव व अष्टम तीर्थंकर पद धार लिया।
वीतराग सर्वज्ञ हितंकर, भक्तों का दुख दूर किया॥ २॥
चैत वदी पंचम को गर्भहि, पूर्व मास षट् सुर आके।
तीर्थंकर के आंगन में कर, रत्नवृष्टि कंचन सांचे॥
महासेन है पितु सुलक्षणा, माता के हो सुत प्यारे।
चन्द्रपुरी में पौष वदी, ग्यारस को जन्मे प्रभु न्यारे॥ ३॥
पौष वदी ग्यारस को प्रभु का, तप कल्याणक हुआ जभी।
लौकांतिक सुर भक्ति भाव कर, बढ़ा दिया वैराग्य तभी॥
प्रथम पालकी भूमि गोचरी ने प्रभु को झट उठा जभी।
मुनि बनने के योग्य पालकी, वही उठावे संत तभी॥ ४॥
फागुन वदि सप्तम के शुभ दिन, प्रभु को केवलज्ञान हुआ।
फिर सम्मेद शिखर पर जाके, कर्मनाश शिव प्राप्त किया॥
सभी विकारी भाव हटे जब, शिवरमणी से नेह किया।
ज्ञाता दृष्टा बनकर प्रभुजी, सहजिक सुख को प्राप्त किया॥ ५॥
आत्म शांति के हेतु रहे श्री, निर्विकार शुभ मूर्ति महा।
जिसमें चन्द्रप्रभु प्रतिमा की, अजब अनोखी शान अहा॥
कीर्ति तुम्हारी अतिशय प्यारी सभी भक्तगण आयें सदा।
करें शीघ्र जब कर्म निर्जरा, जिससे हो बहु दुःख बिदा॥ ६॥
घन घन घन घन घण्ट बजें, तन तन तन तन तन तान सजें।
कई पूजत चंद्रप्रभु मुनीश, कई उर में धार मुनीश भजें॥
कई भविजन भक्ति व नृत्य करें कई मोद प्रमोद अनेक धरें।
कई भक्ती से सब वन्दन कर, उनके गुण को निज रूप धरें॥ ७॥

मुक्तक छंद

सत्य आचरण बिना सदा यह प्राणी दुखी होवे क्षण क्षण।
इसके बिन मानव जीवन कहं पशु समान निश्चित ऋषिजन॥
प्रभु के गुण का वर्णन सुन आश्चर्य हुआ है सबका मन।
जिसको धारण कर पूजें भवि शीघ्र वरे हैं मुक्ति ललन॥ ८॥

ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभुजिनेंद्राय जयमाला पूर्णार्घ्यं०. . . ।

चौबोल छंद

प्रभु के गुण को शीघ्र समझकर आत्मज्योति को पहिचाने।
इन सबको समझे बिन प्राणी निज भेदज्ञान को नहि जाने॥
धर्म बिना डूबेंगे हम इस जगत के मंझधार सही।
धर्म बिना फिरते हि रहे चारों गती में निःसार सही॥

॥ इत्याशीर्वादः पुष्पांजालिं क्षिपेत् ॥

पूजा नं०—१७

श्री पुष्पदंत जिन पूजा

अथ स्थापना

हरिगीतिका छंद

माता सुजयरामा सुग्रीव पिता सुपुत्र सुहावने।
निज आत्म रस में लीन होकर, जगत जनमन मोहने॥
त्रैलोक्यवंद्य प्रसिद्ध ऋषिगण ध्यान जिनका नित धरें।
अरु कामदेव जिनेश को, आह्वान कर अर्चन करें॥

ॐ ह्रीं श्री पुष्पदंत स्वामिन् ! अत्र अवतर अवतर आह्वाननं।
ॐ ह्रीं श्री पुष्पदंत स्वामिन् ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।
ॐ ह्रीं श्री पुष्पदंत स्वामिन् ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं।

चौपाई-आचलीबद्ध

क्षीरोदधि का जलभर लाय, धार देत चरणन सुखपाय।
महागुरु हो, जय जय नाथ परम गुरु हो॥
जय जय पुष्पदंत जिनराय, तुमको पूजूं मन वच काय।
महागुरु हो जय जय नाथ परम गुरु हो॥ १॥

ॐ ह्रीं श्री पुष्पदंतस्वामिने जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं०...।

चंदन से जिनपद चर्चाय, मन को अतिशय तृप्त कराय।
महागुरु हो जय जय नाथ परम गुरु हो॥ जय जय० ॥ २॥
ॐ ह्रीं श्री पुष्पदंत स्वामिने संसार ताप विनाशनाय चंदनं०...।
तंदुल धवल अखंड मंगाय, अक्षय हेतू पुंज चढ़ाय।
महागुरु हो जय जय नाथ परम गुरु हो॥ जय जय० ॥ ३॥
ॐ ह्रीं श्री पुष्पदंत स्वामिने अक्षय पद प्राप्तये अक्षतं०... ।
तरह तरह के पुष्प चढ़ाय, कामदेव को शीघ्र नशाय।
महागुरु हो जय जय नाथ परमगुरु हो॥ जय जय० ॥ ४॥
ॐ ह्रीं श्री पुष्पदंत स्वामिने कामवाण विध्वंसनाय पुष्पं०... ।
विविध भांति नैवेद्य बनाय, अर्पण कर झट क्षुधा मिटाय।
महागुरु हो जय जय नाथ परम गुरु हो॥ जय जय० ॥५॥
ॐ ह्रीं श्री पुष्पदंत स्वामिने क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं०... ।
जगमग जगमग दीप जलाय, ज्ञान ज्योति उर में चमकाय।
महागुरु हो जय जय नाथ परमगुरु हो॥ जय जय० ॥ ६॥
ॐ ह्रीं श्री पुष्पदंत स्वामिने मोहांधकार विनाशनाय दीपं०...।
धूप दशांग सुगन्ध बनाय, खेय दशोंदिश कर्म उड़ाय।
महागुरु हो जय जय नाथ परमगुरु हो॥ जय जय० ॥ ७॥
ॐ ह्रीं श्री पुष्पदंत स्वामिने अष्टकर्मदहनाय धूपं०... ।
पक्व सरस बहु फल मंगवाय, अर्पण कर प्रभु शिवफल पाय।
महागुरु हो जय जय नाथ, परमगुरु हो॥ जय जय० ॥ ८॥
ॐ ह्रीं श्री पुष्पदंत स्वामिने मोक्षफलप्राप्तये फलं०... ।
अष्ट द्रव्य ले अर्घ्य चढ़ाय, आत्म ज्योति निज में प्रगटाय।
महागुरु हो जय जय नाथ, परमगुरु हो॥ जय जय० ॥ ९॥
ॐ ह्रीं श्री पुष्पदंत स्वामिने अनर्घ्य पद प्राप्तये अर्घ्यं... ।

चौबोल छंद

संसार असार समझ करके श्री पुष्पदंत सब ग्रंथ तजा।
भेष दिगंबर बाना धरके आत्म तत्त्व को खूब भजा॥
प्रभु सहजानंदी का गुण कीर्तन नृत्य स्तवन नित्य पढ़ूं।
आत्म शांति हितु जिन चरणों में शांतीधारा शुद्ध करूं॥
शांतये शांतिधारा।

दोहा

पुष्पदंत जिनदेव को बारंबार प्रणाम।
पुष्पांजलि अर्पण करूं, पाऊं सुःख महान।।
दिव्य पुष्पांजलिः।

पंच कल्याणक

(हरिगीतिका छंद)

सुग्रीव कहें पिता व जयरामा सुमाता गर्भ में।
हम सर्व मिलकर अर्घ्य देवें पुष्पदंत पदपंक में।। १ ।।
ॐ ह्रीं पुष्पदंतनाथस्य फागुनकृष्णानवम्यां गर्भकल्याणकाय अर्घ्यं०।

झट मेरु पर प्रभु लाय कर, अभिषेक इंद्र सभी कियो।
अर्चन करूं हम सर्व मिलकर प्रभु चरण में चित दियो।। २ ।।
ॐ ह्रीं मार्गशीर्षशुक्लाप्रतिपदायां पुष्पदंतजन्मकल्याणकाय अर्घ्यं०।

जब शीघ्र लौकांतिक स्वर्ग से आय प्रभु स्तुति किये।
हम भी सभी मिल पुष्पदंत प्रभु मन वचन तन पूजिये।। ३ ।।
ॐ ह्रीं मार्गशीर्षशुक्लाप्रतिपदायां पुष्पदंतदीक्षाकल्याणकाय अर्घ्यं०।

रचते सुरेंद्र समोशरण, जिसमें रहे बारह सभा।
सुन दिव्य ध्वनि तज भ्रांति तब प्रभु अर्चते हम सब मुदा।। ४ ।।
ॐ ह्रीं कार्तिकशुक्लाद्वितीयायां पुष्पदंतनाथकेवलज्ञानकल्याणकाय अर्घ्यं०।

जब मोक्ष कल्याणक हुआ झट सिद्ध स्थान प्रभू लसें।
हम भी सभी मिल आत्महित के हेतु प्रभू गुण पूजतें।। ५ ।।
ॐ ह्रीं भाद्रपदशुक्लाष्टम्यां पुष्पदंतनाथमोक्षकल्याणकाय अर्घ्यं०।

जाप्य—ॐ ह्रीं श्री धर्मचक्राय नमः

जयमाला

दोहा

पुष्पदंत भगवान का, ध्यान धरूँ सुखकार।
शीघ्र आत्मनिधि को भरूं गाऊं प्रभु जयमाल।।

चाल—तुमसे लागी लगन०.....

आत्म में हो मगन, कर प्रभू का भजन, चेत प्राणी।
बीत जाए तेरी जिंदगानी॥ टेक॥
दर्शन करने जो आता है प्राणी, संकट दूर हुआ शीघ्र भारी।
आतम ज्योति जगे, रागद्वेश तजे, चेत प्राणी॥ बीत०॥ १॥
सुख के पीछे दुखों की है छाया, दुख के पीछे सुखों की है माया।
करले पुरुषार्थ अब, मुक्ति को प्राप्त जब, चेत प्राणी॥
बीत जाए तेरी जिंदगानी॥ २॥
जिसको कहता सदा प्राणी अपना, वे ही स्वारथ का है झूठा सपना।
कुछ न कर पायेगा, पीछे पछतायेगा, चेत प्राणी॥ बीत०॥ ३॥
संध्या की लालिमा दुख को लाती, उषा की लालिमा सुख जगाती।
लौकिक सुख को तजे, आत्म सुख को भजे, चेत प्राणी॥बीत०।४।
धर्म करके तू पुण्य कमाले, तत्व चिंतन में मन को रमाले।
काल झट आयेगा, तुझ को ले जायेगा, चेत प्राणी॥ बीत०॥ ५॥
ये है संसार कागज की पुड़िया, इसमें रमते जो बनते हैं गुड़िया।
कर प्रभु का कीर्तन, निज में होवे मगन, चेत प्राणी॥ बीत०॥ ६॥
इन कर्मों ने मुझको सताया, भव भव में ये मुझको रुलाया।
तू ही आधार है, भक्ति साकार है चेत प्राणी॥ बीत०॥ ७॥
मुक्ति जिनने भी अबतक है पाई, तेरा आश्रय ही उसमें सहाई।
"अभयमती" कर नमन, प्रभु जी ले लो शरण, चेत प्राणी।बीत०।८।

घत्ता छंद

जय पुष्पदंत बलि, कर्म विजय बलि, शुद्ध आत्मबलि सुखकारी।
मैं पूजूं ध्याऊं, शीश नमाऊं, बलि बलि जाऊं बलिहारी॥
ॐ ह्रीं श्रीपुष्पदंतस्वामिने जयमाला पूर्णार्घ्यं०...।

गीता छंद

जो भव्य श्रद्धा भक्ति से पुष्पदंत जिन पूजा करें।
वे ऋद्धि सिद्धि समृद्धि स्वर्गिक आदि सुख निश्चित धरें॥
अरु आत्म संपत्ती को पाकर, सहज आत्मिक सुख जगे।
शिव महल में आवास कर निज आत्म ज्योति जगमगे॥
इत्याशीर्वादः पुष्पांजलिः।

पूजा नं०—१८

श्री शीतल नाथ पूजा

अथ स्थापना

पद्धरि छंद

जय जय श्री शीतलनाथ संत , इक्ष्वाकु वंश के हो महंत।
तन उन्नत नव्वे धनुष जान, अरु हेम वर्ण शोभित महान॥
इक पूर्व लक्ष आयु कहाय, हो जन्म सुभद्दिल नगर भाय।
हे तीनलोक के मुक्तिकंत, हो धन्य धन्य गुरुवर महंत॥

दोहा

शीतल प्रभु शीतल करें, तारण तरण जिहाज।
आह्वानन विधियुत करूं, आत्म सिद्धि के काज॥

ॐ ह्रीं श्री शीतलनाथ जिनेन्द्र !अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।
ॐ ह्रीं श्री शीतलनाथ जिनेन्द्र !अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।
ॐ ह्रीं श्री शीतलनाथ जिनेन्द्र !अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं।

सोरठा

जन्म मृत्यु निरवार, चरणन धार करूँ सदा।
शीतल प्रभु सुखकार, पूजूं मन वच काय से॥ १ ॥

ॐ ह्रीं श्री शीतलनाथजिनेन्द्रायजन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं०. . . ।

चंदन शुद्ध घिसाय, महके गन्ध दशों दिशा।
शीतल प्रभु सुखकार, पूजूं मन वच काय से॥ २ ॥

ॐ ह्रीं श्री शीतलनाथजिनेन्द्रायसंसारतापविनाशनाय चंदनं०. . . ।

तन्दुल फेन समान, पुंज चढ़ाऊँ भाव से।
शीतल प्रभु सुखकार, पूजूं मन वच काय से॥ ३ ॥

ॐ ह्रीं श्री शीतलनाथजिनेन्द्रायअक्षयपदप्राप्तये अक्षतं०. . . ।

पुष्प अनेक प्रकार, काम कलंक सभी नशें।
शीतल प्रभु सुखकार, पूजूं मन वच काय से॥ ४॥

ॐ ह्रीं श्री शीतलनाथजिनेन्द्रायकामवाणविध्वंसनाय पुष्पं०. . . ।

दधि घृत दुग्ध मंगाय, रस पूरित नेवज भरूँ।
शीतल प्रभु सुखकार, पूजूं मन वच काय से॥ ५॥
ॐ ह्रीं श्री शीतलनाथ जिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं०... ।
उत्तम ज्योति जगाय, दीप जले तम को हरे।
शीतल प्रभु सुखकार, पूजूं मन वच काय से॥ ६॥
ॐ ह्रीं श्री शीतलनाथ जिनेन्द्राय मोहाधंकारविनाशनाय दीपं०... ।
धूप दशांग बनाय, खेऊँ, अष्ट करम जले।
शीतल प्रभु सुखकार, पूजूं मन वच काय से॥ ७॥
ॐ ह्रीं श्री शीतलनाथ जिनेन्द्राय अष्टकर्मविध्वंसनाय धूपं०... ।
अमृत फल अंगूर, श्रीफल शिवहितु भेंट कर।
शीतल प्रभु सुखकार, पूजूं मन वच काय से॥ ८॥
ॐ ह्रीं श्री शीतलनाथ जिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं०... ।
वसुविधि द्रव्य सजाय, आत्म लाभ हित अर्घ धर।
शीतल प्रभु सुखकार, पूजूं मन वच काय से॥ ९॥
ॐ ह्रीं श्री शीतलनाथ जिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं०... ।

दोहा

शीतल प्रभु शीतल वचन, तुम ही हो शिरताज।
धार देत प्रभु ध्यान कर, आत्मशांति के काज॥
शांतये शांतिधारा।

सोरठा

श्री शीतल जिनदेव, तुमरो शरण लियो जभी।
मन शीतल हो शीघ्र नहिं होवे भव दुख कभी॥
दिव्य पुष्पांजलिः।

पंचकल्याणक

दोहा

चैत्र कृष्णा अष्टमी, प्रभु का गर्भ कल्याण।
सुर नर सब हर्षित भये, शीतलनाथ प्रणाम॥ १॥
ॐ ह्रीं चैत्रकृष्णाष्टम्यां गर्भकल्याणकप्राप्ताय श्री शीतलनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं..

माघ बदी द्वादश कहे, प्रभु हो जन्म कल्याण।
इन्द्र मेरु पर न्हवन कर, शीतलनाथ प्रणाम ॥ २ ॥
ॐ ह्रीं माघकृष्णाद्वादश्यांजन्मकल्याणकप्राप्ताय श्री शीतलनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं. ।

माघ कृष्ण द्वादश दिवस, तप कल्याणक जान।
लौकांतिक स्तुति कियो , शीतलनाथ प्रणाम ॥ ३ ॥
ॐ ह्रीं माघकृष्णाद्वादश्यांतपकल्याणकप्राप्ताय श्री शीतलजिनेन्द्राय अर्घ्यं. . . ।

पौष बदी चौदस कहे, हो जब ज्ञान कल्याण।
दिव्य ध्वनि सुन भ्रम नशे, शीतलनाथ प्रणाम ॥ ४ ॥
ॐ ह्रीं पौषकृष्णाचतुर्दश्यांकेवलज्ञानकल्याणकप्राप्ताय श्री शीतलनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं. . . ।

आश्विन सुदि हो अष्टमी, मोक्ष कल्याणक जान।
सुर नर सब अर्चन कियो, शीतलनाथ प्रणाम ॥ ५ ॥
ॐ ह्रीं आश्विनशुक्लाष्टम्यांमोक्षकल्याणकप्राप्ताय श्री शीतलनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं. . . . ।

जाप्य—ॐ ह्रीं श्री धर्मचक्राय नमः

जयमाला

सोरठा

श्री शीतल जिनराज, आत्म सिद्धि के हित जजूं।
तारण तरण जिहाज, गाऊं गुण जयमालिका ॥

चाल—यशोमती मैया०. . . . . .

प्रभु जी की देखो कैसी महिमा है न्यारी।
भक्ति जो करते कटता कष्ट है भारी ॥ टेक ॥
विषयों में फंसकर के जो धर्म गमावें।
भौतिक सुख में ही पड़ कर हर्ष मनावें ॥
खोटी संगति को करके बनते जुआरी सहे दुःख भारी ॥ प्रभु० ॥१ ॥
बालक बालिकायें पढ़ने कालेज जाते।
उल्टी शिक्षा को पाकर धर्म डुबाते ॥
पश्चिम की वायु से बन आत्मभिखारी, रहते अनारी ॥ प्रभु० ॥ २ ॥

दाता दरिद्र सब दुखिया कहाते।
कंजूस चोर डाकू सुखिया दिखाते॥
कुलहीन नृप कुलवान मुरारी, निर्धन पुजारी॥ प्रभु० ॥ ३॥
भव्यों को काल आकर शीघ्र उठावें।
पापी को संसार में ही घुमावें॥
कलिकाल की चेष्टा देखो जी सारी, अहो बलिहारी॥ प्रभु० ॥ ४॥
ख्याति प्रतिष्ठा में सब नाम धराते।
बगुला कुभक्त बनके श्रद्धा जगाते॥
धर्म के नाम पर करे मायाचारी, मन है खारी॥ प्रभु० ॥ ५॥
नृप चन्द्रगुप्त गुरु को स्वप्न सुनाया।
भद्रबाहु स्वामी क्रम से फल को बताया॥
दुष्काल में होवे अपमान भारी, सहे संयम धारी॥ प्रभु० ॥ ६॥
व्रत शील संयम लेकर दोष लगावें।
चेतन के रस में प्रायः मन ना, रमावें॥
ज्ञानज्योति न जगे उर मंझारी, रहे भेष धारी॥ प्रभु० ॥ ७॥
स्वार्थ की पूर्ति में ही पद को लहावें।
धन को हड़प के खूब पाप कमावें॥
"अभयमती" कहती तज दो पाप कटारी, बनो निज बिहारी।प्रभु०।८।

पूर्णार्घ्य

त्रिभंगी छंद

जय मात सुनंदा, हो सुत नंदा, शीतलकंदा, सुखकारी।
पितुदृढरथ चंदा, हो गुणवृन्दा, पापनिकंदा दुखहारी॥ ९॥
ॐ ह्रीं श्री शीतलनाथ जिनेंद्राय जयमाला पूर्णार्घ्यं०....।

गीताछंद

जो भव्य श्रद्धा भक्ति से शीतल नाथ पूजा करें।
वे ऋद्धि सिद्धि समृद्धि स्वर्गिक आदि सुख निश्चित धरें॥
निज आत्म संपत्ती को पाकर, सहज आत्मिक सुख जगे।
शिवमहल में आवास कर, निज आत्म ज्योती जगमगे॥
॥ इत्याशीर्वादः पुष्पांजलिः ॥

पूजा नं०–१९

श्री श्रेयांस जिन पूजा

अथ स्थापना

शंभु छंद

जय जय जय श्रेयांसनाथ जो ज्ञानमयी प्रतिभाशाली।
नित्य निरंजन निराकार अरु निःशरीर निरुपम क्यारी॥
जिनका केवल सुख स्वभाव अरु रत्नत्रयनिधि सुख भारी।
विश्व प्रकाशक ऐसे प्रभु को भक्ति सहित मैं शिर धारी॥

ॐ ह्रीं श्री श्रेयांस जिन ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।
ॐ ह्रीं श्री श्रेयांस जिन ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।
ॐ ह्रीं श्री श्रेयांस जिन ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं।

चामर छंद

गंग नीर शुद्ध लाय रत्न झारि में भरूं।
श्री जिनेन्द्र पादपद्म धार देत दुख हरूं॥
श्री श्रेयांसनाथ आत्म सौख्य हेतु मैं जजूं।
स्वात्मसिद्धि हेतु कर्मनाश मुक्ति को भजूं॥ १॥

ॐ ह्रीं श्री श्रेयांसनाथ जिनेंद्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं०... ।

चंदनादि केशरादि स्वच्छ गंध ले घना।
आप चर्ण पूजते सुमोह ताप को हना॥ श्री श्रेयांसनाथ०॥ २॥

ॐ ह्रीं श्री श्रेयांसनाथ जिनेंद्राय संसार ताप विनाशनाय चंदनं०... ।

शालि शुद्ध ले सुगंध थाल में भराइये।
पुंज ले अखंड देव चर्ण में चढ़ाइये॥ श्री श्रेयांसनाथ०॥ ३॥

ॐ ह्रीं श्री श्रेयांसनाथ जिनेंद्राय अक्षय पद प्राप्तये अक्षतं०... ।

कल्पवृक्ष के सुपुष्प रत्न के चुनाइये।
पूजते जिनेश काम बाण को नशाइये॥ श्री श्रेयांसनाथ०॥ ४॥

ॐ ह्रीं श्री श्रेयांसनाथ जिनेंद्राय कामवाण विध्वंसनाय पुष्पं०... ।

चारु पुआ पूड़ियाँ सुमिष्ट व्यंजनादि लें।
अर्चते सुदेव पूज्य काम बाण को नशें॥
श्री श्रेयांसनाथ आत्म सौख्य हेतु मैं जजूं।
स्वात्मसिद्धि हेतु कर्मनाश मुक्ति को भजूं॥ ५॥
ॐ ह्रीं श्री श्रेयांसनाथ जिनेंद्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं०... ।
रत्नदीप लेय के प्रभो सुआरती करूं।
मोह ध्वांत नाशके सुज्ञान ज्योति को भरूं॥ श्री श्रेयांसनाथ० ॥ ६॥
ॐ ह्रीं श्री श्रेयांसनाथ जिनेंद्राय मोहांधकारविनाशनाय दीपं०... ।
शुद्ध धूप ले दशांग अग्नि मांहि खेइये।
तास संग अष्ट कर्म पुंज को उड़ाइये॥ श्री श्रेयांसनाथ० ॥ ७॥
ॐ ह्रीं श्री श्रेयांसनाथ जिनेंद्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं०... ।
श्री फलादि सेव आम स्वर्ण थाल में भरूं।
मोक्ष प्राप्ति हेतु देव पाद पद्म पूजहूं॥ श्री श्रेयांसनाथ० ॥ ८॥
ॐ ह्रीं श्री श्रेयांसनाथ जिनेंद्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं०... ।
नीर गंध अक्ष पुष्प दीप धूप आदि लें।
श्री फलादि अर्घ्य तें जजूं सुमुक्ति को वरें॥श्री श्रेयांसनाथ० ॥ ९॥
ॐ ह्रीं श्री श्रेयांसनाथ जिनेंद्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं... ।

बड़े भाग्य से नरतन पाया, खोना इसको व्यर्थ नहीं।
धर्म मार्ग पर डटे रहो तुम, धर्म बिना उद्धार नहीं॥
शांतये शांतिधारा।
जीवन को महकाने वाला, श्रद्धा ही फल फूल है।
इसके बिना शांति सुख होवे यह आशा निर्मूल है॥
दिव्य पुष्पांजलिः।

पंचकल्याणक

हरिगीतिका छंद

श्री विष्णु कहें पिता व विष्णुश्री सुमाता गर्भ में।
हम सर्व मिलकर अर्घ्य देवें श्रेयांस प्रभु पद पंक में॥ १॥
ॐ ह्रीं श्रेयांसनाथस्य जेठकृष्णाछट्ठगर्भकल्याणकाय अर्घ्यं... ।

झट मेरु पर प्रभु लायके, अभिषेक इंद्र सभी कियो।
अर्चन करें हम सर्व मिलकर प्रभु चरण में चित दियो।। २।।
ॐ ह्रीं फाल्गुनकृष्णाएकादश्यां श्रेयांसप्रभु जन्मकल्याणकाय अर्घ्यं. . . ।
जब शीघ्र लौकांतिक स्वर्ग से आप प्रभु स्तुति कियो।
हम भी सभी मिल श्रेयांस प्रभु को मनवचन तन पूजिये।। ३।।
ॐ ह्रीं फाल्गुनकृष्णाएकादश्यां श्रेयांसनाथ दीक्षाकल्याणकाय अर्घ्यं. . . ।
रचते सुरेंद्र समोशरण जिसमें रहें बारह सभा।
सुन दिव्य ध्वनि तज भ्रांति तब प्रभु अर्चते हम सब मुदा।। ४।।
ॐ ह्रीं माघकृष्णा अमावस्यां श्रेयांसनाथकेवलज्ञानकल्याणकाय अर्घ्यं०. . . ।
जब मोक्ष कल्याणक हुआ, झट सिद्धथान प्रभू लसे।
हम भी सभी मिल आत्म हित के हेतु प्रभुगुण पूजतें।। ५।।
ॐ ह्रीं सावनशुक्लापूर्णिमायां श्रेयांसप्रभुमोक्षकल्याणकाय अर्घ्यं. . . ।
जाप्य—ॐ ह्रीं श्री धर्मचक्राय नमः

जयमाला

दोहा

जब तक मुक्ति नही मिले, प्रभु को उर मैं धार।
ज्ञान ज्योति उर में जगे गाऊं गुण जयमाल।।

चौबोल छंद

इस जीवन यात्रा में निश्चित प्रभु चिंतन से मोती मिलते।
तप संयम चारित ध्यान के बल पर ही निज आत्म कमल खिलते ।।टेक ।।
जय जय जय श्री श्रेयांसनाथ जो करते मंगल सुखसाता।
जय स्वयं सिद्ध अनुपम अविचल जो भव-२ के दुख को नाशा।।
आत्मानंदैक परम अमृत समता रस के झरने झरते।। तप०।। १।।
जय कामधेनु प्रभु कल्पवृक्ष चिंतामणि वांछित फल दाता।
जय पारस मणिप्रभु पौरुष बल पर ही शिवनारि से कर नाता।।
भव-२ के संचित कर्मपुंज प्रभु भक्ति रूप श्रम से नशते ।।तप० ।२ ।
श्रम रहित प्रमादिक जीवन यों नरकों जैसा बीते निश दिन।
श्रमयुत पल भर पौरुष जीवन स्वर्गों जैसा बीते हर दिन।।
श्रम के द्वारा ही भव्य पुरुष, झट नर से नारायण बनते ।।तप० ।।३ ।।

जो श्रम के हाथों को चूंमा, वह ही नर धर्म विजय पाई।
क्रम क्रम से निज मंजिल पहुंचा, जीवन में क्रांति नई छाई॥
इस पौरुष के बल पर ही नर, भोगी से झट योगी बनते॥
तप संयम चारित ध्यान के बल पर ही निज आत्म कमल खिलते॥ ४॥
श्रम बिन पत्ता ना हिले कभी, सब ओर से रीता है जीवन।
श्रम बिन व्यापार चले न कभी, संघर्षों में बीता जीवन॥
उत्साह पराक्रमशाली ही, जिन भेष दिगम्बर व्रत धरते॥
॥ तप० ॥ ५॥
सच्चा श्रम करते तीर्थंकर, उर में विरागता है छाई।
ध्यानाग्नि रूप ईंधन द्वारा, झट कर्म नाश शिव पद पाई॥
अध्यात्म योग के बल पर ही, जिन तीर्थंकर केवलि बनते॥
॥ तप० ॥ ६॥
श्रम बिन नर जीवन व्यर्थ रूप, सच्चा पौरुष बन दिखलावें।
हे बंधु धर्म प्रेमी! निज बल पर ज्ञान ज्योति को चमकावें॥
कहँ "अभयमती" ऋषि संत आत्म बल पर नित आत्म चमन करते॥
॥ तप० ॥ ७॥

दोहा

शाश्वत सुख जब तक नहीं, मिले करूं प्रभु गान।
आत्म ज्योति प्रगटे जभी "अभयमती" कर ध्यान॥ ८॥

ॐ ह्रीं श्रेयांसनाथजिनेंद्राय जयमाला पूर्णार्घ्यं०...।
शांतये शांतिधारा पुष्पांजलिः।

गीता छंद

जो भव्य श्रद्धा भक्ति से श्रेयांस जिन पूजा करें।
वे ऋद्धि सिद्धि समृद्धि लौकिक आदि सुख निश्चित धरें॥
फिर आत्म संपत्ती को पाकर सहज आत्मिक सुख जगे।
शिव महल में आवास कर निज आत्म ज्योती जगमगे॥
॥इत्याशीर्वादः॥

पूजा नं०—२०

श्री वासुपूज्य जिन पूजा

अथ स्थापना

कवित्त छंद

मुनिजन अहो सप्रेम जिनका ध्यान धरते सर्वदा।
सज्जन समूह चकोर ध्वनि सुन मुदित होते हैं मना॥
है तरण तारण विश्व में जिनका मनोहर नाम है।
उन पतित पावन वासुपूज्य को बारंबार प्रणाम है॥

दोहा

बाल ब्रह्मचारी रहे, वासुपूज्य जिनराज।
करूं थापना भाव से, जनम सफल हो आज॥

ॐ ह्रीं श्री वासुपूज्य जिनेन्द्र ! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं।
ॐ ह्रीं श्री वासुपूज्य जिनेन्द्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।
ॐ ह्रीं श्री वासुपूज्य जिनेन्द्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं।

चाल—भरतरी ते गुरु मेरे उर बसो.....

जलधारा चरणन करूं, कल्मष पाप निवार।
बाल ब्रह्मचारी प्रभो! वासुपूज्य उर धार॥ १॥

ॐ ह्रीं श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं०।

चन्दन से पूजूं सदा, भव आताप निवार।
बाल ब्रह्मचारी प्रभो! वासुपूज्य उर धार॥ २॥

ॐ ह्रीं श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय संसारतापविनाशनाय चंदनं०।

अक्षत पुंज अखण्ड ले, अक्षत पद को धार।
बाल ब्रह्मचारी प्रभो! वासुपूज्य उर धार॥ ३॥

ॐ ह्रीं श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं०।

पारिजात बहुपुष्प ले, काम व्यथा निरवार।
बाल ब्रह्मचारी प्रभो! वासुपूज्य उर धार॥ ४॥

ॐ ह्रीं श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय! कामवाणविध्वंसनाय पुष्पं०।

रस पूरित नैवेद्य ले, तृष्णा भूख निवार।
बाल ब्रह्मचारी प्रभो! वासुपूज्य उर धार॥ ५॥

ॐ ह्रीं श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय! क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं०।

दीपक ज्योति प्रकाश कर, मोह तिमिर निरवार।
बाल ब्रह्मचारी प्रभो! वासुपूज्य उर धार॥ ६॥

ॐ ह्रीं श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय ! मोहांधकार विनाशनाय दीपं०।

शुद्ध मनोहर धूप खे, जले कर्म का जाल।
बाल ब्रह्मचारी प्रभो! वासुपूज्य उर धार॥ ७॥

ॐ ह्रीं श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय! अष्टकर्मविध्वंसनाय धूपं०॥

मोक्ष महाफल हेतु बहु, फल भर कंचन थाल।
बाल ब्रह्मचारी प्रभो! वासुपूज्य उर धार॥ ८॥

ॐ ह्रीं श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय ! मोक्षफलप्राप्तये फलं०॥

वसुविध अर्घ चढायकर, मिले सुखद भण्डार।
बाल ब्रह्मचारी प्रभो! वासुपूज्य उर धार॥ ९॥

ॐ ह्रीं श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय ! अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं०।

शंभु छंद

काय पाय कर तप को कीना आगम पढ़कर प्रभु गुण गाय।
धन को पाय दान कर दीना, जिनपद धार देत सुखपाय॥

शांतये शांतिधारा।

दोहा

कम खाना कम सोचना कर जिनवर से प्रीत।
कम कहना मुख से वचन यही जगत की रीत॥

दिव्य पुष्पांजलिः।

पंचकल्याणक अर्घ्य

सोरठा छंद

वदि अषाढ दिन छट्ठ, गर्भ कल्याणक जानियो।
मातपिता हर्षाय, वासुपूज्य प्रभु को भजूं॥ १॥

ॐ ह्रीं आषाढकृष्णा छंट्ठगर्भमंगलमण्डिताय श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय अर्घ्यं. . . ।

फागुन चौदस जान, जन्मकल्याणक मनाइयो।
मेरू पर अभिषेक, वासुपूज्य प्रभु को भजूं॥ २॥

ॐ ह्रीं फाल्गुनकृष्णाचौदस जन्ममंगलप्राप्ताय श्री वासुपूज्यजिनेंद्राय अर्घ्यं०. . .।

चौदस फागुन कृष्ण, तपकल्याणक मानियो।
लौकांतिक कर गान, वासुपूज्य प्रभु को भजूं॥ ३॥

ॐ ह्रीं फाल्गुनकृष्णचतुर्दश्यां तपमंगलप्राप्ताय श्री वासुपूज्यजिनेंद्राय अर्घ्यं०. .।

माघ शुक्ल द्वितीय, ज्ञानकल्याणक हो जभी।
ध्वनि सुन ज्योति जगाय, वासुपूज्य प्रभु को भजूं॥ ४॥

ॐ ह्रीं माघशुक्लद्वितीयायां केवलज्ञानमण्डिताय श्रीवासुपूज्यजिनेंद्राय अर्घ्यं०. .।

भादो चौदस शुक्ल, मोक्षकल्याणक जानियो।
चंपापुर से मुक्त, वासुपूज्य प्रभु को भजूं॥ ५॥

ॐ ह्रीं भाद्रपदशुक्लाचतुर्दश्यां मोक्षमंगलप्राप्ताय श्रीवासुपूज्यजिनेंद्राय अर्घ्यं०.।

शान्तये शांतिधारा, पुष्पांजलिः।

जाप्य—ॐ ह्रीं श्री धर्मचक्राय नमः।

जयमाला

दोहा

पांचों कल्याणक हुए, चम्पापुर में जान।
गाऊं गुण जयमालिका, सत्तर धनु तन भान॥

शेर छंद

वसुपूज्य जी पिता व पाटल देवि मात जी।
चम्पापुरी में जन्म ले श्री वासुपूज्य जी॥
प्रभु बाल ब्रह्मचारी उदासीन रूप थे।
सब छोड़ परिग्रह को चिदानंद रूप थे॥ १॥

हो पन्द्रह मास रत्न वृष्टि जन्म के पहले।
जब जन्म हो मेरु पर इन्द्र न्हवन को करे॥
उत्सव प्रभु का खूब हुआ लाड प्यार से।
यौवन में पग रखा प्रभू जी शुद्ध भाव से॥ २॥
बाना दिगम्बर धर लिया वैराग्य रूप में।
संयम चरित्र ध्यान से नशें कर्म को क्षण में॥
ज्ञाता सुदृष्टा बन गये प्रभु पूर्ण ज्ञान में।
दिव्य ध्वनि खिरे सभी भाषा के रूप में॥ ३॥
विभ्रम सभी का दूर हो मिथ्यात्व को तजा।
उर में प्रगट हो ज्ञान ज्योति आत्म को भजा॥
सब धन्य धन्य प्रभु कियो आनन्द कन्द जी।
भव दुख हरो "अभयमती" का वासुपूज्य जी॥ ४॥
जो रोहणी नक्षत्र दिन व्रत विधि करे घना।
प्रभु वासुपूज्य की करे अभिषेक अर्चना॥
उन्हें रोहणी कन्या समान दुःख शोक ना।
व्रत के महात्म्य से लहें सुख शांति कामना॥ ५॥
उत्तम कहें नौ वर्ष मध्यम सात वर्ष में।
अरु पांच वर्ष कहं जघन व्रत तीन रूप में॥
व्रत पूर्ण उद्यापन विधी कर शक्ति रूप में।
मुक्ति श्री को प्राप्त कर चैतन्य में रमें॥ ६॥
इन्द्रादि की पदवी व चक्री की भी चाह ना।
अरु स्वर्ग सुख वैभव की कुछ परवाह करूं ना॥
रत्नत्रय निधि द्वारा करूं निज की प्रभावना।
आतम से परमातम बनूं बस एक भावना॥ ७॥

ॐ ह्रीं श्री वासुपूज्य जिनेन्द्राय जयमाला पूर्णार्घ्य निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा

वासुपूज्य जिनराज जी, शत शत बार प्रणाम।
कर्मनाश कर मुक्त हो सिद्ध शिला में धाम॥
णमोकार सा मंत्र नहीं वीतराग सा देव।
सम्मेद शिखर सी यात्रा नहीं आतम देव सुदेव॥

॥ इत्याशीर्वादः पुष्पांजलिं॥

पूजा नं०—२१

श्री विमलनाथ पूजा

अथ स्थापना

हरिगीतिका छंद

जय जय श्री जिन विमलप्रभु को पूजते जो भवि सदा।
वे अतुल संपत्ति प्राप्त करके नहि लहें भव दुख कदा॥
धन्य नगरी कंपिला अरु धन्य कृतवर्मा पिता।
धन्य जय भामासुदेवी धन्य प्रभु पूजें मुदा॥

ॐ ह्रीं श्री विमलनाथजिन ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।
ॐ ह्रीं श्री विमलनाथजिन ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं
ॐ ह्रीं श्री विमलनाथजिन ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं।

राग—बारहमासा मरहटी छंद

मैं पूजूं विमल जिनेंद्र, पूज्य शत इंद्र सभी मन भाके।
जिनप्रभु की अनुपम छवि को निरख हर्षाते॥

झड़

भव जलधि तीर्थ शिवधामी, जगवंदनीय प्रभु नामी।
जो दर्श करे मुनि ज्ञानी, सम्यक्त्व लहे विज्ञानी॥
ले शुद्ध नीर प्रभु चरण धार कर शरण, प्रभो चित लाके॥
॥ जिन० ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं विमलनाथजिनेंद्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं०. . .।

झड़

हो धन्य आज मैं आया, प्रभु दर्शन कर हर्षाया।
जो तुमरी शरण में आया उसको भव पार लगाया॥
प्रभु चंदन अर्पण करें, ताप भव हरें, शुद्ध मन लाके॥
॥ जिन० ॥ २ ॥

ॐ ह्रीं विमलनाथजिनेंद्राय संसारतापविनाशनाय चंदनं०. . .।

झड़

तुम अमल अखंडित स्वामी, हो शुद्ध स्वरूप सुध्यानी।
प्रभु निर्मल आतम ज्ञानी, जो स्वयं लीन सुखदानी॥
शिव अक्षय पद की प्राप्ति, हेतु ले शालि, प्रभू को चढ़ाके।जिन०।३।
ॐ ह्रीं विमलनाथ जिनेंद्राय अक्षय पद प्राप्तये अक्षतं०... ।

झड़

प्रभु भोग रोग नहि राखें, निज में स्वाधीन विराजें।
अरू सब परद्रव्य को त्यागें, निज में चेतन गुण भासें॥
प्रभु को अर्पित कर फूल, मिटे है शूल, काम अरि नाशे।जिन०।४।
ॐ ह्रीं विमलनाथ जिनेंद्राय कामवाण विध्वंसनाय पुष्पं०... ।

झड़

प्रभु आत्मिक रस के स्वादी, हो निजगुण में अनुरागी।
चखे अगणित व्यंजन रागी, नहि होवे तृप्ति अभागी॥
कर भेंट प्रभू पकवान, होय धनवान. क्षुधा को नाशे॥ जिन० ॥ ५ ॥
ॐ ह्रीं विमलनाथ जिनेंद्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं०

झड़

ले ज्ञान प्रदीप उजेला, नशें प्रभु अज्ञान अंधेरा।
हने मोह शत्रु का घेरा, निज में ही करें बसेरा॥
प्रभु ढिग रत्नों के दीप, जले प्रज्योति, सुज्ञान प्रकाशे॥जिन० ॥ ६ ॥
ॐ ह्रीं विमलनाथ जिनेंद्राय मोहांधकार विनाशनाय दीपं०... ।

झड़

वर धूप निकट प्रभु लाया, खेकर वसु कर्म उड़ाया।
प्रभु आतम ध्यान लगाया, वसु कर्म कलंक नशाया॥
यह सब संसार असार, एक ही सार, प्रभू गुण गाके॥जिन० ॥ ७ ॥
ॐ ह्रीं विमलनाथ जिनेंद्राय अष्टकर्म दहनाय धूपं०... ।

झड़

प्रभु आत्म में रमण करे हैं, रत्नत्रय निधि को भरे हैं।
निज में नित ही विचरे हैं, शिवसुख में नित्य रमें हैं॥

शाश्वत सुख पाने हेत, प्रभो फल भेंट, शरण में आके॥
जिनप्रभु की अनुपम छवि को निरख हर्षाते॥ ८॥
ॐ ह्रीं विमलनाथ जिनेंद्राय मोक्ष फल प्राप्तये फलं०... ।
प्रभु सिद्धशिला में बसे हैं, जन्म मरण जरा को नशे हैं।
निज में निज रूप लसे हैं, कीर्तन कर खूब नचे हैं॥
जिन अर्घ समर्पण करें, परम पद धरें, हृदय में ध्याके॥जिन० ॥९ ॥
ॐ ह्रीं विमलनाथ जिनेंद्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं०... ।

दोहा

जय जय जय श्रीविमलप्रभु वंदूं बारंबार।
शांतिधारा करत ही, शांति मिले अपार॥
शांतये शांतिधारा।
प्रभु के गुण नहि गा सकें, को कर सकें बखान।
भक्ति सुमन अर्पण करें, पाऊं सुख महान॥
दिव्य पुष्पांजलिः।

पंचकल्याणक

सखी छंद

सुर रत्न वृष्टि बरषाये, प्रभु गर्भ कल्याण मनाये।
जन जन प्रभु मंगल गाये, हम पूजें मन हर्षाये॥ १॥
ॐ ह्रीं श्रीविमलनाथस्य जेठकृष्णादशम्यां गर्भकल्याणकाय अर्घ्यं०...।
पांडुक गिरि पर प्रभु लाये, इंद्रों ने न्हवन कराये।
सुर जन्मकल्याण मनाये, हम पूजें मन हर्षाये॥ २॥
ॐ ह्रीं श्रीविमलनाथस्य माघशुक्लचतुर्थ्यां जन्मकल्याणकाय अर्घ्यं०...।
प्रभु तप कर कर्म खिपाये, सब तप कल्याण मनाये।
लौकांतिक प्रभु गुण गायें, हम पूजें मन हर्षाये॥ ३॥
ॐ ह्रीं श्रीविमलनाथस्य माघशुक्लचतुर्थ्यां तपकल्याणकाय अर्घ्यं०...।
प्रभु घातिकर्म नशाये, अरिहंत परम पद पाये।
सुर ज्ञान कल्याण मनाये, हम पूजें मन हर्षाये॥ ४॥
ॐ ह्रीं श्रीविमलनाथस्य माघशुक्लषष्ठ्यां ज्ञानकल्याणकाय अर्घ्यं०... ।

प्रभु आठों कर्म नशाये, झट मोक्ष परम पद पायें।
सुर निर्वाण कल्याण मनायें हम पूजें मन हर्षाये॥ ५॥

ॐ ह्रीं श्रीविमलनाथस्य असाढ़कृष्णअष्टम्यां मोक्षकल्याणकाय अर्घ्यं०...।

जाप्य—ॐ ह्रीं श्री धर्मचक्राय नमः

जयमाला

दोहा

जय जय जय श्री विमल प्रभु नमन करूं शतबार।
गाऊं गुण जयमालिका मिले सौख्य भंडार॥

हरिगीतिका छंद

हे प्रभु अलौकिक शक्ति तेरी नशे कर्म का मैल है।
वह शक्ति मुझको प्राप्त हो, भक्ती करें प्रभु गेल है॥ टेक॥
इष्ट वस्तु मिले सभी, तो पुण्य का फल जोर है।
अरु अनिष्ट संयोग हो तो, पाप फल बेजोड़ है।
सुख दुःख सब कर्म का फल विषय सुख का जेल है॥वह०॥ १॥
शुभ फलों से हर समय हो अधर पर मुसकारियां।
अशुभ कर्मों से प्रतिक्षण, हो रही दुतकारियां॥
कर्म जैसा जो करे वैसा मिले फल बेल है॥ वह०॥ २॥
नर्क दुःखों की अपेक्षा स्वर्ग जाना इष्ट है।
पाप कर्मों की अपेक्षा पुण्य फल भी मिष्ट है॥
पाप कर्म तजे सभी जब मुक्ति पथ की गेल है॥ वह०॥ ३॥
लोह स्वर्ण कि बेड़ियाँ दोनों सदा बंधन धरे।
पुण्य पाप की जोड़ियाँ दोनों सदा क्रंदन करे॥
"अभयमती"कहं शुद्ध में लग मुक्ति पथ की रेल है॥ वह०॥ ४॥
धूप अरु छाया में जितना भेद कहं जिनवर सदा।
पुण्य कर्म व पाप में उतना हि अंतर है सदा॥
दृष्टि जैसी सृष्टि वैसी भावना में फेर है॥ वह०॥ ५॥
रत्न मानुष कुल सुवंश सुपुण्य से सब ही मिले।
पाप से कुल नीच घर दर दर भिखारी से फिरे॥

स्वार्थ के वश हो रहें बस दो दिनों का मेल है॥
वह शक्ति मुझको प्राप्त हो, भक्ती करें प्रभु गेल है॥ ६॥
ध्यान तप अरु गुरु समागम बोधि दुर्लभ पुण्य से।
पाप कर्म हुआ जभी श्रद्धा नहीं जिनधर्म से॥
देख लो संसार में सब कर्म का ही खेल है॥ वह० ॥ ७॥
चक्रवर्ती इंद्र अरु धरणेंद्र कर्मों से फंसे।
रावण महाबल देव तीर्थंकर न कर्मों से बचे॥
"अभयमती" कहं प्रभु के गुण गाकर मिटे दुख ढेर है॥वह० ॥ ८॥

घत्ता छंद

जय विमल नाथ जिन, कर्म शत्रु हन, शुद्धज्ञानघन सुखकारी।
मैं ध्यान लगाऊं, निज प्रति ध्याऊं बलिबलि जाऊं बलिहारी॥ ९॥

ॐ ह्रीं श्रीविमलनाथजिनेंद्राय जयमाला पूर्णार्घ्यं०. . .।

गीता छंद

जो भव्य श्रद्धा भक्ति से श्री विमलनाथ पूजा करें।
वे ऋद्धि सिद्धि समृद्धि स्वर्गिक आदि सुख निश्चित धरें॥
अरु आत्म संपत्ती को पाकर सहज आत्मिक सुख जगे।
शिव महल में आवास कर निज आत्म ज्योति जगमगे॥

॥ इत्याशीर्वादः ॥

पूजा नं०—२२

अनंतनाथ जिन पूजा

अथ स्थापना

शंभु छंद

जय जय जय प्रभु कर्म विजेता मोक्ष सुनेता सुखकारी।
ध्यान विवेक तपोबल से सब कर्म शत्रु नशे भारी॥
भव्य जीव को भव समुद्र से पार कियो प्रभु दुखहारी।
शुद्ध भाव से स्थापन कर पूजूं तुमको बलिहारी॥

ॐ ह्रीं अनंतनाथ जिन ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।
ॐ ह्रीं अनंतनाथ जिन ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।
ॐ ह्रीं अनंतनाथ जिन ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं।

चाल—धन्य धन्य आज घड़ी०.....

हे अनंतनाथ तेरी महिमा अपरंपार है।
भक्ती करके भक्त प्रभू की करते नैया पार है॥ टेक॥
खुशियाँ महान मुझे आज प्रभु दर्श से।
मैं हूं अपावन बनूं पावन प्रभु भक्ति से॥
रोग शोक नाश हेतु करें जल धार है॥ भक्ती०॥ १॥

ॐ ह्रीं अनंतनाथ जिनेंद्राय जन्म जरा मृत्यु विनाशनाय जलं०...।

रागी हूं विरागी बनूं मैं प्रभू के ध्यान से।
रागद्वेश से मुक्त प्रभू जी दर्पण सम विज्ञान से॥
चंदन से पूजूं जिनवर को होगा बेड़ा पार है॥ भक्ती०॥ २॥

ॐ ह्रीं० अनंतनाथ जिनेंद्राय संसार ताप विनाशनाय चंदनं०...।

जग के नश्वर वैभव में अज्ञानी डूबते।
अक्षय निधि के हेतु ज्ञानी जिनवर को पूजते॥
अक्षत के पुंज चढ़ाऊं बारंबार है॥ भक्ती०॥ ३॥

ॐ ह्रीं अनंतनाथ जिनेंद्राय अक्षय पदप्राप्तये अक्षतं०....।

आत्मा को तज के मूढ़ व्यर्थ में भ्रम रहा।
परद्रव्य मांहि मोह करके ये फंस रहा॥
भजूं प्रभो पुष्प से नशे कामबाण है॥
भक्ती करके भक्त प्रभू की करते नैया पार है॥ ४॥

ॐ ह्रीं अनंतनाथ जिनेंद्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं०...।

चेतन रस से तृप्त प्रभु आनंद ले रहे।
विषयों में फंसके मूढ़ जीवन को खो रहे॥
अर्पण करूं व्यंजन नशूं क्षुधा दुखकार है॥ भक्ती०॥ ५॥

ॐ ह्रीं अनंतनाथ जिनेंद्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं०...।

दीप से आरति कर, अंधकार नाश हो।
ज्ञानदीप से सदा सम्यक प्रकाश हो॥
मोहतम नाश हेतु, दीपरत्नहार है॥ भक्ती०॥ ६॥

ॐ ह्रीं अनंतनाथ जिनेंद्राय मोहांधकार विनाशनाय दीपं०...।

निर्मल रूप आपका देखके खिल रहे।
आतम में तुम्हें रखके पापों से डर रहे॥
धूप शुद्ध खेऊं उड़े, पाप भंडार है॥ भक्ती०॥ ७॥

ॐ ह्रीं अनंतनाथ जिनेंद्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं०...।

तेरे बिन स्वामी कुछ नहि भाया।
सच्चा मार्ग मैं अब तक न पाया॥
मोक्षफल हेतु धरूं फल साकार है॥ भक्ती०॥ ८॥

ॐ ह्रीं अनंतनाथ जिनेंद्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं०...।

चिरकाल से मैं जग में भ्रमता रहा।
माया के जाल में खूब फंसता रहा॥
पद अनर्घ्य प्राप्ति देऊं अर्घ सुखकार है॥ भक्ती०॥ ९॥

ॐ ह्रीं अनंतनाथ जिनेंद्राय अनर्घ्यपद प्राप्तये अर्घ्यं०...।

बसंततिलका छंद

ज्ञानी सदैव रहता जल के समान।
अज्ञानि पंक सम है फंसता महान॥
संसार मूल इक बंधन में बंधे हैं।
नहि कर्म बंध इक जो प्रभु को भजे हैं॥

शांतये शांतिधारा।

दोहा

यदि सुख चाहे जीव तू, जिन दर्शन कर खाय।
यही साथ में जायेगा, और न कुछ भी जाय॥
दिव्य पुष्पांजलिः।

पंचकल्याणक

मोतीदाम छन्द

लखें महिमा जिनदेव महान, मनाय इंद्रगण गर्भकल्याण।
करें सब मंगल नृत्य व गीत, अनेक प्रकार बजें संगीत॥ १॥
ॐ ह्रीं श्री अनंतनाथस्य कार्तिककृष्णाप्रतिपदायां गर्भकल्याणकाय अर्घ्यं. . .।
जय जय अनंत जिनवर अनूप, आश्चर्य करें सब लख स्वरूप।
कियो सुरगिरि अभिषेकजिनंद, लहें झट इंद्र सुमुक्ति महंत॥ २॥
ॐ ह्रीं श्री अनंतनाथस्य जेठकृष्णाद्वादश्यां जन्मकल्याणकाय अर्घ्यं०. . .।
प्रभो उर में सुविराग अपार लौकांतिक देव स्तुतिकर सार।
करें प्रभु पंच सुमुष्टी लोंच, जभी कर तप कल्याणक सोच॥ ३॥
ॐ ह्रीं अनंतनाथस्य ज्येष्ठकृष्णाद्वादश्यां तपकल्याणकाय अर्घ्यं०. . .।
भयो जब केवलज्ञान उद्योत, लसे रवि कोटि छवी प्रज्योत।
वरे शिवनारि भये जब सिद्ध, भजें हम प्रभु को लहें सब कुद्ध॥ ४॥
ॐ ह्रीं श्री अनंतनाथस्य चैतकृष्णाअमावस्यां ज्ञानकल्याणकाय अर्घ्यं०. . .।
जभी प्रभु करते योग निरोध लसे जब सिद्धशिला तज योग।
कियो झट मोक्ष कल्याण सुइंद्र भजें प्रभु को लहं सिद्ध मुनींद्र॥५॥
ॐ ह्रीं अनंतनाथस्य चैतकृष्णाअमावस्यां मोक्षकल्याणकाय अर्घ्यं०. . .।
जाप्य—ॐ ह्रीं श्री धर्मचक्राय नमः

जयमाला

बेसरी छंद

जय अनंतनाथ गुण सागर, ज्ञान ज्योति त्रैलोक्य उजागर।
गाऊं जिनवर की जयमाला, पहनूं चारित्र की गुणमाला॥

चाल—बहारो फूल बर्षाओ.....

घड़ी प्रभु ध्यान में बीते, घड़ी सच्ची कहानी है।
घड़ी ये ही अमोलक हैं इसी की याद लानी है॥ टेक॥
सही हित मार्ग में लगकर जो चलती स्वांस की घड़ियां।
यही सच्ची घड़ी नहि हाथ की घड़ियां बितानी है॥ घड़ी०॥ १॥
घड़ी हरदम दिखे सबको घड़ी को कोई ना जाने।
घड़ी को देखकर भी कौन जाने कैसी होनी है॥ घड़ी०॥ २॥
बिरानी है घड़ी की चाल, किस घड़ियां में क्या होगा।
सभी कुछ जानकर दुनियाँ, घड़ी को कुछ न जानी है॥ घड़ी०॥ ३॥
सुनो हे चेत रे चेतन! घड़ी इक व्यर्थ ना जावे।
भजन निज आत्म का करले, घड़ी ऐसी न आनी है॥ घड़ी०॥ ४॥
किसी की भी घड़ी देखो घड़ी का चित्र है न्यारा।
घड़ी ही तो घड़ी कहती घड़ी आकर न रुकनी है॥ घड़ी०॥ ५॥
ये जब तक स्वांस की घड़ियाँ आत्महित शीघ्र कर डालो।
परम रस प्राप्त कर निज में घड़ी की ये निशानी है॥ घड़ी०॥ ६॥
घड़ी निज आत्म अनुभव की यही निज साथ जावेगी।
व्यर्थ की जो घड़ी बीते, घड़ी वो ही सुधरनी है॥ घड़ी०॥ ७॥
जो जायेगी घड़ी निष्फल घड़ी पर हर घड़ी रोना।
"अभय" ज्योति जगे उनकी घड़ी हर प्रभु की वाणी है॥ घड़ी०॥ ८॥

घत्ता छन्द

जय अनंतजिनंदा आनंद कंदा, नशि भवफंदा सुखकारी।
मैं पूजूं ध्याऊं शीश नमाऊं "अभयमती" प्रभु उर धारी॥
ॐ ह्रीं अनंतनाथ जिनेद्राय जयमाला पूर्णार्घ्यं०।

शांतये शांतिधारा, पुष्पांजलिः।

गीता छंद

जो भव्य श्रद्धा भक्ति से अनंतनाथ जिन अर्चन करें।
वे रोग शोक व विघ्न संकट आदि दुख सब परिहरे॥
निज आत्म वैभव प्राप्त कर आत्मिक अतींद्रिय सुख जगे।
शिवमहल में आवास कर निज आत्म ज्योति जगमगे॥

॥ इत्याशीर्वादः॥

पूजा नं०—२३

श्री धर्मनाथ जिनपूजा

अथ स्थापना

शंभु छंद

हे धर्मनाथ! करुणासागर हम शरण तुम्हारे आये हैं।
हे सिद्धशिला के अधिनायक प्रभु श्रद्धा सुमन सजाये हैं॥
हे भानु पिता सुप्रभा देवी के पुत्र रत्न प्रभु मन भाये।
नगरी रत्नपुरी को धन्य कियो, पूजन कर जन जन हर्षायें॥

ॐ ह्रीं श्री धर्मनाथ जिनेंद्र ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।
ॐ ह्रीं श्री धर्मनाथ जिनेंद्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।
ॐ ह्रीं श्री धर्मनाथ जिनेंद्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं।

चाल—दिन रात मेरे स्वामी०......

जिन चरणधार देऊं, प्रभु मन पवित्र कर दो।
मेरे हृदय को भगवन्, शुचि भावना से भर दो॥
हे धर्मनाथ स्वामी, मैं भावना ये भाऊं।
जब तक मिले न मुक्ती, प्रभु को मैं उर में ध्याऊं॥ टेक॥ १॥

ॐ ह्रीं श्री धर्मनाथजिनेंद्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं०...॥

चंदन से नित्य पूजूं, प्रभु मन को शुद्ध कर दो।
मम अंतरंग भगवन्, शुचि भावना से भर दो॥ हे धर्मनाथ०॥ २॥

ॐ ह्रीं श्री धर्मनाथजिनेंद्राय संसार ताप विनाशनाय चंदनं०... ।

अक्षत के पुंज देऊं, प्रभु अक्षय पद दिला दो।
मम अंतरंग गुरुवर, शुचि भावना से भर दो॥हे धर्मनाथ०॥ ३॥

ॐ ह्रीं श्री धर्मनाथजिनेंद्राय अक्षय पद प्राप्तये अक्षतं०... ।

ले पुष्प कमल अर्चूं, प्रभु मन कमल खिला दो।
मम आतमा को जिनवर, शुचि भावना से भर दो॥हे धर्मनाथ० ।४।

ॐ ह्रीं श्री धर्मनाथजिनेंद्राय कामवाण विध्वंसनाय पुष्पं०... ।

व्यंजन सरस चढ़ाऊं, प्रभु भूख को मिटा दो।
मेरे हृदय को गुरुवर, शुचि भावना से भर दो॥
हे धर्मनाथ स्वामी, मैं भावना ये भाऊं।
जब तक मिले न मुक्ती, प्रभु को मैं उर में ध्याऊं॥ ५॥
ॐ ह्रीं श्री धर्मनाथजिनेंद्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं०...।
करूं ज्ञानज्योति आरति प्रभु मिथ्यातम को नश दो।
अंतर हृदय पटल को, शुचि भावना से भर दो॥हे धर्मनाथ०॥ ६॥
ॐ ह्रीं श्री धर्मनाथजिनेंद्राय मोहांधकारविनाशनाय दीपं०... ।
चंदन की धूप खेऊं, प्रभु कर्म को जलादो।
मम अन्तरंग भगवन, शुचि भावना से भर दो॥ हे धर्मनाथ०॥ ७॥
ॐ ह्रीं श्री धर्मनाथजिनेंद्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं०... ।
षट ऋतु के फल से पूजूं, प्रभु मुक्ति पद को दे दो।
मेरे हृदय को भगवन्, शुचि भावना से भर दो॥हे धर्मनाथ०॥ ८॥
ॐ ह्रीं श्री धर्मनाथजिनेंद्राय मोक्षफल प्राप्तये फलं०... ।
जीवन विकास हित प्रभु, बाधायें दूर कर दो।
अंतरहृदय पटल को, शुचि भावना से भर दो॥ हे धर्मनाथ०॥ ९॥
ॐ ह्रीं श्री धर्मनाथजिनेंद्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं०... ।

दोहा

धर्मनाथ भगवान को, जल की धारा देत।
आत्मशुद्धि के हेतु मैं, भक्ति सुमन कर भेंट॥
शांतये शांतिधारा।
कल्पवृक्ष के पुष्प बहु, लेय भजूं जिनराज।
आत्म सिंधु में रमण कर लहें मोक्षपुर राज॥
दिव्य पुष्पांजलिः।

पंचकल्याणक

दोहा

प्रभु अतिशय लख इंद्रगण, गर्भकल्याण मनाय।
प्रभु आंगन रत्नवृष्टि हो पूजें मन वच काय॥ १॥
ॐ ह्रीं श्री धर्मनाथस्य वैसाखशुक्लत्रयोदश्यां गर्भकल्याणकाय अर्घ्यं०...।

द्वार द्वार पर सज रहें, तोरण वंदनवार।
जन्मकल्याण मनायें सब, पूजें प्रभु उर धार॥ २॥

ॐ ह्रीं श्री धर्मनाथस्य माघशुक्लात्रयोदश्यां जन्मकल्याणकाय अर्घ्यं...।

सब संसार असार लख, कुटुंबादि प्रभु त्याग।
बन में जा दीक्षा धरी, भजूं प्रभो तज राग॥ ३॥

ॐ ह्रीं श्री धर्मनाथस्य माघशुक्लात्रयोदश्यां तपकल्याणकाय अर्घ्यं०...।

पूर्ण ज्ञान उर में जगे, आत्मज्योति प्रगटाय।
ज्ञातादृष्टा बन प्रभो, पूजें मन वच काय॥ ४॥

ॐ ह्रीं श्री धर्मनाथस्य पौषशुक्लापूर्णिमायां ज्ञानकल्याणकाय अर्घ्यं०...।

युग के भव भव फंद से, प्रभु की भक्ति सहाय।
मोक्ष कल्याण मनाय सब, पूजें मन हर्षाय॥ ५॥

ॐ ह्रीं श्री धर्मनाथस्य जेठशुक्लाचतुर्थ्यां मोक्षकल्याणकाय अर्घ्यं०...।

जाप्य—ॐ ह्रीं श्री धर्मचक्राय नमः

जयमाला

दोहा

जिनवर गुण अनंत हैं को कर सके बखान।
गाऊं गुण जयमालिका पाऊं मुक्ति प्रधान॥

बसंततिलका छंद

जै धर्मनाथ प्रभु हो तुम मोक्ष नेता।
जै धर्मनाथ प्रभु हो जग के विजेता॥
जै धर्मनाथ जिनशासन विश्व ज्ञेता।
जै धर्मनाथ जिन शासन कर्म भेत्ता॥ १॥
जैनेंद्र शासन करे निज में बसेरा।
हो ज्ञानज्योति प्रगटे निज में उजेला॥
जो है अनादि भव संतति कर्म डेरा।
जैनेंद्र शासन बिना मिटता न फेरा॥ २॥
है बीज वृक्ष सम पुद्गल कर्म बंध।
पाषाण स्वर्णवत है जिसका निबन्ध॥
जो आत्मशासन करे नहिं होय बंध।
चारित्र संयम बिना मिटता न फंद॥ ३॥

चारों हि योग इसमें सब ही बताते।
द्रव्यानुयोग पर मुख्य मुनींद्र गाते॥
आत्मानुभूति निज में नित जो लहाते।
वो जैन शासन सदा निज रूप ध्याते॥ ४॥
जो आत्मरूप अनुशासन में लगे हैं।
वे ही ऋषि श्रमण संस्कृति से पगे हैं॥
"श्री जैन संस्कृति" सदा उर में सजे हैं।
सो पंचइंद्रि मन जीत सदा जगे हैं॥ ५॥
जो धीर वीर ऋषिराज महा मुनींद्र।
वे आत्मभूत धरके सुचरित्र केन्द्र॥
सम्यक्त्व ज्ञान तप से सुख में विलीन।
वे लोक वंद्य मुझको कर आत्मधीन॥ ६॥
आत्मा अमूर्त्त पर का करता न धर्त्ता।
है आत्मरूप पर भाव विभाव हर्त्ता॥
जो शुद्ध रूप चिन मूर्त्त स्वभाव कर्त्ता।
सो ही अनादि शिव रूप सुखादि भर्त्ता॥ ७॥
ना आधि व्याधि दुख ताप न रोग शोक।
ना जन्म-मर्ण भय मोह न राग-द्वेष॥
ना बंध आस्रव न संवर हेतु मोक्ष।
संसार देह नहि किंचन आत्म बोध॥ ८॥
जैनेंद्र शासन करे भवि संत शूर।
वे वंदनीय जग में उपकारि भूर॥
मैं भी निजात्म रस काव्य रचा पदों में।
हे ज्ञानज्योति "अभयादिमती" बनूं मैं॥ ९॥

ॐ ह्रीं श्री धर्मनाथजिनेंद्राय जयमाला पूर्णार्घ्यं. . . .।

शांतये शांतिधारा पुष्पांजलिः।

मुक्तक छंद

हे विश्व हितंकर वंदनीय हे निर्मल देव तुम्हें प्रणाम।
हे सौम्य मूर्ति ज्ञाता दृष्टा हे ज्ञानदीप आगम! प्रणाम॥
हे शांतित्याग के मूर्त्तिमान शिवपथ दर्शक गुरुवर प्रणाम।
हे अंतरंग बहिरंग सुलक्ष्मी सहित प्रभो! शतशत प्रणाम॥

॥ इत्याशीर्वादः॥

पूजा नं०–२४

श्री शांतिनाथ जिन पूजा

अथ स्थापना

नीर छन्द

शांतिनाथ पंचम चक्री, अरु द्वादश मदन सहित सोहें।
आतम से परमातम बनकर, जन जन का प्रभु मन मोहें॥
आत्म शान्ति के हेतु सदा, हम प्रभु को वंदन करते हैं।
भक्ती से प्रभु का आह्वानन कर हम अर्चन करते हैं॥

ॐ ह्रीं श्री शान्तिनाथ जिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं
ॐ ह्रीं श्री शान्तिनाथ जिनेन्द्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।
ॐ ह्रीं श्री शान्तिनाथ जिनेन्द्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं।

मुक्तक छंद

भव बन में जीभर घूम चुका, पर तृषा न मेरी शान्त हुई।
इस हेतू प्रभु चरणों में जल, धारा की इच्छा आज हुई॥
निज सहजिक सुख की प्राप्ति हेतु, हम शांतिनाथ को भजते हैं।
प्रभु आप समान बनूं इक दिन, यह ही अभिलाषा रखते है॥निज०॥

ॐ ह्रीं श्री शान्तिनाथ जिनेन्द्राय जन्मजरामृत्यु विनाशनाय जलं०. . . ॥ १ ॥

धन कन कंचन प्रासादों में, सुख का आभास मिला क्षण में।
भव ताप विनाशन हेतु सदा, चन्दन चर्चूं प्रभु चरणों में॥ निज०॥

ॐ ह्रीं श्री शान्तिनाथ जिनेन्द्राय संसार ताप विनाशनाय चंदनं० . . . ॥ २ ॥

जिसमें सुख अब तक मान रहा, वे क्षणभर में नश जाते हैं।
इस कारण अक्षय पद के हित, प्रभु अक्षत पुंज चढाते हैं॥निज०॥

ॐ ह्रीं श्री शान्तिनाथ जिनेन्द्राय अक्षय पद प्राप्तये अक्षतं०. . . ॥ ३ ॥

जो विष सम भोग मधुर समझे, वे तृष्णा में नित जलते हैं।
इसलिए मदन नाशक हम नित, बहु पुष्प चरण में धरते हैं॥निज०॥

ॐ ह्रीं श्री शान्तिनाथ जिनेन्द्राय कामवाण विध्वंसनाय पुष्पं०. . . ॥ ४ ॥

रसना इंद्रिय के वशीभूत, अब तक नहिं मेरी भूख भगी।
अतएव क्षुधा नाशक व्यंजन, प्रभु भेंट करूं यह आश लगी।निज०।
ॐ ह्रीं श्री शान्तिनाथजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं. . . ॥ ५ ॥
इस नश्वर जड़ दीपक को अब तक, समझा था सच्चा मैंने।
नहिं सफल हुये इसलिये, रत्न दीपों से आरति कर मैंने॥ निज०॥
ॐ ह्रीं श्री शान्तिनाथ जिनेन्द्राय मोहांधकार विनाशनाय दीपं०. . . ॥ ६ ॥
नित राग द्वेष के वश होकर, हम भव समुद्र में भ्रमण करें।
वर धूप सुगंधित खेकर प्रभु, सम्पूर्ण कर्म हम नष्ट करें॥ निज०॥
ॐ ह्रीं श्री शान्तिनाथ जिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं. . ॥ ७ ॥
इच्छित फल पाने को मैंने, नित अन्य देव की शरण लिया।
नहिं मिला श्रेष्ठ फल अतः प्रभू ढिंग सरस फलों को भेट किया॥
॥ निज०॥
ॐ ह्रीं श्री शान्तिनाथ जिनेन्द्राय मोक्षफल प्राप्तये फलं०. . . ॥ ८ ॥
जल चंदन अक्षत पुष्प चरू, अरु दीप धूप फल अर्घ्य भरें।
अक्षत अनर्घ्य पद प्राप्ति हेतु, प्रभु चरणों में हम अर्घ धरें॥ निज०॥
ॐ ह्रीं श्री शान्तिनाथ जिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं०. . . ॥ ९ ॥

बसंततितिलका छंद

प्रभु शांतिधार नवज्योति सदा जगाता।
हिंसा विरोध कर दूर सुशांति लाता॥
धर्मानुराग कर जीवन प्रेम नाता।
ऐसी ये शांतिधारा प्रभु पद में देऊं॥
शांतये शांतिधारा।

दोहा

प्रभो तुल्य संसार में, और न कोइ सहाय।
यही जगत में सार है सेवो नित प्रति आय॥
दिव्य पुष्पांजलिः।

पंचकल्याणक

हरिगीतिका छंद

भादव बदी सप्तम दिवस शुभ गर्भकल्याणक भयो।
सर्वार्थ सिद्धि विमान से झट हस्तिनापुर में चयो॥ १॥
ॐ ह्रीं श्री शांतिनाथ जिनेंद्राय भाद्रपदकृष्णासप्तम्यां गर्भकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं०...।

शुभ जेठ बदि चौदस दिवस प्रभु, जन्म कल्याणक भयो।
सुर इन्द्र नर धरणेन्द्र सब मिल, हर्ष युत उत्सव कियो॥ २॥
ॐ ह्रीं श्री शांतिनाथ जिनेंद्राय ज्येष्ठकृष्णाचतुर्दश्यां जन्मकल्याणक प्राप्ताय अर्घ्यं०...।

संसार भोग शरीर तजकर, प्रभु विरागी बन गये।
शुभ जेठ कृष्ण चतुर्दशी दिन सुतप कल्याणक भये॥ ३॥
ॐ ह्रीं श्री शांतिनाथ जिनेंद्राय ज्येष्ठकृष्णाचतुर्दश्यां तपकल्याणक प्राप्ताय अर्घ्यं०...।

शुभ पौष सुदि दशमी दिवस, प्रभु घाति कर्म सभी नशे।
तब ज्ञान कल्याणक हुवो, ज्ञाता सुदृष्टा प्रभु लसें॥ ४॥
ॐ ह्रीं श्री शांतिनाथ जिनेंद्राय पौषशुक्लादशम्यां ज्ञानकल्याणक प्राप्ताय अर्घ्यं०.।
सम्मेद गिरि पर शांतिप्रभु जी ध्यान में लवलीन थे।
तब जेठ कृष्ण चतुर्दशी दिन, प्रभु अघाति करम नशें॥ ५॥
ॐ ह्रीं श्री शांतिनाथ जिनेंद्राय ज्येष्ठकृष्णचतुर्दश्यां मोक्ष कल्याणक प्राप्ताय अर्घ्यं०...।

जाप्य—ॐ ह्रीं श्री धर्मचक्राय नम:

जयमाला

सोरठा

नमन करें हम आज, शांतिनाथ जिनराज का।
आत्म सिद्धि के काज, गाऊं तव जयमालिका॥

पद्धरि छंद

जय शांतिनाथ शिव सुख महंत, तुम चिदानन्द आनन्द कंद।
तुमरी महिमा है अगम संत, निज दर्शन सच्चा मुक्ति पंथ॥ १॥

तुम कामदेव हो चक्रवर्ति, सोलहवें तीर्थंकर महर्षि।
ऐरा देवी के गर्भ माहिं, आये प्रभुवर उत्सव मनाहिं॥ २॥
पंद्रह महिने तक रत्न वृष्टि, हो कल्पवृक्ष सम धर्म सृष्टि।
जब हस्तिनापुर में जन्म लियो तब मेरु शिखर अभिषेक कियो॥३॥
जब इन्द्र सहसकर करि अनंद, इन्द्राणी नृत्य करें सनन्द।
झन झन झन झन पायल बजंत, नन नन नन नन कर नूपुरंग॥४॥
दृम दृम दृम दृम बाजत मृदंग, घन घन घन घन घंटा बजंत।
तन तन तन तन करत तान, सन सन सन सन करत ध्यान॥ ५॥
कोइ प्रभु कीर्तन गुण करें गान, कोइ नाचत गावत सुर महान।
इत्यादि महा मंगल सु ठाठ सो जहां बनो सुरगिरि विराट॥ ६॥
पुनि इन्द्र नेत्र कर सहस बार, पर तृप्त न हो प्रभु लख अपार।
सुर इन्द्र मातुपितु सदन लार, पितु सौंप्यो प्रभु उर हर्ष धार॥ ७॥
प्रभु राजमाहिं लहं चक्र रत्न, छह खण्ड जीतकर धर्म यत्न।
जो प्रजापती रक्षक सुसन्त, हो राज ठाठ सुखिया महंत॥ ८॥
जब सब संसार असार जान, तज राज भोग वैभव महान।
झट हो विराग तप घोर ठान, हो ऋद्धि प्रगट केवल सुज्ञान॥ ९॥
निज में ही प्रभु कर आत्म ध्यान, झट पहुँचो शिवपुर मुक्तिथान।
जब मोक्ष कल्याणक हो महान, हम सब प्रभु वंदन करें आन।१०॥
प्रभु तुम ही तारण तरण जान, मेरी भव बाधा हरो आन।
मैं "अभयमती" नित नाय शीश, मोपे करुणा करियो मुनीश॥११॥

घत्ता छन्द

जय शान्ति जिनेशा, दया निधेषा, शिव परमेशा सुखकारी।
हरि हर चक्रेशा, काम विजेता, तीर्थ प्रणेता, दुखहारी॥
ॐ ह्रीं श्री शांतिनाथ जिनेन्द्राय पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

छन्द रूपकसवैया ॥ मात्रा ३१ ॥

शांतिनाथ चक्रेश्वर को जो, पूजें मन वच तन उर धार।
रोग शोक भय विघ्न दूर हो, अरु पावें इच्छित फल सार॥
क्रम क्रम से स्वर्गिक सुख पाकर, शिवपुर पहुँचो संत उदार।
तातें हम सब मिल कर प्रभु को, नमन करे हैं बारम्बार॥
॥ इत्याशीर्वादः परिपुष्पांजलि क्षिपेत्॥

पूजा नं०—२५

श्री कुंथुनाथ जिनपूजा

स्थापना—कवित्तछंद

हे वीतराग हे शांति पुंज करुणा सागर आदर्श प्रभो।
हे शांति प्रदर्शक कुंथुनाथ, हे गुरु अधिनायक जगत विभो॥
हम द्वार तुम्हारे आये हैं प्रभु मेरी ओर निहारो जी।
मेरे उर के सिंहासन पर स्थापन करूँ प्रभु तिष्ठो जी॥

ॐ ह्रीं श्री कुंथुनाथ जिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।
ॐ ह्रीं श्री कुंथुनाथ जिनेन्द्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।
ॐ ह्रीं श्री कुंथुनाथ जिनेन्द्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं।

हरिगीतिका छंद

क्षीरोदधि का नीर निर्मल भर सुझारी लीजिये।
प्रभु चरण में धार देऊं तृषानाशन कीजिये॥
शुभ नाम प्रभु रटता रहूं जीवन बनाने के लिए॥
प्रभु जी को मैं ध्याऊं सदा भव दुख मिटाने के लिये॥ टेक॥ १॥

ॐ ह्रीं श्री कुंथुनाथजिनेंद्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं०. . .॥ १॥

मलयागिरी चंदन सुघिस कंचन कटोरी भर लिये।
श्री कुंथुनाथचरण में चर्चूं मन को शीतल कर लिये॥ शुभ नाम०॥

ॐ ह्रीं श्री कुंथुनाथजिनेंद्राय संसार ताप विनाशनाय चंदनं०. . .॥ २॥

मुक्ता सदृश उज्ज्वल अखंडित शालि पावन भर लिये।
मणिमय रकेबी भरके अक्षत पुंज से प्रभु पूजिये॥ शुभ नाम०॥३॥

ॐ ह्रीं श्री कुंथुनाथजिनेंद्राय अक्षय पद प्राप्तये अक्षतं०. . .।

चंपा चमेली फूल नानाविध सुगंधित लाइये।
शुभ भाव से पूजूं सदा प्रभु कामदेव नशाइये॥ शुभ नाम०॥ ४॥

ॐ ह्रीं श्री कुंथुनाथजिनेंद्राय कामवाण विध्वंसनाय पुष्पं०. . .।

खाजे सुघेवर आदि शुद्ध पकवान सरस बनाइये।
प्रभु को समर्पण करके निश्चित क्षुधा रोगा मिटाइये। शुभ नाम०॥

ॐ ह्रीं श्री कुंथुनाथजिनेंद्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं०. . .॥ ५॥

दीपक उजाले से सदा जग का अंधेरा ही हटे।
निज ज्ञान ज्योति प्रकाश से प्रभु सर्व मिथ्यातम नशे॥
शुभ नाम प्रभु रटता रहूं जीवन बनाने के लिए॥
प्रभु जी को मैं ध्याऊं सदा भव दुख मिटाने के लिये॥ ६ ॥
ॐ ह्रीं श्री कुंथुनाथजिनेंद्राय मोहांधकार विनाशनाय दीपं०...॥ ६ ॥
वर धूप शुद्ध दशांग की ले प्रभु निकट में खेवते।
पूजहूं मैं शुद्ध मन से अष्टकर्म उड़ावते॥ शुभ नाम०॥ ७॥
ॐ ह्रीं श्री कुंथुनाथजिनेंद्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं०...।
एला छुहारा दाख पिस्ता लौंग श्रीफल लायके।
मोक्ष फल की प्राप्ति हितु फल से प्रभू को पूजते॥ शुभ नाम० ।८।
ॐ ह्रीं श्री कुंथुनाथजिनेंद्राय मोक्षफल प्राप्तये फलं०...।
जल फल सु आठों द्रव्य लेकर अर्घ शुद्ध बनाइये।
प्रभु के चरण में भेंट करके, शिवमहल को पाइये॥शुभ नाम० ।९।
ॐ ह्रीं श्री कुंथुनाथजिनेंद्राय अनर्घ्यपद प्राप्तये अर्घ्यं...।

सोरठा

कुंथुनाथजिनदेव, गुण अनंत मैं पूजहूं।
आत्मशांति के हेतु, शांतीधारा मैं करूं॥
शांतये शांतिधारा।
कल्पवृक्ष के पुष्प, हरसिंगार सुलाइये।
आत्मसिद्धि के काज, पुष्पांजलि अर्पण करूं॥
दिव्य पुष्पांजलिः।

पंचकल्याणक

उपगीत छंद—(आर्या)

छप्पन अरु छह देवी, माता की नित्य खूब कर सेवा।
सब मिल मंगल गाये, मैं पूजूं मिले मोक्ष पद मेवा॥ १॥
ॐ ह्रीं श्रीकुंथुनाथस्य श्रावणकृष्णादशम्यां गर्भकल्याणकाय अर्घ्यं०...।
पांडुक गिर प्रभु लाये, क्षीरोदधि इंद्र न्हवन प्रभु कीना।
नृत्य करे सुर देवी मैं पूजूं ध्याऊँ, आत्मगुण लीना॥ ॥
ॐ ह्रीं श्रीकुंथुनाथस्य वैसाखशुक्लाप्रतिपदायां जन्मकल्याणकाय अर्घ्यं०...।

वैराग्य प्रभो उर भाये, लौकांतिक सुर मिल कीर्ति गुण गावें।
पंच मुष्टि कर लोंच हम पूजें परमात्म पद पावें॥ ३॥

ॐ ह्रीं श्रीकुंथुनाथस्य वैसाखशुक्लाप्रतिपदायां तपकल्याणकाय अर्घ्यं०...।

ज्ञानज्योति उर प्रगटे दिव्यध्वनि सर्वांगप्रभु खिरे है।
भ्रांति मिटे ध्वनि सुनके, हम पूजें भव सिंधु से तिरे हैं॥ ४॥

ॐ ह्रीं श्रीकुंथुनाथस्य चैत्रशुक्ला तृतीयायां ज्ञानकल्याणकाय अर्घ्यं...।

अष्टकर्म प्रभु नाशे शाश्वत सुख में प्रभु नित्य ही रमे हैं।
उत्सव खूब मनायें हम पूजें शिवपुरी में बसे हैं॥ ५॥

ॐ ह्रीं श्रीकुंथुनाथस्य वैसाखशुक्लाप्रतिपदायां मोक्षकल्याणकाय अर्घ्यं०...।

जाप्य—ॐ ह्रीं श्री धर्मचक्राय नमः

जयमाला

दोहा

सब जीवन रक्षा करी कुंथनाथ भगवान।
मेरी भी रक्षा करो लेऊं आपका नाम॥
बारह भावन जगत में, करें स्वपर हितकार।
कुंथुनाथ धर भावना, उर वैराग्य प्रसार॥

बसंततिलका छंद

राजा सुछत्रपति इन्द्र नरेंद्र सारे।
है वायुयान रथ मोटर प्लेन न्यारे॥
बग्घा मृगेन्द्र मृग अश्व गजादि प्यारे।
होवे बिलीन क्षण में नहिं जांय लारे॥ १॥
ज्यों सिंह मध्य बन में मृग ना बचे है।
त्यों मृत्यु बीच क्षण जीवन ना रुके है॥
मणि मन्त्र तन्त्र जप यन्त्र सभी लहे हैं।
श्री देवशास्त्र गुरु ही मम शर्ण में हैं॥ २॥
संसार खार जल तुल्य असार जान।
कोई सुखी नहिं कभी दुख का निधान॥

कोल्हू सुबैलवत नित्य भ्रमे अजान।
त्यागी धनी सब फंसे बिन आत्मज्ञान॥ ३॥
है जन्म मर्ण नित जीव धरे अकेला।
साथी नहीं सुत कलत्र कुटुम् कबीला॥
पक्षी सदा इक उड़े तरु पै बसेरा।
त्यों हंस चेतन सदा इक है न भेला॥ ४॥
तृष्णाहि वश्य मृग जंगल में भ्रमे है।
रे मूढ़ चेतन अचेतन में फंसे है॥
ज्यों नीर क्षीर जिय पुद्गल का न भेला।
त्यों भिन्न भिन्न सब हैं कुछ भी न मेरा॥ ५॥
है सप्त धातु मय रुग्न शरीर मेला।
दुर्गन्ध दोष युत मैल बहे घनेरा॥
निःसार इक्षु सम निर्गुण देह थोथा।
चारित्र भूषित जभी भव अन्त होता॥ ६॥
ज्यों नाव में सलिल मोरिसु आ रहा है।
त्यों योग से करम आस्रव छा रहा है॥
जो राग द्वेश धर कर्म उसे सताते।
ज्ञानी निराश्रव हुये झट मोक्ष पाते॥ ७॥
मोरी सुडांट लगते जल ज्यों रुके है।
त्यों डांट संवर सु आस्रव भी भगे है॥
रे मोहनींद भग जा गुरु हैं जगाते।
आत्मानुभूति धर संवर को लहाते॥ ८॥
ये निर्जरा हि सविपाक सभी लहावे।
दूजी हि निर्जर सदा तप से कहावे॥
योगीश कर्म मल को तप से खिपावें।
चारित्र संयम बिना नहिं मुक्ति पावें॥ ९॥
है लोक नंत इसका करता न कोई।
संस्थान है पुरुषवत् हरता न कोई॥

सो "लोक" मांहि समता बिन जीव रोवे।
ये मूढ़ प्राणि बिन ज्ञान सुरत्न खोवे॥ १० ॥
है नन्त बार धन कंचन सर्व पाया।
चित पिंड ज्ञान घन ही मुझको न भाया॥
मानुष्य रत्न धर व्यर्थ इसे गमाया।
जो "बोधि दुर्लभ" धरे भव अन्त पाया॥ ११ ॥
जो भाव शुद्ध दृग ज्ञान व्रतादि सारे।
सो सत्य धर्म भगवान कहे हमारे॥
ये धर्म वृक्ष मन चिंतित वस्तु देवे।
धर्मी सुभव्य "अभयादिमती" धरे वे॥ १२ ॥
संपूर्ण संयम लहे प्रभु तीर्थकारी।
ऐश्वर्य भोग तज पूर्ण विराग धारी॥
ये भावना जगत में जन सौख्यकारी।
जो भव्य चिंतन करें बन पुण्यशाली॥ १३ ॥

ॐ ह्रीं श्री कुंथुनाथजिनेंद्राय जयमाला पूर्णार्घ्यं०. . . . ।

शांतये शांतिधारा। पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

दोहा

कुंथुनाथ भगवान को बारंबार प्रणाम।
दुःख हरण सुख करन प्रभु हृदय विराजो आन॥
आत्मशुद्धि के हेतु मैं आये तेरे द्वार।
भक्ति सुमन अर्पण करूं कर दो बेड़ा पार॥

॥ इत्याशीर्वादः ॥

पूजा नं०—२६

श्री अरहनाथ जिनपूजा

अथ स्थापना

हरिगीतिका छंद

प्रभु आपके गुणगान की सामर्थ्य मुझ में है कहां।
हैं अनंतों नाम पर इक शब्द नहि निकले वहां॥
सहस्त्र नेत्र बनाके देखा, किंतु अंत न पा सका।
आखिर सहस अठ नाम ले कुछ इंद्र भी नहि कर सका॥

ॐ ह्रीं श्री अरहनाथ जिन ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।
ॐ ह्रीं श्री अरहनाथ जिन ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।
ॐ ह्रीं श्री अरहनाथ जिन ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं।

चाल—प्रेम की गंगा बहाते चलो. . . .

आतम की ज्योति जगाते चलो।
भव भव के दुःख मिटाते चलो॥ टेक॥

वीतराग आदर्श देव की देखो कैसी माया।
कर्म महामल धोने हितु, प्रभु के चरणों में आया॥
जलधार प्रभु पद चढ़ाते चलो॥ भव०॥ १॥

ॐ ह्रीं श्री अरहनाथजिनेंद्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं०. . . .।

जाने कितने भव में भटका फिर भी शांति न पाई।
धन संग्रह बहु कियो मगर न बुझे तृष्णा की खाई॥
चंदन भी प्रभु को चढ़ाते चलो॥ भव०॥ २॥

ॐ ह्रीं श्री अरहनाथजिनेंद्राय संसार ताप विनाशनाय चंदनं०. . .।

भवदधि से तिरने को प्रभु ये अवसर मिला अनोखा।
तुम दिग्दर्शन करा दिया, जग मृग तृष्णा का धोखा॥
अक्षत के पुंज चढ़ाते चलो॥ भव०॥ ३॥

ॐ ह्रीं श्री अरहनाथजिनेंद्राय अक्षय पद प्राप्तये अक्षतं०. . .।

भोग रोग दुखदाई जो घटि यंत्र समान घुमाया।
ज्यों ज्यों भोगे भोग बढ़े त्यों त्यों आशा अरु माया॥
चुन चुन के पुष्प चढ़ाते चलो॥
भव भव के दुःख मिटाते चलो॥ ४॥

ॐ ह्रीं श्री अरहनाथ जिनेंद्राय कामवाण विध्वंसनाय पुष्पं०...।

कितने ही युग बीत गये पर पेट नहीं भर पाया।
पेटी पेट के भरने में ही जीवन व्यर्थ गमाया॥
"व्यंजन सरस" प्रभु चढ़ाते चलो॥ भव०॥ ५॥

ॐ ह्रीं श्री अरहनाथ जिनेंद्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं०...।

मिथ्या भ्रांति में पड़कर हम कदम कदम पर अटके।
मोह राग तुम में प्रभु नहि जाने हम कब तक भटके॥
रत्नों के दीप जलाते चलो॥ भव०॥ ६॥

ॐ ह्रीं श्री अरहनाथ जिनेंद्राय मोहांधकार विनाशनाय दीपं०...।

हे स्वामी चारों गति में ये कूर कर्म भटकाये।
इनके चक्कर में प्राणी भव भव में गोते खाये॥
धूप दशांग खिवाते चलो॥ भव०॥ ७॥

ॐ ह्रीं श्री अरहनाथ जिनेंद्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं०...।

पर को अपना मान के भगवन मैं संसार बढ़ाया।
जग की नश्वरता को अब तक मैंने जान न पाया॥
श्रीफल प्रभू को चढ़ाते चलो॥ भव०॥ ८॥

ॐ ह्रीं श्री अरहनाथ जिनेंद्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं०...।

भव वन में काफी भटका पर मिली न सुख की रेखा।
कोल्हु बैल सम भ्रमण कियो पर चैन कहीं ना देखा॥
प्रभु जी को अर्घ चढ़ाते चलो॥ भव०॥ ९॥

ॐ ह्रीं श्री अरहनाथ जिनेंद्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं०...।

दोहा

अरहनाथ जिनदेव को, पूजूं शत शत बार।
कर्म महा मल धोवते, करूं शांति की धार॥
शांतये शांतिधारा।

नानाविध बहु पुष्प से पूजूं प्रभु ढिग लाय।
श्रद्धा सुमन अर्पण करूं मनवांछित फल पाय॥
दिव्य पुष्पांजलिः।

पंचकल्याणक

गीता छंद

अज्ञानमय इस लोक में आलोक सा छाने लगा।
होकर प्रमुद सुरपति नगर में रत्न बरसाने लगा॥
ॐ ह्रीं श्रीअरहनाथजिनेंद्रस्य फागुनकृष्णतृतियायां गर्भकल्याणकाय अर्घ्यं०...।
पूरब दिशा के गोद में, नूतन दिवाकर आ गया।
भविजन हृदय विकसित हुये, जग में उजाला छा गया॥
ॐ ह्रीं श्रीअरहनाथजिनेंद्रस्य मगशिरशुक्ला-चतुर्दश्यां जन्मकल्याणकाय अर्घ्यं०.।
निज आत्म सुख के श्रोत में प्रभु ज्ञान रविज्योती जगे।
उपसर्ग और परीषहों को शांति से सहने लगे॥
ॐ ह्रीं श्रीअरहनाथस्य मगशिर-शुक्लादशम्यां तपकल्याणकाय अर्घ्यं०...।
देवेंद्र ने जब जगत हित समोशरण। की रचना किया।
साम्यपन से प्रभू मुक्ति का मार्ग निर्देशित किया॥
ॐ ह्रीं श्रीअरहनाथस्य कार्तिकशुक्लाद्वादश्यां ज्ञानकल्याणकाय अर्घ्यं०...।
प्रभु अष्ट कर्म अभाव से चेतन में दर्पण सम लसे।
सुर देवगण आकर के प्रभु का मोक्ष कल्याणक रचें॥
ॐ ह्रीं श्रीअरहनाथस्य चैतवदिअमावस्यां मोक्षकल्याणकाय अर्घ्यं०...।
जाप्य—ॐ ह्रीं श्री धर्मचक्राय नमः

जयमाला

दोहा

प्रभु की महिमा अगम है अरु गुण कहें अनंत।
गुण गावें सब इंद्र भी फिर भी लहें न अंत॥

मुक्तक छंद

चाल—चंदा प्रभु के.....

जिनदेव कथित इस चतुर्गती में मनुषगती ही सार कहे।
जिस दुर्लभ नरतन को पाकर, मानव प्रभु की भक्ति लहे॥ टेक॥
जय जय श्री अरहनाथ स्वामी कर, नगरी धन्य सलोना है।
जहां प्रभु जी की जय जय जय से गूंजे हर कोना कोना है॥
कृतकृत्य हुये प्रभु जी श्रावक कर धर्मकार्य शुभ पुण्य गहे॥
॥ जिस० ॥ १ ॥
यदि हाथों से नहिं दान दिया तो फिर कंगन की क्या शोभा।
हाथ में मेंहदी रचा रचाकर व्यर्थ चूड़ियों का बोझा॥
चतुर्प्रकार दान देता जो शीघ्र वही संसार जहे॥ जिस० ॥ २ ॥
यदि पैरों से जगह-जगह के तीर्थों की यात्रा नहिं की।
पायल घुंघरु बजा-बजाकर, अंत न हो भव दुःख कभी॥
जो तीर्थों की यात्रा कर-कर ध्यान धरे वह भव्य कहे॥जिस० ॥३ ॥
यदि कानों से गुरु की अमृत वाणी को नहिं सुना कभी।
कुंडल झुमकी को लटकाकर नहिं होता कल्याण जभी॥
वही धन्य है आप्त कथित श्रुत वाणी को नित खूब गहे॥जिस० ।४।
यदि इन आँखों से मैंने जिनवर के दर्शन नहीं किये।
तो फिर इनसे क्या मतलब, बस फिल्म सिनेमे देख नये॥
हाय-हाय धिक्कार रहे विषयों को जिसमें दुःख सहे॥ जिस० ॥ ५ ॥
यदि मैंने इस मुख से हितमित प्रिय वचनों को कहा नहीं।
तो फिर बत्तीसों के बत्तीस दांत कटाकर करे सही॥
मात्र एक अमृत वचनों से सभी विश्व आधीन रहे॥ जिस० ॥ ६ ॥
यदि मैंने श्री देव शास्त्र गुरु के चरणों में झुका नहीं।
मान के वश हो सिर ऊंचा कर स्वयं बुरा फल पाय सही॥
"अभयमती" कहं लघुता से ही प्रभुता भविजन शीघ्र लहे॥
॥ जिस० ॥ ७ ॥

घत्ता छंद

जय जय श्रीजिनवर कर्म चूर कर, शुभमंगल कर सुखकारी।
मैं पूजूं ध्याऊं शीश नमाऊं शिवपद पाऊं दुखहारी॥ जिस० ॥ ८ ॥
ॐ ह्रीं श्री अरहनाथजिनेंद्राय जयमाला पूर्णार्घ्यं०... ।

गीता छंद

जो भव्य श्रद्धा भक्ति से अरहनाथ जिनपूजा करे।
वे ऋद्धि सिद्धि समृद्धि स्वर्गिक आदि सुख निश्चित धरें॥
अरु आत्म संपत्ति को पाकर सहज, आत्मिक सुख जगे।
शिव महल में आवास कर निज आत्म ज्योति जगमगे॥

॥ इत्याशीर्वादः ॥

पूजा नं०—२७

श्री मल्लिनाथ जिनपूजा

अथ स्थापना

शंभु छंद

हे प्रभु! तव दर्शन पूजन कर पुण्य बंधकर हर्षाऊं।
श्री जिन भेष दिगंबर धरकर या व्रति बनकर तिर जाऊं॥
प्रभु निर्दोष छवि को लख के मैं निर्दोषी बन जाऊं।
भक्ति भाव से मल्लिनाथ की करूं थापना शिव पाऊं॥

ॐ ह्रीं श्री मल्लिनाथजिन ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।
ॐ ह्रीं श्री मल्लिनाथजिन ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।
ॐ ह्रीं श्री मल्लिनाथजिन ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं।

चाल—चन्दना पुकारे तेरे द्वार पे खड़ी.....

मल्लिनाथ के चरणों में निहाल हो रहा।
पूजन करके भक्त मालामाल हो रहा॥ टेक॥
मेरे इस व्याकुल मन को प्रभु शीतलवाणि से शांति करें हैं।
प्रभु की पावन अनुकंपा से सब विकल्प तज भ्रांति हरे हैं॥
सिद्ध शिला में जाने हितु जलधार कर रहा॥ पूजन०॥ १॥

ॐ ह्रीं श्री मल्लिनाथजिनेंद्राय जन्म जरा मृत्यु विनाशनाय जलं०...।

प्रभु पुनीत पदपंकज की भक्ति से भवदधि पार करे हैं।
किंतु हृदय की चंचलता से फिर से फिर फिर खूब रुले हैं॥
प्रभु को चंदन अर्पण कर संसार तज रहा॥ पूजन० ॥ २ ॥
ॐ ह्रीं श्री मल्लिनाथजिनेंद्राय संसार ताप विनाशनाय चंदनं०. . . ।
तीनलोक में आपके सदृश कोई भी प्रभु शरण नहीं है।
शांतिप्रदर्शक मल्लिजिनेश्वर के चरणों की धूल गही है॥
अक्षयनिधि हितु प्रभु को अक्षत शाल भर रहा॥ पूजन० ॥ ३ ॥
ॐ ह्रीं श्रीं मल्लिनाथजिनेंद्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं०. . . ।
पर को अपना मान के स्वामी आतम पद को खोय रहे हैं।
जो स्थिर होते प्रभु में वे अंतर कल्मष धोय रहे हैं॥
प्रभु को सुख हेतु पुष्पहार दे रहा॥ पूजन० ॥ ४ ॥
ॐ ह्रीं श्री मल्लिनाथजिनेंद्राय कामवाणविनाशनाय पुष्पं०. . . ।
अगणित द्रव्य चखे मैंने फिर भी नहि मुझको तृप्ति हुई है।
प्रभु अनंत बल को ही लख के मेरे में कुछ शक्ति हुई है॥
अनुपम रस हितु प्रभु को व्यंजन थाल भर रहा॥ पूजन० ॥ ५ ॥
ॐ ह्रीं श्री मल्लिनाथजिनेंद्राय क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं०. . . ।
उर में दिव्य प्रकाश हेतु प्रभु दीप सजाकर हम लाये हैं।
मोह तिमिर के नाश हेतु हम ज्ञान ज्योति को भर लाये हैं॥
आरति हितु प्रभु रत्नदीप के थाल भर रहा॥ पूजन० ॥ ६ ॥
ॐ ह्रीं श्री मल्लिनाथजिनेंद्राय मोहांधकार विनाशनाय दीपं०. . . ।
हे प्रभु अष्ट कर्म को नश के तुमने अठ गुण प्राप्त किया है।
आपकी शरण में आकर के मैं भी कुछ अनुभव प्राप्त किया है॥
कर्म नाश हितु धूप का धुंगार हो रहा॥ पूजन० ॥ ७ ॥
ॐ ह्रीं श्री मल्लिनाथजिनेंद्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं०. . . . ।
सच्चे सुख में रमकर भगवन्, आप सदा कृतकृत्य हुये हैं।
आत्मज्ञान बिन प्रभु चरणों में भक्ती वश बहु नृत्य किये हैं॥
शिवफल हितु प्रभु विविध सरस फल थाल भर रहा ॥पूजन० ॥ ८ ॥
ॐ ह्रीं श्री मल्लिनाथजिनेंद्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं०. . . ।
प्रभो चिरतन नित्य परमपद सिद्ध पुरी में वास करे हैं।
उस सिद्धपुरी को पाने हितु प्रभु के चरणों में अर्घ चढ़े है॥
अष्ट द्रव्य से युक्त कंचन थाल भर रहा॥ पूजन० ॥ ९ ॥
ॐ ह्रीं श्री मल्लिनाथजिनेंद्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं. . . ।

दोहा

ज्ञान गंग की धार दे, होय विश्व में शांति।
प्रभु की अमृत वाणि सुन तजे सभी निज भ्रांति॥
शांतये शांतिधारा।
मल्लिनाथ भगवान को, हृदय कमल में ध्याय॥
श्रद्धा सुमन से पूजते, मनवांछित फल पाय॥
दिव्य पुष्पांजलिः।

पंचकल्याणक

सखी छंद

प्रभु आंगन रत्नबरषाये, सुर गण मिल मंगल गायें।
देवी कर मात की सेवा, हम भजें मिले सुख मेवा॥
ॐ ह्रीं श्री मल्लिनाथस्य चैतशुक्लप्रतिपदायां गर्भकल्याणकाय अर्घ्यं...।
कर सुर गिरि प्रभु अभिषेका इक सहस आठ ले कलशा।
कर नृत्य गान इंद्राणी, हम पूजें बन मुनि ज्ञानी॥
ॐ ह्रीं श्री मल्लिनाथस्य मगसिरशुक्लएकादश्यां जन्मकल्याणकाय अर्घ्यं...।
प्रभु मल्लिनाथ ब्रह्मचारी, तप करते आत्मबिहारी।
सुर गण मिल मंगल गावें, हम पूजत शिव पद पावें॥
ॐ ह्रीं श्री मल्लिनाथस्य मगसिरशुक्लएकादश्यां तपकल्याणकाय अर्घ्यं...।
प्रभु पूर्ण ज्ञान प्रगटावें, जब दिव्यध्वनि खिर जावें।
ध्वनि सुन सब भ्रांति नशावें, हम पूजें मन हर्षावें॥
ॐ ह्रीं श्री मल्लिनाथस्य पौषकृष्णद्वितीयायां ज्ञानकल्याणकाय अर्घ्यं...।
प्रभु आठों कर्म नशावें, सम्मेदशिखर शिव पावें।
सब मोक्ष कल्याण मनावें, हम पूजत शिवपुर जावें॥
ॐ ह्रीं श्री मल्लिनाथस्य फागुनशुक्लपंचम्यां मोक्षकल्याणकाय अर्घ्यं...।
जाप्य—ॐ ह्री श्री धर्मचक्राय नमः

जयमाला

दोहा

मल्लिप्रभो जिनदेव को जो पूजें धर प्रीत।
प्रभु के गुण गाकर सदा लहें मुक्ति नवनीत॥

शेर छंद

जय जय श्री मल्लिनाथ प्रभो देव हो तुम्हीं।
अनादि शिव अनंत स्वयं सिद्ध हो तुम्हीं॥
प्रभु के गुणों का पार नहि पावें बृहस्पती।
गाके बजाके नाचके भक्ती करें सभी॥ १॥
प्रभु बालपन में मित्रसंग खेल खेलते।
आश्चर्य कर प्रभू को सब इक टक से देखते॥
गोली पे गोली रख दियो प्रभु रंग में रंगते।
फिर भी न आतम से मुड़े, निज ज्ञान में रमते॥ २॥
क्रम क्रम से यौवन में प्रभू जी पग रखा जभी।
वैराग्य समाया हुआ अन्तर पटल सभी॥
मुख पे उदासी छा रही बाधा न किसी की।
मुक्ति श्री की याद प्रभु को इक सता रही॥ ३॥
माता पिता प्रभु मल्लि की शादी रचा रहें।
मन में भरी उमंग सब गृह को सजा रहें॥
मन की ही मन में रह गई सब सोचते रहें।
शादी से कर इंकार प्रभु चारित्र रथ चढ़ें॥ ४॥
प्रभु केशलोंच पंचमुष्टि से करें पल में।
कर लें कठोर तप को प्रभु नित आत्मध्यान में॥
बाना दिगंबर धार कर निज में रमण करें।
कर घातिया को नाश रहते पूर्णज्ञान में॥ ५॥
अरु शेष अघाती करम को शीघ्र ही नशे।
ज्ञाता सुदृष्टा बनके सिद्ध लोक में बसें॥
प्रभु मल्लि ने आतम से बन परमात्म रूप में।
मैं भी बंनू अन्तरात्म से भगवान रूप में॥ ६॥
हे नाथ तेरे दर्श नेत्र सफल कर दिये।
अरु पाप के संताप को सब दूर कर दिये॥

मैं हूं अपावन प्रभु प्रसाद से पावन हुये।
तेरे ही ध्यान से प्रभो नरतन सफल किये॥ ७॥
अंजन से निरंजन हुये प्रभु भेदज्ञान में।
जिन मार्ग में करते किलोल भव्य ध्यान में॥
मिथ्यात्व वमन करके सत्स्वरूप को धरें।
कहती "अभयमती" प्रभू जी ले लो शरण में॥ ८॥

जय मल्लिजिनेशा शिव परमेशा जगत महेशा सौख्य करे।
जय नमत सुरेशा तत्व प्रणेता, शिवपथ नेता दुःख हरे॥ ९॥

ॐ ह्रीं श्री मल्लिनाथजिनेंद्राय जयमाला पूर्णार्घ्यं०... ।

कुंडलियाँ

भक्त धनंजय क्रवि महा पूजन में रमजाय।
डंसा पुत्र को सर्प जब, फिर भी नहि घबड़ाय॥
फिर भी नहि घबड़ाय भक्ति में ध्यान लगाया।
बिषापहार स्तोत्र को रच अतिशय दिखलाया॥
इसी मंत्र गंधोदक से हो निर्विष काया।
चमत्कार प्रभु देख सभी आश्चर्य मनाया॥

दोहा

कल्मष किंचित नहि रहे निरखत ही जिनदेव।
ज्यों रवि ऊगत जगत में हरे तिमिर स्वयमेव॥ १॥
मल्लिनाथ भगवान का यही मंत्र संदेश।
प्राणि मात्र कर मित्रता, करें न राग व द्वेश॥ २॥

॥ इत्याशीर्वादः पुष्पांजलिं क्षिपेत्॥

पूजा नं०—२८

श्री मुनिसुव्रत जिन पूजा

अथ स्थापना

मुक्तक छंद

जय जय जय श्री मुनिसुव्रत जिन चरणों में शीश झुकाता हूँ।
जय जय पंचम गति पाने को मैं पूजा पाठ रचाता हूँ॥
जन जन में व्याप्त हुये भगवन हे कृपासिंधु! हे कृपानिधान।
भव बंध छुड़ाने वाले हे प्रभु जी तुमको शत शत प्रणाम॥

ॐ ह्रीं श्रीमुनिसुव्रतजिन ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।
ॐ ह्रीं श्रीमुनिसुव्रतजिन ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।
ॐ ह्रीं श्रीमुनिसुव्रतजिन ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं।

चाल—ऐ मां तेरी सूरत से अलग......

हम तेरी शरण में आये हैं तन मन धन अर्पण कर देंगे।
भगवान-२ तेरी भक्ति के लिये जीवन भी समर्पण कर देंगे॥ टेक॥
कंचन झारी में शुद्ध निर्मल नीर लिये।
मिथ्यामल धोने हेतु प्रभु पद धार किये॥
शाश्वत निधि पाने हेतु प्रभो, शुभ भाव से अर्चन कर लेंगे॥
॥ भगवान० ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं श्री मुनिसुव्रतजिनेंद्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं०... ।

मेरा संतप्त हृदय प्रभु भजके शांति लहें।
शीतलमन करने हेतु चंदन से पूजूं मैं॥
शाश्वत निधि पाने हेतु प्रभो, शुभ भाव से अर्चन कर लेंगे॥
॥ भगवान० ॥ २ ॥

ॐ ह्रीं श्री मुनिसुव्रतजिनेंद्राय संसारतापविनाशनाय चंदनं०... ।

उज्ज्वल मुक्तासम शुद्ध शालि अखंड भरे।
अक्षय पद प्राप्ती हेतु, अक्षत पुंज धरें॥
शाश्वत निधि पाने हेतु प्रभो, शुभ भाव से दर्शन कर लेंगे॥
हम तेरी शरण में आये हैं तन मन धन अर्पण कर देंगे।
भगवान-२ तेरी भक्ति के लिये जीवन भी समर्पण कर देंगे॥ ३॥

ॐ ह्रीं श्री मुनिसुव्रतजिनेंद्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं०... ।

बने पुष्प सदृश कोमल छलकपट को दूर करें।
अंतरविकार तज हेतु पुष्प से पूज भलें॥
शाश्वत निधि पाने हेतु प्रभो शुभ भाव से बंदन कर लेंगे॥
॥ भग० ॥ ४॥

ॐ ह्रीं श्री मुनिसुव्रतजिनेंद्राय कामवाणविध्वंसनाय पुष्पं०... ।

युग युग से धधक रही मन की इच्छा ज्वाला।
उसकी शांती हित भेंट प्रभु नेवज सारा॥
शाश्वत निधि पाने हेतु प्रभो शुभ भाव से अर्चन कर लेंगे॥
॥ भग० ॥ ५॥

ॐ ह्रीं श्री मुनिसुव्रतजिनेंद्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं०... ।

यह जड़ नश्वर दीपक जग का अंधकार हरे।
प्रभु अंतर दीपक से निज आतम ज्योति जले॥
शाश्वत निधि पाने हेतु प्रभो, शुभ भाव से झुक झुक भज लेंगे॥
॥ भग० ॥ ६॥

ॐ ह्रीं श्री मुनिसुव्रतजिनेंद्राय मोहांधकारविनाशनाय दीपं०... ।

जड़ कर्म सदा मेरी बुद्धि को भ्रष्ट करें।
खेऊं प्रभु धूप सुगंध जिससे सब कर्म जले॥
शाश्वत निधि पाने हेतु प्रभो शुभ भाव से अर्चन कर लेंगे॥
॥ भग० ॥ ७॥

ॐ ह्रीं श्री मुनिसुव्रतजिनेंद्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं०... ।

इंद्रिय सुख के फल हित आकुल व्याकुल हूं मैं।
आत्मिक सुख फल हित प्रभु अर्पण कर श्रीफल मैं॥
शाश्वत निधि पाने हेतु प्रभो शुभ भाव से कीर्तन कर लेंगे॥
॥ भग० ॥ ८॥

ॐ ह्रीं श्री मुनिसुव्रतजिनेंद्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं०... ।

प्रभु अर्घ समर्पण कर निज गुण में लीन रहूं।
निश्चित प्रभु आप सदृश मैं भी अर्हंत बनूं।।
शाश्वत निधि पाने हेतु प्रभो शुभ भाव से ध्यान लगा लेंगे।।
।। भग०।। ९।।

ॐ ह्रीं श्री मुनिसुव्रतजिनेंद्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं०....।

दोहा

प्रभु की अमृत वाणी सुन, भूले भटके पार।
शांति धार प्रभु देत ही, शांति हुई अपार।।
शांतये शांतिधारा।
जन्म जरा, अरु मृत्यु को जीत लिया प्रभु वीर।
पुष्पांजलि अर्पण करूं, छोडूं मोह शरीर।।
दिव्य पुष्पांजलिः।

पंचकल्याणक

दोहा

सोमा देवी गर्भ में, मुनि सुव्रत भगवान।
इंद्र आय उत्सव करें, पूजूं हर्ष महान।।

ॐ ह्रीं श्री मुनिसुव्रतनाथस्य श्रावणकृष्णद्वितीयायां गर्भकल्याणकाय अर्घ्यं०...।

दस अतिशय हो जन्म से, सोहें श्री भगवान।
देव इंद्र सेवा करे, लहें शीघ्र शिवधाम।।

ॐ ह्रीं श्री मुनिसुव्रतनाथस्य वैसाखकृष्णद्वादश्यां जन्मकल्याणकाय अर्घ्यं०..।

चंपक बन में लोंच कर उर वैराग्य समाय।
देव आय उत्सव करें पूजूं मन वच काय।।

ॐ ह्रीं श्री मुनिसुव्रतनाथस्य वैसाखकृष्णदशम्यां दीक्षाकल्याणकाय अर्घ्यं०..।

कर्म घातिया नाश कर पूर्णज्ञान प्रगटाय।
प्रभु ज्ञाता दृष्टा बनें, पूजूं मुक्ति लहाय।।

ॐ ह्रीं श्री मुनिसुव्रतनाथस्य वैसाखकृष्णनवम्यां ज्ञानकल्याणकाय अर्घ्यं०..।

अष्ट कर्म नश शिव गये, मुनिसुव्रत भगवान।
मोक्ष कल्याण मनाय सब, गाऊं प्रभु गुणगान॥

ॐ ह्रीं श्री मुनिसुव्रतनाथस्य फागुनकृष्णद्वादश्यां मोक्षकल्याणकाय अर्घ्यं०.. ।

जाप्य—ॐ ह्रीं श्री धर्मचक्राय नमः

जयमाला

दोहा

वीतराग विज्ञान की बात करें भरपूर।
गाऊं गुण जयमालिका, मिटे हृदय की शूल॥

तर्ज—तेरी प्यारी-प्यारी मूरत ये.....

निज में ही प्रभू को भज करके संकल्प विकल्प तजे, चेतवन तू।टेक।
जय जय मुनिसुव्रत प्रभु जी, कोटि चंद्र रवि हरें छवी।
ध्यान विवेक तपोबल से अरि कर्म प्रचंड नशें सब ही॥
प्रभु श्रद्धा सुमन से भक्ति करें, जब आतम की ज्योति जगे॥
॥ चेतवन तू० ॥ १ ॥

देव शास्त्र गुरु प्यारा है, आत्म चिंतवन न्यारा है।
सत्य शिवं सोहं को लेकर मानुष जनम सुधारा है॥
निज आत्म दीप को ले करके, मिथ्यातम जु दूर भगें॥
॥ चेतवन तू० ॥ २ ॥

सब जीवों से प्रेम करें, गुणीजनों में मोद भरे।
करुणा स्रोत बहे दुखियों पर, दुर्जन में मध्यस्थ धरें॥
निज धर्म अहिंसा शस्त्र को ले जब पापी भी डरकर भगें॥
॥ चेतवन तू० ॥ ३ ॥

झूठ वचन नहीं मुख से कहें, चोरी कभी न किया करें।
ब्रह्मचर्य को धारण करके, आत्मब्रह्म में रमण करें॥
निस्पृह गुण को निज में रखके, परिग्रह सब मूल तजें॥
॥ चेतवन तू० ॥ ४ ॥

भूलके रात्रि न भोजी बनें, छान के पानी पिया करें।
अष्टमूल गुण धारण करके, पाक्षिक श्रावक अब भी बनें॥

जिन भेष चिदम्बर को धरके, सब पापों का मूल तजें॥
॥ चेतवन तू० ॥ ५ ॥

पद्मासन प्रभु लीन रहें, निज पद में विश्राम लहें।
भवदधि तारक होकर के भी निज स्वरूप में लीन रहें॥
प्रभु का नित यश गुण गाकर के निज में निज रूप सजें।
॥ चेतवन तू० ॥ ६ ॥

षट् आवश्यक कर्म करें, सत्संगति में रमें रहें।
आप्त तत्व को निशदिन भजके, आत्म रसिक भी बना करें॥
कहें "अभयमती" निज में रमकर शिवपुर की डगरिया लगें॥
॥ चेतवन तू० ॥ ७ ॥

घत्ता

जय जय मुनिसुव्रत धरें शुद्धव्रत सर्व पाप हत सुखकारी।
मैं पूजूं ध्याऊं भक्ति बढ़ाऊं, निज सुख पाऊं दुखहारी॥

ॐ ह्रीं श्रीमुनिसुव्रतनाथजिनेंद्राय जयमाला पूर्णार्घ्यं०. . . ।

गीता छंद

जो भव्य श्रद्धा भक्ति से मुनिसुव्रत जिन पूजा करें।
वे सर्व ऋद्धि प्राप्त कर निज सुख में ही झूला करें॥
निज आत्म वैभव प्राप्त कर जब शीघ्र सहजिक सुख भरें।
मुक्तिपुरी में वास कर सब कर्ममल को परिहरें॥

॥ इत्याशीर्वादः ॥

पूजा नं०—२१

श्री नमिनाथ जिन पूजा

अथ स्थापना

जोगीरासा (नरेंद्र छंद)

चाल—परंपरंज्योति०.....

जय जय नमिजिन करुणासागर महिमा तेरी न्यारी।
जय जय भूत पिशाच व चोर उपद्रव सब दुख टारी॥
जय जय आनंद कंद चिदानंद दंद फंद भय हारी।
जय जय तीर्थंकर चूड़ामणि पूजूं प्रभु सुखकारी॥

ॐ ह्रीं श्री नमिनाथजिन ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।
ॐ ह्रीं श्री नमिनाथजिन ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।
ॐ ह्रीं श्री नमिनाथजिन ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं।

चाल—क्यों ना ध्यान लगाये०.......

हे नमिनाथ जिनेश्वर तुमको बलिहारी।
मन बच तन से पूजूं, कटे विपदा सारी॥ टेक॥

जन्म जन्म में पाप किये हैं। जल बिंदु सम सुख में जिये हैं।
धार करें प्रभु चरणन रोग नशे भारी॥ मन०॥ १॥

ॐ ह्रीं श्री नमिनाथजिनेंद्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं०... ।

अब तक विघ्न विरोध सताये, साम्यभाव बिन कुछ नहि भाये।
मन पवित्र हित भजें गंध से प्रभु भारी॥ मन०॥ २॥

ॐ ह्रीं श्री नमिनाथजिनेंद्राय संसार ताप विनाशनाय चंदनं०... ।

प्रभु तुम कर्मों पर जय पाई, मेरा जीवन है दुखदाई।
अक्षय निधि हित अक्षत प्रभु को चढ़े भारी॥ मन०॥ ३॥

ॐ ह्रीं श्री नमिनाथजिनेंद्राय अक्षय पद प्राप्तये अक्षतं०... ।

जितना हम उपसर्ग सहें हैं, उतना ध्यान चरित्र बढ़े है।
भक्ति सुमन से पूजें प्रभु को सुखकारी॥
मन बच तन से पूजूं, कटे विपदा सारी॥ ४॥
ॐ ह्रीं श्री नमिनाथजिनेंद्राय कामवाण विध्वंसनाय पुष्पं०. . . ।
प्रभु अंतर की क्षुधा मिटाई, शक्ति अलौकिक भी प्रगटाई।
क्षुधा तृप्त हित व्यंजन प्रभु को चढ़े भारी॥ मन० ॥ ५॥
ॐ ह्रीं श्री नमिनाथजिनेंद्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं०. . . ।
प्रभु कर अंतर बाह्य उजाला, मेरे उर छायो अंधियारा।
ज्योति जगे प्रभु रत्नों के दीप जले भारी॥ मन० ॥ ६॥
ॐ ह्रीं श्री नमिनाथजिनेंद्राय मोहांधकार विनाशनाय दीपं०. . . ।
अष्टकर्म नाशे प्रभु क्षण में, पहुंचे प्रभु जी सिद्ध लोक में।
कर्म दहन हित पूजूं प्रभु जी मनहारी॥ मन० ॥ ७॥
ॐ ह्रीं श्री नमिनाथजिनेंद्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं०. . . ।
प्रभु ध्यानी कोइ डिगा न पाये, इंद्रों के आसन कंपाये।
शिव फल हित प्रभु श्रीफल भेंट करूं भारी॥ मन० ॥ ८॥
ॐ ह्रीं श्री नमिनाथजिनेंद्राय मोक्षफल प्राप्तये फलं०. . . ।
प्रभु आदर्श तुम्हारी गीता, संघर्षों में जीवन बीता।
पंचम गति हित प्रभु को अर्घ की भर थाली॥ मन० ॥ ९॥
ॐ ह्रीं श्री नमिनाथजिनेंद्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं०. . . ।

दोहा

प्रभु निरखत मुझको मिली फल अमूल्य निधि आज।
चक्री सुरपति संपदा अरु लहं शिवपुर राज॥
शांतये शांतिधारा।
अशुभ भाव को छोड़कर सदा धरे शुभ भाव।
पूजूं श्रद्धा पुष्प से, तजे सभी दुर्भाव॥
दिव्य पुष्पांजलिः।

पंचकल्याणक

चौपाई

विजय वप्रादेवी पितु माता, सुर तिहुंकाल रत्न बर्षाता।
साढ़े दस करोड़ रत्न वर्षे, पूजूं प्रभु मां आंगन भरते॥
ॐ ह्रीं श्रीनमिनाथस्य आसोजकृष्णाद्वितीयायां गर्भकल्याणकाय अर्घ्यं०...।
मिथिलापुरी में प्रभु जी जन्में, घंटे अनहद बजे गगन में।
सुर गण जन्म कल्याण मनावें पूजत प्रभु को शिव पद पावें॥
ॐ ह्रीं श्रीनमिनाथस्य असाढ़कृष्णदशम्यां जन्मकल्याणकाय अर्घ्यं०...।
कीना तप दुर्द्धर जिनराजा, वैभव तज बन माहिं विराजा।
सुर नर तप कल्याण मनायें पूजत हम सब प्रभु गुण गायें॥
ॐ ह्रीं श्रीनमिनाथस्य असाढ़कृष्णादशम्यां तपकल्याणकाय अर्घ्यं०...।
प्रभु जी केवलज्ञान लहाये, नवलब्धि दस अतिशय पाये।
चौदह अतिशय देव रचायें, पूजूं प्रभु छयालिस गुण भाये॥
ॐ ह्रीं श्रीनमिनाथस्य मगशिरशुक्लएकादश्यां ज्ञानकल्याणकाय अर्घ्यं०...।
कर्म नाश अठ गुण प्रगटायें, प्रभु जी अजर अमर पद पायें।
सुर नर मोक्ष कल्याण मनायें हम पूजत प्रभु शिव सुख पायें॥
ॐ ह्रीं श्रीनमिनाथस्य वैसाखकृष्णचतुर्दश्यां मोक्षकल्याणकाय अर्घ्यं०...।
जाप्य—ॐ ह्रीं श्री धर्मचक्राय नमः

जयमाला

दोहा

नमिनाथ जिनदेव को पूजूं शतशत बार।
आत्मसिद्धि के हेतु मैं गाऊं गुण जयमाल॥

चाल—मैं तो आरती उतारूं रे०......

मैं तो अर्घ चढ़ाऊँ रे नमिनाथ स्वामी की।
जय जय श्री नमिनाथ जय जय जय ॥ टेक॥
बड़ी चमत्कार शुभ मूर्ति भव्य दिवालय में।
श्री विश्व वंद्य योगीश भव्य जिनालय में॥

नृत्य करूं झूम-झूम, नाचूं गाऊं छूम-छूम जिनवर को ध्याऊं रे।
हो- हो भक्त बनके जिनवर को ध्याऊं रे॥
मैं तो अर्घ चढ़ाऊँ रे नमिनाथ स्वामी की।
जय जय श्री नमिनाथ जय जय जय ॥ १ ॥
संसार खार प्रभु जान, अरिहंत कर्मबली।
सब छोड़ा घर परिवार ऋषिवर आत्मबली॥
केशलुंच शीघ्र किए, पीछी मोर पंख लिए, पूजा रचाऊं रे।
हो- हो इंद्र बनके पूजा रचाऊं रे॥ मैं तो० ॥ २ ॥
मैं कलंकित प्रभु अकलंक संत प्रगोष्ठी में।
प्रभु चिंतामणि मैं रंक विद्वत् गोष्ठी में॥
घन-घन-घन घंट बजे, द्रम-द्रम मिरदंग सजे जिनवर गुण गाऊँ रे।
हो निकलंक बनके जिनवर गुण गाऊँ रे॥ मैं तो० ॥ ३ ॥
प्रभु संजीवन हुँ पराग भारत देशों में।
प्रभु काम धेनु मैं धाग अभयमति लेखों में॥
नमिनाथ गीत पढ़ूं आतम का ध्यान धरूं, जीवन सुधारूं रे।
हो-हो नरतन पाके जीवन सुधारूं रे॥ मैं तो० ॥ ४ ॥
प्रभु अमृत मैं हूं खजूर स्वर्ण अक्षरों में।
प्रभु चंदन मैं बंबूल शुभ नक्षत्रों में॥
जिनवर यशकीर्ति करूं, आतम से प्रीति धरूं।
ध्वजा चढ़ाऊं रे हो जिनशिखरों पे ध्वजा चढाऊं रे॥ मैं तो० ॥ ५ ॥
प्रभु दीपकं मैं खद्योत, कवि के चित्रों में।
प्रभु निर्दोषी मैं सदोष, जिनवर पत्रों में॥।
बार बार शीश धरूं, जिनवर से प्रीति करूं जयमाल गाऊं रे॥
हो हो भक्ति से जयमाल गाऊं रे॥ मैं तो० ॥ ६ ॥
प्रभु तुम पारस मैं लोह, विज्ञ की कदरों में।
प्रभु जी सूरज मैं चंद्र, संत की नजरों में॥
सोलह श्रृंगार करूं, अष्टद्रव्य थाल भरूं प्रभु को चढ़ाऊं रे।
हो अहमिंद्र बन के प्रभु को चढ़ाऊं रे॥ मैं तो० ॥ ७ ॥
प्रभु वीतराग मैं सराग, इंद्रिय भोगों में।
प्रभु हीरा रत्न मैं कांच बहुविध लोगों में॥
झम झम झंकार करूं, तन तन तन तान भरूं।
ज्योति जगाऊं रे हो हो आतम की ज्योति जगाऊं रे॥ मैं तो० ॥ ८ ॥

दोहा

शांति पुंज नमिनाथ की शरण लिया जो संत।
वे व्रत संयम नियमधर, शीघ्र करें भव अंत॥

ॐ ह्रीं नमिनाथजिनेंद्राय जयमाला पूर्णार्घ्यं०. . . ।

गीता छंद

श्री नमि जिनेश्वर देव की जो भक्ति से अर्चन करें।
वे पुण्य अतिशय प्राप्त कर, उपसर्ग विघ्न सभी टलें॥
कहं "अभयमती" क्रम-क्रम से सुख को भोग कर सब दुख हरें।
पंचम गति को प्राप्त कर, भवि मुक्ति कांता को वरें॥

॥ इत्याशीर्वादः ॥

पूजा नं०—३०

श्री नेमिनाथ जिन पूजा

अथ स्थापना

वीर छन्द

बाल ब्रह्मचारी नेमीश्वर, तुम हो प्रभु महिमाशाली।
चमत्कार दिखलाकर जगमें, प्रभु तुम हो संयमधारी॥
जय जय जय श्री योगीश्वरजी, तुम अतिशय करुणाधारी।
मैं पूजूं नित आह्वानन कर, मन वच तन से शिरधारी॥

ॐ ह्रीं श्री नेमिनाथ जिनेंद्र ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।
ॐ ह्रीं श्री नेमिनाथ जिनेंद्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।
ॐ ह्रीं श्री नेमिनाथ जिनेंद्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं।

मुक्तक छंद

शुभ चंद्र किरण सम उज्ज्वल जल, ले प्रभु चरणों में धार करूं।
अरु जन्म जरामृतु रोग निवारण अंतरंग को शुद्ध करूं॥
संसार असार समझ करके, प्रभु की भक्ती में नित्य रमूं।
अब ले लो अपनी शरण प्रभू जिससे मैं भी भगवान बनूं॥ १॥
ॐ ह्रीं श्री नेमिनाथ जिनेंद्राय जन्म जरा मृत्यु विनाशनाय जलं०... ।

कुंकुम अरु कर्पूर सुमिश्रित चंद सुगंधित शुद्ध धरूं।
भव आताप विनाशन हेतू , प्रभू चरणों में लेप करूं॥ संसार०॥
ॐ ह्रीं श्री नेमिनाथ जिनेंद्राय संसार ताप विनाशनाय चंदनं०...॥ २॥

पुष्प राशि शुभ यश सम निर्मल शुद्ध अखंडित शालि भरूं।
अक्षय सुख के कारण प्रभु ढिग, अक्षत सुरभित पुंज धरूं।संसार०।
ॐ ह्रीं श्री नेमिनाथ जिनेंद्राय अक्षय पद प्राप्तये अक्षतं०...॥ ३॥

पुंडरीक कल्पद्रुम बहुविध, कुसुम सुगंधित लाय धरूं।
दुर्जय मनमथ भंजन कारण, प्रभु चरणों में पुष्प भरूं॥ संसार०॥
ॐ ह्रीं श्री नेमिनाथ जिनेंद्राय कामवाण विध्वंसनाय पुष्पं०...॥ ४॥

घेवर फेनी आदि सुव्यंजन ले बहु कंचन थाल भरूं।
क्षुधा वेदनी नाश हेतु , प्रभु आगे नेवज भेंट करूं॥ संसार०॥
ॐ ह्रीं श्री नेमिनाथ जिनेंद्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं०...॥ ५॥

मणिमय रत्नों के दीपक ले, जगमग जगमग ज्योति करूं।
मोह तिमिर नाशक जिनवर ढिग, ज्ञानज्योति प्रकाश करूं।।संसार०।
ॐ ह्रीं श्री नेमिनाथ जिनेंद्राय मोहांधकार विनाशनाय दीपं०...॥ ६॥

भौरें नित गुंजार करें सो धूप सुगंध विविधि लेऊं।
अष्ट कर्म के नाश हेतु , प्रभु के आगे मैं नित खेऊं॥ संसार०॥
ॐ ह्रीं श्री नेमिनाथ जिनेंद्राय अष्टकर्म दहनाय धूपं०.... ॥७॥

नाना भांति सरस फल लेकर, श्रीफल आदिक लाय भजूं।
शाश्वत सुख की प्राप्ति हेतु, फल लेकर प्रभु को नित्य जजूं।संसार०।
ॐ ह्रीं श्री नेमिनाथ जिनेंद्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं०...॥ ८॥

जल फल आदिक अष्ट द्रव्य ले, शुद्ध धोय कर थाल सजूं।
अष्टम पृथ्वी प्राप्ति हेतु, प्रभु को नित अर्घ चढाय जजूं॥ संसार०॥
ॐ ह्रीं श्री नेमिनाथ जिनेंद्राय अनर्घ्यपद प्राप्तये अर्घ्यं०...॥ ९॥

तर्ज—जहां डाल-डाल.......

श्री नेमिनाथ जी के अर्चन से मिटता कर्मों का फेरा।
जहां वीतराग सर्वज्ञ हितंकर का गुण कीर्तन मेला॥
शत बार नमन है मेरा।
जिनके द्वारे पर छप्पन कोटि बराती सजकर आये।
पशु पुकार की करुण श्रवण वैराग्य हृदय में लाये॥
हां कृष्ण के छल को जान जभी गिरनार का लिया बसेरा॥
शत बार नमन है मेरा॥
शांतये शांतिधारा।

दोहा

नेमिनाथ भगवान जी कोटि कोटि प्रणाम।
भक्ति सुमन अर्पण करूं मिले मुक्ति का धाम॥
दिव्य पुष्पांजलिः।

पंचकल्याणक

सखी (चाल छन्द)

कार्तिक सुदि छट्ठ कहाये, शिवदेवी गरभ प्रभु आये।
पन्द्रह महिने रत्न वर्षे, हम पूजत सब जन हर्षे॥
ॐ ह्रीं कार्तिकशुक्लाषष्ठ्यां गर्भमंगलमण्डिताय श्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं०...।
श्रावण सुदि छट्ठ कहायो, प्रभु जन्म कल्याण मनायो।
पितु समुद्र विजय हर्षायो, हम पूजत पाप नशायो॥
ॐ ह्रीं श्रावणशुक्लाषष्ठ्यां जन्ममंगलप्राप्ताय श्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं०....।
सित सावन षष्टम भाये, जब लौकांतिक सुर आये।
प्रभु तप कल्याण मनाये, हम पूजत ध्यान लगाये॥
ॐ ह्रीं श्रावणशुक्लाषष्ठ्यां तपकल्याणकप्राप्ताय श्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं०...।
आश्विन शुक्ला एकम गायो, प्रभु घाति करम झट नशायो।
जब ज्ञान कल्याण मनायो, हम पूजत ज्ञान जगायो॥
ॐ ह्रीं आश्विनशुक्लाप्रतिपदायां केवलज्ञानप्राप्ताय श्रीनेमिनाथजिनेंद्राय अर्घ्यं०...।

सित आषाढ़ सप्तम भायो, प्रभु चार अघाति नशायो।
जब मोक्ष कल्याण मनायो, हम पूजत शिवसुख पायो॥

ॐ ह्रीं आषाढ़शुक्लासप्तम्यां मोक्षमंगलप्राप्ताय श्रीनेमिनाथजिनेंद्राय अर्घ्यं०....।
जाप्य—ॐ ह्रीं श्री धर्मचक्राय नमः

जयमाला

दोहा

प्रभु की महिमा अगम है, कोई न पावे पार।
नेमिनाथ भगवान को, बन्दूँ बारम्बार॥

लावनी छंद

जय जय जय जय श्री नेमिनाथ जिन चंदा।
पितु समुद्र विजय शिव देवी घर आनन्दा॥
तुम भव्य कमल विकसित हो भानु समानी।
भवि संत चकोर प्रफुल्लित कर सुखदानी॥
सुनकर पुकार पशुओं की करुणा कीना।
छप्पन जु कोटि तज दिया बरात प्रवीणा॥
तुम राजमती को त्याग शरण प्रभु लीना।
धन वैभव आदिक त्याग आत्म चित दीना॥
तुम कामदेव जित आतम अनुभव कीना।
झट ही अखण्ड यम ब्रह्मचर्य व्रत लीना॥
उर में विरागता भेष दिगम्बर धारा।
उपसर्ग परीषह सह निज रूप निहारा॥
जब चार घातिया कर्मों से हो न्यारा।
हो जगत्पूज्य तीर्थंकर नेमि दुलारा॥
जब पूर्ण ज्ञान से शोभ रहे ऋषिराजा।
ज्ञाता दृष्टा बनकर चिद्रूप विराजा॥
झट ज्ञान महोत्सव करें इन्द्र सुर राजा।
हो समवसरण की रचना भवि हित काजा॥

सब दिव्य ध्वनि सुन के उर भ्रान्ति नशाया।
हो भेद ज्ञान विकसित अज्ञान मिटाया॥
जब ध्यान अग्नि में कर्म अघाति नशाया।
पहुँचे झट सिद्ध शिला पर शिव सुख पाया॥
तुम तारण तरण जिहाज अलौकिक माया।
हो धन्य जिनेश्वर नेमिनाथ शिर नाया॥
भवसागर से मोहि तारो श्री जिन स्वामी।
मोहि सह्यो जात नहिं जगत महा दुखदानी॥
संसार चक्र से तुम प्रभु ले विश्रामी।
मुक्ति श्री में रमके लह शिव रजधानी॥
मम विघन कर्म हो खण्ड खण्ड जिन स्वामी।
मनवांछित फल को मण्ड मण्ड कर भामी॥
तुमरी भक्ती में लीन जगत के प्राणी।
पुनि झूम झूम कर नृत्य इन्द्र इन्द्राणी॥

घत्तानन्द छन्द

श्री नेमि जिनेशा शिवपरमेशा जगत महेशा सुखकारी।
तज राग रु द्वेषा निजगुण भेषा जिन उपदेशा दुखहारी॥

ॐ ह्रीं श्री नेमिनाथ जिनेन्द्राय जयमाला महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

हरिगीतिका छन्द

जो शुद्ध मन वच तन सहित, श्री नेमि प्रभु को चर्चते।
वे ऋद्धि सिद्धि समृद्धि युत, स्वर्गिक सुखों को भोगते॥
फिर शीघ्र नर भव पाय के, तप व्रत चरित संयम धरें।
जब "अभयमति" निज में रमणकर सहज शिवबल्लभ वरें॥

॥ इत्याशीर्वादः पुष्पांजलिं क्षिपेत्॥

पूजा नं०—३१

श्री पार्श्वनाथ पूजन

अथ स्थापना

(मुक्तक छंद)

हे पार्श्व प्रभू तव चरणों में, इक दरश भिखारी आया है।
प्रभु दर्शन भिक्षा पाने को, दो नयन कटोरे लाया है॥
हे परमज्योति! करुणा निधान! मेरी रक्षा अब शीघ्र करो।
मन वच तन से आह्वान करूँ, मेरे जीवन को सफल करो॥

ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथ जिनेंद्र ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।
ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथ जिनेंद्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।
ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथ जिनेंद्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं।

चाल—परंपरज्योति० नरेन्द्र छन्द जोगीरासा....

इस संसार विकट भव बन में, दुःख सहे नित भारी।
तृष्णा की ज्वाला मेटन को, धार करूं दुखहारी॥
पार्श्व प्रभू के चरणों में हम, भक्ति सहित शिरधारी।
पारस बनने हेतु प्रभू का, ध्यान धरूं सुखकारी॥

ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय जन्मजरामृत्यु विनाशनाय जलं०...।

कमठ क्रूर प्रभू क्षमा शील तुम, शीतलता उर लाई।
आत्म शांति के हेतु सुचंदन, प्रभु के चरण लागाई॥ पार्श्व०॥

ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय संसार ताप विनाशनाय चंदनं०...।

मोती सा जीवन पाकर प्रभु कर्मों पर जय पाई।
अक्षय पद पाने को प्रभु ढिग, अक्षत पुंज चढ़ाई॥ पार्श्व०॥

ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय अक्षय पद प्राप्तये अक्षतं०...।

आत्म कमल के पुष्पों से प्रभु जीवन को महकाई।
कामवाण विध्वंस हेतु प्रभु, चरणों पुष्प चढ़ाई॥ पार्श्व०॥

ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय कामवाण विध्वंसनाय पुष्पं०...।

मन इंद्रियों पर विजय प्राप्त कर क्षुधा रोग नशाया।
भूख विनाशन हेतु प्रभू को, नेवज शीघ्र चढ़ाया।। पार्श्व०।।
ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं०... ।
मिथ्यातम में कमठ भ्रमे है, पार्श्वनाथ से हारा।
आतम ज्योति जगे अंतर में, कर दीपक उजियारा।। पार्श्व०।।
ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय मोहांधकार विनाशनाय दीपं०... ।
प्रभु के तप रूपी दावानल में सब कर्म जले हैं।
मैं भी खेऊं धूप प्रभू ढिग, जब सब कर्म झड़े हैं।। पार्श्व०।।
ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं०... ।
प्रभु तप के फल से ही, झट इन्द्रों के आसन कंपे।
मैं भी उत्तम फल की आशा से प्रभु को फल अर्पें।। पार्श्व०।।
ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय मोक्षफल प्राप्तये फलं०... ।
प्रभु तुम घोरोपसर्गजयी बन कर निज आत्म विहारी।
हो अनर्घ्य पद प्राप्ति जभी, प्रभु अर्घ चढ़ाऊं भारी।। पार्श्व०।।
ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय अनर्घ्यपद प्राप्तये अर्घ्यं०... ।

तर्ज—जहां डाल डाल०......

श्री पार्श्वनाथ जी के सुमरन से मिटता मिथ्यात्व अंधेरा।
हो निज सम्यक्त्व उजेला
जहां दर्शन ज्ञान चरित तप संयम का हो नित्य वसेरा।
हो निज सम्यक्त्व उजेला।। टेक।।
जिनके नित चरणों में झुकती चैतन्य गुणों की माला।
जिनकी वाणी में द्वादशांगमय अमृतरस की धारा।।
जहां मुक्ति मार्ग अरु ज्ञानज्योति का निशदिन रहे सबेरा।
हो निज सम्यक्त्व उजेला।।
जिनकी महिमा को तीर्थंकर विद्वान शिरोमणि गाते।
भाव भक्ति से भव्य हंस, निज सार ग्रहण कर जाते।।
जिनके द्वारे पर अनेकांत रवि किरणों का हि बसेरा।
हो निज सम्यक्त्व उजेला।।
जिनकी अमृतवाणी को सुनकर भेदज्ञान जग जाता।
भव्य जीव धर शुद्ध भावना, सब विभ्रम नश जाता।।

जिन भेष दिगंबर धारण कर, जब मिले मुक्ति का डेरा।
हो निज सम्यक्त्व उजेला ॥
शांतये शांतिधारा।

दोहा

पारस प्रभु को नमन कर, आत्मसिद्धि के काज।
पुष्पांजलि अर्पण करूँ, हो शिवपुर में वास ॥
दिव्य पुष्पांजलिः।

पंचकल्याणक

(शंभु छंद)

प्राणत स्वर्गों से चयकर प्रभु, वामा माता के उर आये।
बैसाख कृष्ण द्वितीया के दिन, प्रभु गर्भ कल्याणक मन भाये ॥
पुरजन परजन जनजन सब जन, पितु अश्वसेन मंगल गाये।
हम सब मिलकर के पारस प्रभु, को अर्घ देय शिव सुख पाये ॥
ॐ ह्रीं वैसाखकृष्णाद्वितीयायां गर्भमंगलमण्डिताय श्रीपार्श्वनाथाय अर्घ्यं०. . . ।
पौष वदी एकादशि को प्रभु, जन्म कल्याणक हुआ जभी।
सुरनर किन्नर अरु विद्याधर सब मन ही मन कर हर्ष तभी ॥
अरु इन्द्र कियो अभिषेक शिखर पर, भक्ति में लवलीन जभी।
ऐसे पारस प्रभु के चरणों में, हम देवें मिल अर्घ सभी ॥
ॐ ह्रीं पौषकृष्णैकादश्यां जन्ममंगलप्राप्ताय श्रीपार्श्वनाथाय अर्घ्यं०. . . ।
पौष बदी ग्यारस को प्रभु का तप कल्याणक हुआ जभी।
लौकांतिक देवों ने आकर, प्रभु की स्तुति करी तभी ॥
सुरनर किन्नर इन्द्र देवगण भक्ती में लवलीन जभी।
ऐसे पारस प्रभु को हम नित, मिल कर पूजें चरण सभी ॥
ॐ ह्रीं पौषकृष्णैकादश्यां तपोमंगलमण्डिताय श्रीपार्श्वनाथाय अर्घ्यं०. . . ।
चैत कृष्ण शुभ कहे चतुर्दस, जब प्रभु केवलज्ञान हुआ।
तब ही सब हर्षित हो करके, ज्ञान कल्याणक शीघ्र किया ॥
प्रभु की दिव्यध्वनि सुन भविजन का विभ्रम सब दूर हुआ।
ऐसे पारस प्रभु के चरणों में हम सब मिल अर्घ दिया ॥
ॐ ह्रीं चैत्रकृष्णाचतुर्दश्यां केवलज्ञानकल्याणकप्राप्ताय श्रीपार्श्वनाथाय अर्घ्यं०. ।

सावन सुदि सप्तमि के दिन प्रभु का होवे निर्वाण जभी।
उसी समय सम्मेद शिखर पर, मोक्ष कल्याणक हुआ तभी।।
चक्रवर्ति सुर इन्द्र सभी मिल, भक्ती में लवलीन जभी।
ऐसे पारस प्रभु के चरणों में, हम देवें अर्घ सभी।।
ॐ ह्रीं श्रावणशुक्लासप्तम्यां मोक्षमंगलमण्डिताय श्रीपार्श्वनाथाय अर्घ्यं०. . .।
जाप्य—ॐ ह्रीं श्री धर्मचक्राय नमः

जयमाला

दोहा

पारसनाथ जिनेश को, बंदूं बारम्बार।
विघन हरण मंगल करण गाऊँ श्री जयमाल।।

पद्धरि छंद

श्री पारसनाथ अनाथ नाथ, जन जन के प्रति तुम हो सनाथ।
तेरे चरणों में झुके माथ, तुम भव्यजनों को लेय साथ।।
पितु विश्वसेन माता सुवाम, तुमको पाकर हो धन्य नाम।
रचना जु बनारस की महान, बहु भांति कुबेर सजाय आन।।
चहुँ गोपुर कोट बने महान, कंगूरन पै मणि चमक शान।
जब मेरु शिखर पर कियो ह्वाङ्ग, कर इन्द्र सभी मिल न्हवन पाठ।।
छम-छम छम-२ सब नृत्य कियो, झम झम झम झम झंकार कियो।
ठन ठन ठन ठन ठन ताल बजो, बहु रंगबिरंगे घण्ट सजो।।

कोई वीणा की झंकार कियो, कोई कीर्तन कर गुणगान कियो।
प्रभु आठ वर्ष में व्रत लहेय, यौवन में झट वैराग्य सेय।।
जब मात पिता व कुटुम्ब आय, झट ब्याह हेतु नगरी सजाय।
प्रभु उर विरागता शीघ्र धार, शादी से तुरत करे इन्कार।।
आगे इक घटना सुनो भ्रात, इक तपसी देखो जभी नाथ।
पंचाग्नी तप तपता अनाथ, जिसके न विवेक न दया साथ।।
जब नाग नागिनी जलत हाय, तब नाथ हृदय करुणा लहाय।
णमोकार मंत्र उसको सुनाय, मरते को मंत्र हुआ सहाय।।
जब नाग नागिनी स्वर्ग जाय, धरणेंद्र पद्मावती भयो आय।

हे बाल ब्रह्मचारी ! महान, तुम तपसी को समझाय आन॥
हिंसा में धर्म नहीं दिखाय, हिंसा से सुख न कभी लहाय।
हे तपसी! हिंसा शीघ्र त्याग, तू सत्य अहिंसा व्रत सुपाग॥
इस भांति प्रभू समझाय शीघ्र, फिर जाकर आतम लीन वीर।
निज में ही निज में हुए लीन, निज आत्मज्ञान से हुए पूर्ण॥
जब कमठ दुष्ट ने पूर्व बैर, निष्कारण वर्षा करी जोर।
वह दैत्य खूब उपसर्ग कीन, पर प्रभुवर आतम ध्यान लीन॥
धरणेंद्र पद्मावति जभी आय, उपसर्ग शीघ्र प्रभु का हटाय।
बहु फण फैलायो जभी शीघ्र, प्रभु पर उपकार कियो सुधीर॥
तुमने शत्रु पर क्षमा कीन, कर सके कमठ नहिं कुछ मलीन।
आखिर हताश हो क्षमा मांग, प्रभु के चरणों में झुके आन॥
जो पार्श्व प्रभू में लीन भक्त, लोहा से पारस बने शक्त।
तुमरी महिमा वर्णी न जाय, मैं "अभयमती" नित शिर झुकाय॥

घत्ता

श्री पार्श्व जिनेश्वर शिवपरमेश्वर जगत नरेश्वर सुखकारी।
चिन्तामणि भासुर, नमत सुरासुर, झट लहँ शिवपुर दुखहारी॥

ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा।

सोरठा

पारसनाथ जिनेश, जो पूजे भवि जीव नित।
आधि व्याधि हो दूर "अभयमती" शिव पद लहे॥
नित नव मंगल होय तुम वंदत जिनदेव जी।
लहें सुयश सब कोय विघ्न कोटि तत छिन टरें॥

इत्याशीर्वादः पुष्पांजलिं क्षिपेत्

पूजा नं०—३२

श्री महावीर स्वामी पूजन

अथ स्थापना

मुक्तक छंद

महावीर अरु वर्द्धमान अति, वीर व सन्मति वीर प्रभो।
सिद्धारथ पितु त्रिशलानंदन, के उजियारे धीर विभो॥
तुमरी महिमा है अपार, तव भक्ती में लवलीन प्रभो।
आह्वानन कर मन वच तन से, पूजूं तुमको मैं नित्य विभो॥

ॐ ह्रीं श्री महावीर जिनेंद्र ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।
ॐ ह्रीं श्री महावीर जिनेंद्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।
ॐ ह्रीं श्री महावीर जिनेंद्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं।

हरिगीतिका छंद

क्षीरोदधि समनीर निर्मल कनक झारी में भरूं।
प्रभु जन्म मृत्यु निवारने को, धार तव चरणन करूं॥
संसार खार असार लखकर, तव निकट आया विभो।
संकट हरो मेरा सभी, ले लो शरण अपनी प्रभो॥ १॥

ॐ ह्रीं श्री महावीर जिनेंद्राय जन्मजरामृत्यु विनाशनाय जलं०. . . ।

कर्पूर मिश्रित गंध केसर संग चंदन नित घसूं।
संसार ताप निवारने को, गंध प्रभु चरणन लसूं॥ संसार०॥ २॥

ॐ ह्रीं श्री महावीर जिनेंद्राय संसार ताप विनाशनाय चंदनं०. . . ।

तंदुल अखंडित शशि समुज्ज्वल, कनक थाली में सजूं।
अक्षय सुपद की प्राप्ति हेतू, पुंज अक्षय से जजूं॥ संसार०॥ ३॥

ॐ ह्रीं श्री महावीर जिनेंद्राय अक्षय पद प्राप्तये अक्षतं०. . . ।

बहु भांति पुष्प मंगाय सुरतरू के सुमन लेकर भजूं।
झट कामवाण विनाश हितु, मैं पुष्प चरणन में सजूँ॥संसार०॥ ४॥

ॐ ह्रीं श्री महावीर जिनेंद्राय कामवाण विध्वंसनाय पुष्पं०. . .।

षटरस सुव्यंजन सरस बहु पकवान से थाली भरूं।
प्रभु क्षुधा रोग विनाश हित, नैवेद्य से पूजन करूं ॥ ५ ॥ संसार० ॥

ॐ ह्रीं श्री महावीर जिनेंद्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं०. . . ।

मणि रत्न के दीपक जलाकर, दशोंदिश जगमग करूं।
मोहांधकार विनाश हितु, मैं प्रभु निकट आरति करूं ॥६ ॥संसार० ॥

ॐ ह्रीं श्री महावीर जिनेंद्राय मोहांधकार विनाशनाय दीपं०. . . ।

कर्पूर अगर दशांग चूर, सुगंध की ले धूप मैं।
आठों करम विध्वंस हित, प्रभु धूप खेऊं निकट में ॥ ७ ॥ संसार० ॥

ॐ ह्रीं श्री महावीर जिनेंद्राय अष्टकर्म दहनाय धूपं०. . . ।

श्री फल बदाम विविध सुफल ले, हेम थाली में सजूँ।
मोक्ष फल की प्राप्ति हितु, प्रभु को सरस फल से जजूं ॥ ८ ॥
॥ संसार० ॥

ॐ ह्रीं श्री महावीर जिनेंद्राय मोक्षफल प्राप्तये फलं०. . . ।

जल गंध अक्षत पुष्प चरु अरु दीप धूप व फल सजूं।
निज पद अनर्घ्य सुप्राप्ति हित, वसु अर्घ से प्रभु को जजूं ॥ ९ ॥
॥ संसार० ॥

ॐ ह्रीं श्री महावीर जिनेंद्राय अनर्घ्यपद प्राप्तये अर्घ्यं०. . . ।

शंभु छंद

छयासठ दिन तक वीर प्रभू की दिव्य ध्वनि जब नहीं खिरी।
उपादान अरु निमित्त के जुड़ते ही ध्वनि मंगलरूप करी॥
इस समोशरण में आ करके झट वैर भाव को तज जाना।
सम्यक्त्व प्राप्त करना चाहो तो प्रभु भक्ति में लग जाना॥
शांतये शांतिधारा।

निर्वाण कल्याणक प्रभु का जब गणधर को केवलज्ञान हुआ।
इस ही प्रकार गुरु परंपरा से श्रुत का नित्य प्रकाश हुआ॥
इस सौम्यमूर्ति के दर्शन करके अतिशय पुण्य कमा जाना।
ले श्रद्धा सुमन प्रभु की भक्ती कर शिवपुर शीघ्र चले जाना॥
दिव्य पुष्पांजलिः ।

पंचकल्याणक

सखी (चाल छन्द)

आषाढ़ सुदी दिन षष्ठी, त्रिशला उर गर्भ प्रभू जी।
हो माह पन्द्रह रत्न वृष्टी, मैं पूजूं उर धर भक्ती॥
ॐ ह्रीं आषाढ शुक्ला षष्ठ्यां गर्भमंगल मंडिताय श्री महावीर जिनेंद्राय अर्घ्यं०.।
सित चैत सु तेरस आयो, कुण्डलपुर जन्म मनायो।
इन्द्र मेरु पे न्हवन करायो, पूजूं मैं मन हर्षायो॥
ॐ ह्रीं चैत्र शुक्लात्रयोदश्यां जन्ममंगल मंडिताय श्री महावीर जिनेंद्राय अर्घ्यं०..।
मगसिर बदि दसमी चीन्हो, ता दिन प्रभु संयम लीनो।
लौकांतिक जिन गुण गायो, मैं पूजूं उर हर्षायो॥
ॐ ह्रीं मार्गशीर्षकृष्णादशम्यां तपोमंगल मंडिताय श्री महावीर जिनेंद्राय अर्घ्यं०..।
वैसाख शुक्ल दसमी को, प्रभु घात चतुक क्षय कीयो।
प्रभु केवलज्ञान मनायो, हम पूजूं शीश नवायो॥
ॐ ह्रीं वैशाख शुक्लादशम्यां ज्ञानमंगल मंडिताय श्री महावीर जिनेंद्राय अर्घ्यं०.।
कार्तिक कृष्णामावस्या, पावापुर तैं शिव पहुँचा।
सब मोक्ष कल्याण मनायो, पूजूं मैं उर हर्षायो॥
ॐ ह्रीं कार्तिककृष्णाअमावस्यायां मोक्षमंगलमंडिताय श्रीमहावीर जिनेंद्राय अर्घ्यं०।
जाप्य—ॐ ह्रीं श्री धर्मचक्राय नमः

जयमाला

दोहा—वीर प्रभू को नमन कर, ध्यान धरूं सुखकार।
करूं नित्य गुण चिंतवन, गाऊं तव जयमाल॥

चाल—छोड़ बाबुल का घर०........

भव्य उषा खिले, नरनारि जगे, पशुबंधन खुले, भील जा रहा॥ टेक
कोई धर्मी करें पूजा पाठ रे, कोई व्यसनी करें पापाचार रे।
यह जग है बुरा, सब स्वार्थ नरा, भील जा रहा॥ भव्य० ॥ १ ॥
भील पहुँचा है जंगल के बीच में, एक ऋषिवर जी देखा समीप में।
तीर धनुवा लिया, गुरु मारन चला भील जा रहा॥ भव्य० ॥ २ ॥

भिल्लनी शीघ्र रोका है जाय के, ये तपसी हैं गुरुवर महान रे।
इन्हें मारो नहीं, हाथ जोड़ो सही, भील जा रहा।
भव्य उषा खिले, नरनारि जगे, पशुबंधन खुले, भील जा रहा॥ ३॥
भिल्लनी ने किया उपकार रे, दोनों स्वर्ग लहें व्रत धार के।
भिल्ल मरीचि हुआ, घोर पाखंड रचा, भील जा रहा॥ भव्य०॥ ४॥
तीन सौ तिरेसठ मत धार के भव भव में रुला नंतबार रे।
फिर नरकों गया, क्रूर सिंह हुआ, भील जा रहा॥ भव्य०॥ ५॥
तब चारण गुरु समझाय रे, अरे सिंह करे क्यों शिकार रे।
तू भव भव भ्रमा मिथ्यातम को धरा, भील जा रहा॥ भव्य०॥ ६॥
तू सिंह अणुव्रत धार रे, दसवें भव में बनें महावीर रे।
सिंह गद्‌गद्‌ हुआ, अणुव्रत को लहा, भील जा रहा॥ भव्य०॥ ७॥
भील क्रम से मुक्तिपद धार रे, दसवें भव में बना महावीर रे।
गुरु पारस लहा, लोह सोना बना, भील जा रहा॥ भव्य०॥ ८॥
जब पशु भी तिरे व्रत पाल के, नर क्यों न तिरे संयम धार के।
देखो सिंहपना, कर्मों से जो लड़ा भील जा रहा॥ भव्य०॥ ९॥
"अभयमति" कहती हैं पुकार के हे भविजन तू संयम धार रे।
जन्म सफल भया शिव सुख को लहा, भील जा रहा॥भव्य०॥१०।

घत्ता छंद

जय त्रिशला नन्दन, सब दुख भंजन, आत्म निरंजन सुखकारी।
भव ताप निकंदन, जगदानन्दन, शत शत वंदन दुखहारी॥
ॐ ह्रीं श्री महावीर जिनेंद्राय पूर्णार्घ्यं०. . . ।

शांतये शांतिधारा।

शैर छंद

जय वीर तुम महान हो ऋषी पराक्रमी।
हाथी को वश किया जभी है वीर नाम जी॥
प्रभु सर्प से क्रीड़ा किया, आश्चर्य जब भयो।
महावीर नाम शीघ्र ही जब सर्प ने लियो॥ १॥
शंका हुई चारण ऋषी को तत्व में जभी।
पहुंचो जभी ऋषी कि शंका दूर हो तभी॥
जब ही धरा है नाम "सन्मति" जी महामुनी।
कर तत्वचिंतवन जभी ऋषि सुयोधनी॥ २॥

कर्मों से लड़ने चल दिये बन के सुमध्य में।
अतिवीर नाम जब दिया प्रभु के समर्थ में॥
शुभ पूर्णचंद्र सम गुणों की बृद्धि को धरें।
जब "बर्द्धमान" नाम प्रभु चरणों में नित पड़ें॥ ३॥

इत्याशीर्वादः पुष्पांजलिं क्षिपेत्

बड़ी जयमाला

मुक्तक छंद

जय जय धर्मचक्र के नायक चौबिस तीर्थंकर स्वामी।
जय जय समोशरण में शोभित अनंत चतुष्टय श्री भामी॥
जय समोशरण के चार कोट पंच वेदि आठ भूमी सोहें।
सब स्वर्ण रत्न मय रंग बिरंगी सुंदर जन जन मन मोहें॥ १॥
जय समोशरण के प्रथम पीठ पर धर्मचक्र चउ दिश सोहें।
जय द्वितिय पीठ पर आठ ध्वजायें तृतीय पे गंधकुटी मोहें॥
इस गंधकुटी के कमलासन पर जिनवर अधर विराज रहें।
चहुं ओर दिखे है मुख जिनका ऐसा प्रभु अतिशय खूब कहें॥ २॥
अरिहंत सिद्ध आचार्य श्रेष्ठ अरु उपाध्याय ऋषि संत कहें।
चौबिस तीर्थंकर जिनवाणी श्रुत द्वादशांग निर्दोष लहें॥
अरु दस धर्म दयामय श्री षोडश कारण भावन भाऊं।
रत्नत्रय से सहित प्रभू का ध्यान धरूं शिव पद पाऊँ॥ ३॥
जिन प्रभु का आगम आतम से परमात्म ज्योति चमकाता है।
निज के द्वारा निज को ही भजकर भेदज्ञान प्रगटाता है॥
जब स्वपर भेद विज्ञान हुआ, तब आत्म ज्ञान जग जाता है।
खुद "जिओ और जीने दो" सबको यह संदेश सुनाता है॥ ४॥
ऐसा जिनवर का आगम ही भव्यों के मन भाया है।
जो जिन आगम में रमे सदा वह जीवन सफल बनाया है॥

जिसमें सत्य अहिंसा निस्पृह, अनेकांत बतलाया है।
आतम से परमातम बनने का भी पाठ सिखाया है॥ ५ ॥
जहां विकारी भाव और निज पक्षपात का नाम नहीं।
वहां सदा अविकार रूप, निज चेतन गुण का काम सही॥
जहां विनश्वर इंद्रिय सुख, अरु विषय भोग का नाम नहीं।
वहां अतींद्रिय आत्मिक सुख और परमातम परकाश सही॥ ६ ॥
जहाँ सुनिश्चय मूल विवेचन, अरु व्यवहार हि गौण रहे।
वहां सदा आध्यात्म दृष्टि से, सब पदार्थ बेजोड़ लहें॥
मूल कथन चरणानुयोग जब सब अनुयोग ही गौण दिखें।
प्रभु का यह निश्चय रत्नत्रय, इक चेतन जिसके रूप लसे॥ ७ ॥
यह रत्नत्रय ही मुक्ति मार्ग अरु संजीवन कहलाता है।
इस रत्नत्रय को नमन करूं जो भव्य जनों को भाता है॥
व्यवहार रत्नत्रय सम्यग्दर्शन ज्ञान चरित दर्शाता है।
यह रत्नत्रय ही भव्यजनों को मोक्षपुरी पहुँचाता है॥ ८ ॥
उर में श्रद्धा शीघ्र प्रगट कर भेदज्ञान प्रगटाता है॥
अशुभ क्रियाओं को तजकर के, संयम को अपनाता है॥
श्रद्धायुत निज ज्ञान चरित सच्चेपन को अपनाता है।
बिन सम्यग्दर्शन के ज्ञान चरित मिथ्या कहलाता है॥ ९ ॥
गुण सम्यक्त्व विभूषित तीन रतन जग में हैं सुखकारी।
है अमूल्य कीमत जिसकी, जो लहें उन्हें है बलिहारी॥
ज्यों रोगी के श्रद्धा व ज्ञान आचरण बिना नहि रोग नशे।
त्यों योगी के समकित ज्ञान चरित्र बिना नहि कर्म हटे॥१०॥
जितने भी हैं महापुरुष, सब मुक्ति गये अरु जावेंगे।
सो सब रत्नत्रय की महिमा गाते हैं अरु गावेंगे॥
अत: सभी मिल धर्म प्रेमि रत्नत्रय की नित जय बोलें।
रत्नत्रिवेणी को निज में धारण कर अन्तरपट खोलें॥११॥
मुक्ति का संबल रत्नत्रय रत्नत्रय का प्रभु संबल हैं।
व्यवहार हि निश्चय का संबल, अरु तप का संयम संबल है॥
मुनियों का संबल ध्यान सरस श्रावक संबल स्वाध्याय महा।
बिज्ञों का संबल ज्ञान अमृत, अज्ञानी संबल विषय कहा॥१२॥

विषयों की आशा को तज के, आरंभ परिग्रह पूर्ण तजा।
अरु ज्ञान ध्यान में रम करके, भवि संत तपस्वी पूर्ण सजा॥
कंचन भी तप कर स्वर्ण बना फिर क्यों नहि नर तप करते हैं।
तप के द्वारा तप करके ही, प्रभु सहजानंदी बनते हैं॥ १३॥
सोलह तावों के द्वारा ही, ज्यों असली स्वर्ण चमकता है।
तपरूपी अग्नी से ही त्यों, भवि आत्म विशुद्धी धरता है॥
चूना गारा ईटें आदिक, तप कर ही महल चुनाते हैं।
तप रूपी ध्यान के द्वारा ही त्यों संत परमपद पाते हैं॥ १४॥
अनशन ऊनोदर तप करके, अरु वृत्तिपरिसंख्यान लिया।
रस त्याग विविक्त सुशय्यासन, अरु कायक्लेश भी नित्य किया॥
प्रायश्चित वैयावृत्य विनय, स्वाध्याय ध्यानव्युत्सर्ग किया।
इन बारह तप में तप करके, प्रभु निज को निज में धार लिया।१५।
उपसर्ग परीषह को सहकर, निज आत्मिक बल को बढ़ा लिया।
चारित्र रूप रथ पर चढ़कर, फिर कर्म शत्रु से युद्ध किया॥
विज्ञान रूप छैनी से जड़ को आत्मा से जब जुदा किया।
फिर निर्विकल्प तप में तपकर प्रभु शिवपुर शीघ्र प्रस्थान किया।१६।
तपरूप चरित्र की नौका पर चढ़ श्रावक मुनि तिर जाते हैं।
कर्त्तव्यशील आतम जिनका भवि जीवन सफल बनाते हैं॥
आचरण शुद्ध के बिना कभी, नहि प्राणी का उद्धार हुआ।
पंचेंद्रिय विषयों में पड़के, नहि भक्ष्य अभक्ष्य विचार किया॥ १७॥
मन वचन काय यदि शुद्ध नहीं, क्या होता पुण्य कमाने से।
नहि छान के पानी पीवे यदि, क्या होता जीव बचाने से॥
यदि सदाचार अपना न सके, क्या होता ध्यान लगाने से।
प्रभु की भक्ति यदि नही करे, क्या होता नाम कमाने से॥ १८॥
यदि श्रावक धर्म नहीं पालें, क्या होता नरतन पाने से।
यदि मुनी धर्म को नहि धारें, क्या होता मूड़ मुड़ाने से॥
यदि रत्न हि पत्थर समझ लिया क्या होता काग उड़ाने से।
यदि तत्व चिंतवन नहीं किया, क्या होता भेष बनाने से॥ १९॥
यदि यत्नाचार निशल्य नहीं, क्या होता व्रती कहाने से।
नहि रागद्वेश तज दया करें, क्या होता जैन कहाने से॥

यदि खेवटिया नहि है तो फिर, क्या होता नाव चलाने से।
लोहा से पारस बने न यदि, क्या होता संगति पाने से॥ २०॥
बन में अग्नी लख के दोनों, अंधे लंगड़े जल जाते हैं।
अंधे के कंधे पर लंगड़ा बैठे तो वे बच जाते हैं॥
बस इसी तरह सम्यक्त्व ज्ञान युत चारित को जब धार लिया।
तब निज के हितु निज के द्वारा निज में निज का उद्धार किया।२१।
जय जय तीर्थंकर धर्म चक्र, जय जय चौबिस जिन समवशरण।
जय जय रत्नत्रय धर्म श्रेष्ठ जय जय चेतन गुण सुःख करन॥
जय दसलक्षण धर्म जिनागम सिद्धों के गुण सब सिद्धि करें।
जय पंच परमेष्ठी भजूं अरिहंत के इक सौ अठगुण पाप हरें॥२२॥
हे प्रभु जब तक मुक्ति मिले नहि, धर्म चक्र का पाठ करूँ।
रत्नत्रय दसधर्म व चेतन सिद्धगुणों में नित्य रमूं॥
पंचपरमेष्ठी अरु चउबीस तीर्थंकर का नित ध्यान धरूं।
जिन आगम माँ सरस्वती को भजके कल्मष दूर करूं॥ २३॥
हे प्रभु मैने अबतक चतुर्गती के जो दुख सहन किया।
घटी यंत्र सब पंच परावर्तन करके बहु भ्रमण किया॥
मैं धन्य हुआ तव भक्ति मिली सम्यक्त्व रत्न को प्राप्त किया।
मुझ को अमूल्य संपत्ति मिली प्रभु तेरा ही मैं शरण लिया॥ २४॥

घत्ता

जय जय सब जिनवर, अतिशय सुखकर, धर्मचक्रधर विश्वपती।
मैं पूजूं ध्याऊं, शीश नमाऊं, बलि बलि जाऊं "अभयमती"॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरसमोशरणस्थितप्रथमपीठोपरिशोभितषण्णवति धर्मचक्रेभ्यः जयमाला पूर्णार्घ्यं०... ।

शांतये शांतिधारा, दिव्य पुष्पांजलिः ।

गीता छन्द

जो भव्य श्रद्धा भक्ति से जिन धर्मचक्र को पूजते।
वे ऋद्धि सिद्धि समृद्धि लहं देवेंद्र सुख में झूमते॥
फिर आत्मनिधि को प्राप्त कर जब सहज आत्मिक सुख जगे।
शिव महल में आवास कर निज आत्मज्योती जगमगे॥

॥ इत्याशीर्वादः ॥

धर्मचक्र विधान प्रशस्ति

दोहा

चौबीसों जिनदेव को नमन करूं शतवार।
वीर प्रभू शासन अमल, बंदूं बारंबार॥ १॥
इस शासन में मूल संघ कुंदकुंद आचार्य।
गच्छ भारती बलात्कार गण प्रसिद्ध आम्नाय॥ २॥
कुन्दकुन्द रयणसारकृति, मैं भी रचो पद सार।
जिसमें रस स्वादन करूं, तिरूं सकल संसार॥ ३॥
अमृतकलश पुरुषार्थ सिद्धि, अमृतचंद्र कृति सार।
काव्य पद्य मैने रचा, नमूं सदा सुखकार॥ ४॥
श्री योगीश सुदेवकृति, रचो परमात्म प्रकाश।
अभयमती वंदन करूं, रचो सरसपद खास॥ ५॥
आत्मानुशासन ग्रंथ को रचा गुणभद्र सूरि।
मनवचतन से नमूं मैं, रचा पद्य रस पूरि॥ ६॥
मानतुंग ऋषि, कृति, रचो भक्तामर पद स्तोत्र।
अकलंकदेव कृति मैं रचो, नमूं अकलंक स्तोत्र॥ ७॥
अरु आशाधर कृति रचो मृत्युंजय का पाठ।
अमितगतिगुरु कृति कियो मैं सामायिक पाठ॥ ८॥
स्वरूप संबोधन पद रचो मूलकृति अकलंकदेव।
और बहुत रचना कियो, मैं नमूं भक्ति फल मेव॥ ९॥
इसी आम्नाय में शांतिसिंधु, घोरोपसर्गविजीत।
अरु वीर सिंधु शिवसिंधु नमूं, धरूं आत्म से प्रीत॥ १०॥
शांतिसिंधु के तृतिय पट्ट, धर्मसिंधु ऋषिराज।
भक्ति सहित गुरु को नमूं, धर्म वृद्धि के काज॥ ११॥

गणिनी आर्यिका ज्ञानमती जिन्हें झुकाऊँ शीश।
अरु सब गुरु को नमूं सदा, जिससे हो बुध ईश॥ १२॥
बुंदेलखंड यात्रा निमित्त, छोड़ा गुरु का संघ।
दर्शनीय अरु पूज्यनीय मूक्ति दिखे आनंद॥ १३॥
सिद्ध क्षेत्र के दर्श कर, सिद्ध हुये सब कार्य।
अतिशय क्षेत्र के दर्श कर अतिशय हो मम कार्य॥ १४॥
बुंदेलखंड में मैं कियो रचना काव्य महान।
गुरुकुल विद्यलय पुरुष, महिला शिविर लगाय॥ १५॥
धार्मिक संत जहां बसे, कर प्रभावना ह्वाङ्ग।
इंद्रध्वज अरु सिद्धचक्र आदि करें बहु पाठ॥ १६॥
इस ही बुंदेल खंड में मुख्य क्षेत्र कहलाय।
सिद्ध क्षेत्र सोनागिरि दर्शन कर सुखपाय॥ १७॥
क्रम क्रम से फिर गमन कर हस्तिनापुर में आन।
जंबुद्वीप में मैं रचो, धर्मचक्र विधान॥ १८॥
सन् उन्नीसो बानवे मगसिर सुदि सप्तम दीन।
"अभयमती" मैं आर्यिका रचना पूरण कीन॥ १९॥
पारस प्रभु माहात्म्य से रचना कीनी शुद्ध।
भूल चूक यदि हो कहीं, शोध पढ़े प्रतिबुद्ध॥ २०॥
रचो आदर्श पूजन सभी पसंद कियो विद्वान।
जो भी इसका पाठ कर, पहुंचे शिवपुर थान॥ २१॥
जब तक मुक्ति नहीं मिले, तब तक हो प्रभु ध्यान।
ज्ञान ज्योति उर में जगे "अभयमती" कर भान॥ २२॥
ठाट बाट से जो करे धर्म चक्र का पाठ।
लहे मुक्ति साम्राज्य वे मिटे दुःख संताप॥ २३॥
यावत रवि शशि मेदिनी, देव धर्म गुरु वास।
धर्मचक्र का पाठ भी, तावत करे प्रकाश॥ २४॥

सरस्वती पूजा

श्री जिनवाणी जी के सुमरन से मिटता मिथ्यात्व अंधेरा।
हो निज सम्यक्त्व उजेला॥
हो जैन जागरण ज्ञान शिरोमणि की है पावन बेला।
हो जिन सम्यक्त्व उजेला॥ टेक॥
जिस परम शास्त्र स्वाध्याय से ही भव का बंधन कट जाता॥
जिसके पढ़ने से निर्मल भेदविज्ञान दीप जग जाता।
जहाँ सत्य अहिंसा अनेकांत अरु मुक्तिमार्ग का डेरा॥ हो० ॥ १ ॥
जिनकी महिमा को द्वादशांग जिनआगम तत्व जगाते।
निज द्रव्य सुश्रुत वाणी से निज में भाव सुश्रुत को ध्याते॥
जिनके द्वारे पर नित्य निरंजन का है नित्य बसेरा॥ हो० ॥ २ ॥
जिनकी वाणी से सहज तृप्त निज सहज ज्ञान को पाता।
निजके स्वभाव में रमकर ही पर भाव उपाधि हटाता॥
है मोक्ष महल की श्रेणी में मिटता कर्मों का फेरा॥ हो० ॥ ३ ॥

दोहा

सरस्वती जिन भारती, जिनवाणी सुख खान।
नमूं शारदा मात को, जिससे हो कल्याण॥

ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भव सरस्वती देव्यै ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।
ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भव सरस्वती देव्यै ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।
ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भव सरस्वती देव्यै ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्
सन्निधीकरणं।

त्रिभंगी छंद

जय दुःख निवारी श्री जिनवाणी, ढोक हमारी सुखकारी।
भरि कंचन झारी पाप विडारी, तृषा निवारी धार करी॥
सो जिनवर वाणी गणधर भानी, सब दुख हानी ज्ञानमई।
वर मोक्षनिशानी शिवरजधानी, स्यादवादिनी पूज्यमई॥
ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भव सरस्वती देव्यै जन्मजरामृत्यु विनाशनाय जलं० ॥ १ ॥
शुभ मलय सुचन्दन लाय भविकजन, अलिकर गुंजन मोदभरी।
दिव्यध्वनि बन्दो, कर आनन्दो, पापनिकन्दो सुक्खकरी॥
सो जिनवर वाणी० ॥ २ ॥
ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भव सरस्वती देव्यै संसार ताप विनाशनाय चंदनं. . . ।

शुभ तंदुल मंडित परम अखंडित गंध सुसज्जित चंदसमं।
हम पुंज चढाई भक्ति बढ़ाई यश गुण गाई दुःखहरं॥
सो जिनवर वाणी० ॥ ३ ॥

ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भव सरस्वती देव्यै अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं०...।

बहु सुरतरु रंगी पुष्प बिरंगी गंध सुगंधी ले आयो।
झट कर्म नशायो गुण प्रगटायो सुख दर्शायो गुण गायो॥
सो जिनवर वाणी० ॥ ४ ॥

ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भव सरस्वती देव्यै कामवाणविध्वंसनाय पुष्पं०... ।

बहु षट् रस व्यंजन मोदक क्रंदन जन जन रंजन सुखकारी।
बहु क्षुधानिवारी आनन्दकारी नेवज प्यारी दुखहारी॥
सो जिनवर वाणी० ॥ ५ ॥

ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भव सरस्वती देव्यै क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं०...।

कर दीपक तमहर ज्योति सुमति कर द्योतं प्रगट कर तिमिर नशे।
निजपर परकाशक जिनश्रुतभासक विभ्रमनाशक सुखप्रगटे॥
सो जिनवर वाणी० ॥ ६ ॥

ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भव सरस्वती देव्यै मोहांधकार विनाशनाय दीपं०...।

वर धूप दशांगी गंध सुहानी अलिगुंजानी खेवत है।
बहु कर्म जलायो गुण प्रगटायो जिन श्रुत भायो सेवत हैं॥
सो जिनवर वाणी० ॥ ७ ॥

ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भव सरस्वती देव्यै अष्टकर्मदहनाय धूपं०...।

फल बहुविध प्यारे दाख छुहारे श्रीफल न्यारे थाल भरे।
अति सुख दर्शावे पुण्य कमावे तव गुण गावे पूज्य वरे॥
सो जिनवर वाणी० ॥ ८ ॥

ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भव सरस्वती देव्यै मोक्षफलप्राप्तये फलं०... ।

जन जन सुखकारण नयन सुहावन स्वच्छ सुपावन वस्त्र लसे।
शुभ गंध सुप्यारा वसननिराला तव श्रुत धारा गुणविलसे॥
सो जिनवर वाणी० ॥ ९ ॥

ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भव सरस्वती देव्यै वस्त्रं०... ।

जल चन्दन अक्षत पुष्प सु नेवज दीप धूप बहु फल लावे।
तव पूजनध्यावत यश गुण गावत "अभयमती" शिव सुख पावे॥
सो जिनवर वाणी० ॥

ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भव सरस्वती देव्यै अनर्घ्य पद प्राप्तये अर्घ्यं०... ।

बेसरी छंद

आप्त कथित जिनश्रुत प्रतिबोधी, युक्ति प्रमाण से है अविरोधी।
तत्वरूप उपदेशक भारी, ऐसे जिनागम को शिरधारी॥

शांतये शांतिधारा।

सत्य अहिंसा का शिव साधक, स्याद्वाद वाणी परकाशक।
मिथ्यात्व खंडन अतिशयशाली, ऐसा शास्त्र नमूं दुखहारी॥

दिव्य पुष्पांजलिः।

जयमाला

दोहा

ज्ञान ज्योति उर में जगे, आतम तत्वविचार।
सरस्वती वाणी अमल गाऊं गुण जयमाल॥

तर्ज—करती हूं तुम्हारा वन्दन...

वन्दन करूं श्रुत देवी का, आशीष करो जी।
आंचल में अपने शब्दों से उद्धार करो जी॥ टेक॥

श्री वीर हिमालय से निकली, गौतम मुख कुंड ढरी।
मोहरूपी पर्वत भेदन कर, जग की जड़ता हरी॥
मिथ्यात्व दूर करने को, सम्यक्त्व करो जी॥ १॥ आंचल०॥
ज्ञान पयोदधि में रमकर, बहुभंग तरंग उठी।
शुचि शारद गंग नदी ऐसी, जग का मल दूर करी॥
विज्ञान प्राप्त करने को अज्ञान हरो जी॥ २॥ आँचल०॥
तुम भारती वागीश्वरी हो ब्राह्मणी वरदा।
ब्रह्माणी हंस गामनी विदुषी जगन्माता॥
श्री सरस्वती जी माता कल्याण करो जी॥३॥ आँचल०॥
दुर्बुद्धि हैं जो जीव वो नर रत्न खो दिया।
जिनवाणी को पाकर भी अज्ञानी बना रहा॥
हे दया की मूरतमाता "वरदान" करो जी॥ ४॥ आँचल०॥
पारस को छोड़ पत्थर को क्यों बावले पकड़े।
ज्ञानज्योति को तजके मूरख व्यर्थ में अकड़े॥
निज में ही गुण के द्वारा श्रृंगार करो जी॥ ५॥ आँचल०॥

क्यों सदाचार को तजके मानव पापों में अटके।
जिन भेष दिगंबर धर कर ही भगवान जिन बनते ॥
कहं "अभयमती" गुण गाकर, शिवपुर में बसो जी ॥ ६ ॥ आँचल० ॥
दुखहारिणी सुखकारिणी अविरोधिनी प्यारी।
निःस्वार्थनी कल हंसनी स्याद्वादनी वाणी।
हे "भव्य जनों" की त्राता "अभय" दान करो जी ॥ ७ ॥ आँचल० ॥

सोरठा

ओंकार ध्वनि सार स्याद्वाद वाणी अमल।
बंदूं बारंबार ज्ञान ज्योति विभ्रम नशे ॥ ८ ॥

ॐ ह्रीं श्री जिन मुखोद्भव सरस्वती देव्यै जयमाला पूर्णार्घ्यं०.... ।
हे जिनवाणी माता तुमको लाखों प्रणाम ३।
चौबीसों तीर्थंकर बंदूं तीन काल के गुरुवर बंदूं ॥
नमूँ शारदा माता तुमको लाखों प्रणाम ३ ॥ १ ॥
जन्म जरा भय रोग निवारण संकट मोचन शिवसुख कारण।
तुम हो मुक्ति प्रदाता तुमको लाखों प्रणाम ३ ॥ २ ॥
तीर्थंकर सर्वांगखिरी है गणधर द्वारा सदा झिली है।
विदुषी भारतमाता तुमको लाखों प्रणाम ३ ॥ ३ ॥
झिलमिल झिलमिल ज्ञानज्योति है गुणरूपी शृंगार कोटि है।
द्वादशांग विख्याता तुमको लाखों प्रणाम ३ ॥ ४ ॥
सदा तुम्हारी अमृत वाणी भव्यजनों को अतिशय प्यारी।
शांतरूप बलिहारी तुमको लाखों प्रणाम ३ ॥ ५ ॥
जो भी मुक्ति गये अरु जायें, सरस्वती को नित अपनावें।
तेरा ही यश गाते तुमको लाखों प्रणाम ३ ॥ ६ ॥
धर्म तीर्थ की अम्बेवाणी शिवसुख दानी विमल प्रमाणी।
हे भव्यजनों की त्राता तुमको लाखों प्रणाम ३ ॥ ७ ॥

दोहा

जा वाणी के ज्ञान में सूझे लोकालोक।
जिनवाणी जयवंत हो अभयमती दें ढोक ॥
यावत जग में है सदा देव धर्म गुरु वास।
द्वादशांग वाणी अमल तावत करे प्रकाश ॥

"इत्याशीर्वादः पुष्पांजलिं क्षिपेत्"

धर्मचक्र विधान आरती

जिनवर का दरबार है नमन करें शतबार है।
धर्मचक्र की देखो कैसी महिमा अपरंपार है॥ टेक॥
मंगल आरति लेकर प्रभु जी आया तेरे द्वार जी।
धर्मचक्र का पाठ करे जो होगा बेड़ा पार जी॥
यही जगत में सार है, झूठा सब संसार है॥ धर्म०॥ १॥
चौबीसों जिन पंच परम गुरु, रत्नत्रय उर धार जी।
अवधि ऋद्धि धारक ऋषि धर्म को भक्ति सहित शिर धार जी॥
यही गले का हार है, मानव का शृंगार है॥ धर्म०॥ २॥
पाठ तो हमने बहुत से देखे, भारत देश विदेश जी।
धर्मचक्र सा पाठ न देखा, अतिशय दिखे विशेष जी॥
मूल मंत्र आधार है, बीज यंत्र साकार है॥ धर्म०॥ ३॥
यह तन तेरा इक दिन चेतन मिट्टी में मिल जायेगा।
"अभयमती" कहं जप तप कर ले नहि पीछे पछतायेगा॥
प्रभु की भक्ति अपार है, पावें मुक्ति पुकार है॥ धर्म०॥ ४॥

धर्मचक्र विधान भजन

श्री धर्मचक्र का पाठ करें, नित ठाठ भव्य जन प्राणी।
फल पावें शिव रजधानी॥ टेक॥
समोशरण सभी का मन मोहें, चारो दिश धर्मचक्र सोहे॥
दसलक्षण धर्म व रत्नत्रय सुखदानी॥ फल०॥ १॥
श्री पंच परम गुरु खूब लसे, दर्शन कर सबके पाप कटें।
जो ध्यान धरे नशे कर्मचक्र दुखदानी॥ फल०॥ २॥
श्री गंधकुटी में प्रभु सोहें, जन जन के कल्मष मन धोवें॥
जो भक्ति से प्रभु को वंदन कर अघहानी॥ फल०॥ ३॥
चौबीस तीर्थंकर शोभ रहें, भव्यों के मन को मोह रहें।
श्रद्धा के सुमन को लेके भजें मनमानी॥ फल०॥ ४॥
जो धर्मचक्र का पाठ करे, वे मन वांछित फल प्राप्त करें।
कहं "अभयमती" मुक्ति की यही निशानी॥ फल०॥ ५॥